11

सुविख्यात सांसद
मोनोग्राफ सीरीज

मदभूषी अनन्तशयनम् अय्यंगर

लोक सभा सचिवालय
नई दिल्ली
1991

सुविख्यात सांसद
मोनोग्राफ सीरीज़

मदभूषी अनन्तशयनम् अय्यंगर

लोक सभा सचिवालय
नई दिल्ली
1991

LS—1

एल०एस०एस० (पी०आर०आई०एस०—पोलिटिकल) /ई०पी०एम०/11

© प्रतिलिप्यधिकार लोक सभा सचिवालय, 1991

फरवरी, 1991

मूल्यः 30 रुपये

लोक सभा के प्रक्रिया तथा कार्य संचालन नियम (सातवां संस्करण) के नियम 382 के अन्तर्गत प्रकाशित और प्रबंधक, भारत सरकार मुद्रणालय, फोटोलिथो स्कंध, मिंटो रोड, नई दिल्ली द्वारा मुद्रित।

प्राक्कथन

सुविख्यात सांसदों द्वारा राष्ट्रीय संसदीय जीवन और राज्य व्यवस्था में किये गये योगदान को स्मरण करने और उन्हें लिपिबद्ध करने के उद्देश्य से भारतीय संसदीय ग्रुप उनकी जन्म शताब्दियां मनाता आ रहा है। "सुविख्यात सांसद मोनोग्राफ सीरीज़" के नाम से एक सीरीज़ मार्च, 1990 में डा० राम मनोहर लोहिया संबंधी मोनोग्राफ से प्रारम्भ की गई थी। इसके पश्चात् नौ अन्य विशिष्ट सांसदों की जन्म शताब्दियों के उपलक्ष्य में इसी तरह के मोनोग्राफ प्रकाशित किये गए।

यह मोनोग्राफ इसी श्रृखंला का ग्यारहवां अंक है, जिसमें लोक सभा अध्यक्ष स्वर्गीय श्री मदभूषी अनन्तशयनम् अय्यंगर द्वारा की गई सामाजिक सेवाओं को स्मरण करने का एक प्रयासमात्र है। उन्होंने पहली और दूसरी लोक सभा के निष्पक्ष और सम्मानित पीठासीन अधिकारी के रूप में प्रतिष्ठा ही प्राप्त नहीं की थी, अपितु एक विख्यात वकील, ओजस्वी वक्ता और भारत के द्रुत औद्योगीकरण और नियोजित विकास के प्रबल समर्थक के रूप में ख्याति प्राप्त की है।

इस खंड के दो भाग हैं। भाग-एक में श्री मदभूषी अनन्तशयनम् अय्यंगर का संक्षिप्त जीवन-वृत्त है और भाग-दो में श्री अय्यंगर द्वारा सेंट्रल लेजिस्लेटिव एसेम्बली, भारत की संविधान सभा, अन्तरिम संसद और पहली लोक सभा में दिए गए महत्वपूर्ण भाषणों के कतिपय उद्धरण हैं।

जन्म शताब्दी के अवसर पर हम श्री अय्यंगर की स्मृति में उन्हें सादर श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं और आशा करते हैं कि इस मोनोग्राफ को रुचिपूर्वक पढ़ा जायेगा और यह उपयोगी सिद्ध होगा।

रवि राय
अध्यक्ष
लोक सभा और
प्रेसीडेंट, भारतीय संसदीय ग्रुप

नई दिल्ली;
फरवरी, 1991

विषय-सूची

प्राक्कथन

भाग-एक

1

श्री मदभूषी अनन्तशयनम् अय्यंगर :
जीवन वृत्त

(1)

भाग-दो

आपके विचार

श्री अय्यंगर द्वारा सेंट्रल लेजिस्लेटिव एसेम्बली, संविधान सभा (विधायी), अन्तरिम संसद और प्रथम लोक सभा में दिये गये भाषणों से उद्धरण।

2

आर्थिक और वित्तीय मामले
व्यापार मुनाफे पर कर
(25)
रुपये का अवमूल्यन
(34)
कर अपवंचन और कालाबाजारी
(40)
वित्त आयोग की रचना
(46)

3

औद्योगिक विकास
(52)
औद्योगिक वित्त निगम
(69)
सड़क परिवहन निगम
(77)

4

श्रम और रोजगार

मजदूर संघ

(85)

5

विधिक, संवैधानिक और राजनैतिक मामले

निवारक निरोध

(91)

हिन्दू विधियों को संहिताबद्ध करना

(106)

विवाह तथा विवाह-विच्छेद

(121)

भाषाई आधार पर राज्यों का पुनर्गठन

(132)

6

व्यापार और वाणिज्य

विदेश व्यापार

(138)

भाग—एक

मदभूषी अनन्तशयनम् अय्यंगरः
जीवन-वृत्त

1

मदभूषी अनन्तशयनम् अय्यंगर : जीवन-वृत्त

एक सुविख्यात विद्वान, एक बहु आयामी व्यक्तित्व, नाना प्रकार के क्रियाकलापों के लिये प्रख्यात, एक अनुभवी वकील और एक कुशल सांसद श्री मदभूषी अनन्तशयनम् अय्यंगर का जन्म 4 फरवरी, 1891 को तिरुपति के निकट तिरूचनूर, आंध्र प्रदेश में एक रूढ़िवादी वैष्णव ब्राह्मण परिवार में हुआ था। उनके पिता श्री वेंकट वरदाचार्य, संस्कृत के विद्वान थे और उनका परिवार गरीब होते हुए भी अपनी विद्वत्ता के कारण सम्मानित था। श्री अय्यंगर ने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा देवस्थानम् हाई स्कूल तिरुपति से पूरी करने के पश्चात् पचैयप्पा कालेज मद्रास से बी०ए० की डिग्री प्राप्त की। विधि व्यवसाय को अपनी जीविका के रूप में चुनने के लिये उन्होंने 1913 में मद्रास लॉ कालिज से कानून की डिग्री प्राप्त की। उन्होंने 1913 में चूडाम्मल से विवाह किया।

वकील के रूप में

श्री अय्यंगर को विधि व्यवसाय में लाने का श्रेय उस समय के प्रसिद्ध वकील श्री सी० दोरैस्वामी अय्यंगर को है। प्रारम्भिक झिझक के पश्चात् वह व्यावसायिक वकील और "विधि मामलों के चलते फिरते सार-संग्रह" बन गए। 1921-22 में राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेने के कारण उन्हें लगभग एक वर्ष के लिए वकालत छोड़नी पड़ी और उसके बाद उन्होंने मद्रास उच्च न्यायालय में पुनः वकालत शुरु कर दी।

श्री अय्यंगर ने व्यवसाय को जीविकोपार्जन का साधन नहीं माना। उनकी देश की न्यायिक व्यवस्था में सुधार करके उसे लोगों की आवश्यकताओं और आकांक्षाओं के अनुरूप बनाने में गहरी रुचि थी। उन्होंने न्यायपालिका की स्वतंत्रता की पुरजोर वकालत की और सरकार से फेडरल कोर्ट का दर्जा बढ़ाकर सर्वोच्च न्यायालय करने का आग्रह किया। वे इस बात से अत्यधिक चिंतित थे कि हमारे देश के लोगों को न्याय देने की अंतिम व्यवस्था इंग्लैण्ड की प्रिवी काउंसिल को है, और देश के लोगों को कठिनाई और

अपमान का सामना करना पड़ता है। उनकी यह चिन्ता 11 दिसम्बर, 1947 को संविधान-सभा[1] में दिए गए निम्नलिखित वक्तव्य से स्पष्ट रूप से प्रकट होती है:

> मुझे आशा है कि इस देश में शीघ्र ही सर्वोच्च न्यायालय स्थापित होगा और प्रिवी काउंसिल से हमारा पीछा छूट जाएगा। हमें इस समय की व्यवस्था से सन्तुष्ट नहीं होना चाहिए और विदेशी न्यायालय में जाने के कष्टों को सहते नहीं रहना चाहिए। वे ऐसे कई मामलों को नहीं समझ सकते हैं, जो धर्म से संबंधित हैं जैसे एक मूर्ति पर किस तरह का चिन्ह लगाया जाता है। मुस्लिम वक्फ के मामले उनके पास जाते हैं। वे हमारे किसी भी मामले को नहीं समझ सकते। वे हम पर सर्वोच्च अधिकार रखना चाहते हैं, और यही कारण है कि वहां पर भले ही न्यायाधीश निष्पक्ष हों, वे यहां के समुदाय को आत्मसात नहीं कर सकते। इसलिये, वही व्यक्ति बुद्धिमतापूर्वक कार्य कर सकता है जो समुदाय विशेष में कार्य करने वाली सामाजिक प्रवृत्तियों के ढंग को समझता है। अतः महोदय, प्रिवी काउंसिल के प्रति किंचित भी असम्मान न रखते हुए, मैं अपने मंत्री और अपनी सरकार से फेडरल कोर्ट का दर्जा बढ़ाकर सुप्रीम कोर्ट करने के लिए शीघ्र ही एक विधेयक पुरःस्थापित करने का अनुरोध करता हूं, ताकि हम अपनी विधिक परम्पराओं संबंधी मामलों में कम से कम यथासम्भव शीघ्र स्वतंत्र हो सकें।

स्वतंत्रता सेनानी के रूप में

श्री अनन्तशयनम् अय्यंगर एक ऐसा व्यक्तित्व था, जिसे एक व्यक्ति और पारिवारिक जीवन की सीमाओं में बांधा नहीं जा सकता। वे मातृभूमि के प्रति अपने कर्तव्यों के प्रति सचेत थे। इसके परिणामस्वरूप, बचपन से ही उन्होंने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, जो कि हमारी मातृभूमि को ब्रिटिश उपनिवेशवाद के चंगुल से मुक्त करने के लिए राष्ट्रीय आन्दोलन चला रही थी, की गतिविधियों में भाग लेना शुरु कर दिया। उन्होंने 1921-22 के असहयोग आंदोलन में भाग लिया। जब कांग्रेस ने काउंसिलों का बहिष्कार करने की अपनी नीति को वापस ले लिया और 1934 में सैन्ट्रल लेजिस्लेटिव एसैम्बली का चुनाव लड़ने का निर्णय किया, तो अनन्तशयनम् अय्यंगर एसैम्बली के लिए भारी मतों से निर्वाचित हुए। उनकी सीट भूलाभाई देसाई, गोविन्द बल्लभ पन्त, मोहम्मद अली जिन्ना और सत्यमूर्ति जैसे दिग्गजों के साथ थी, जिनका उद्देश्य सरकार में रहकर सरकार से लड़ाई करना था। अपनी जागरूकता और अन्तर्निहित योग्यता से उन्होंने शीघ्र ही एक सशक्त वक्ता के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त की। पिछली सीटों से वे आगे की सीटों पर आ

---

[1] संविधान सभा (विधायी), वाद-विवाद, 11 जुलाई 1947, पृष्ठ-1726

गए और फिर कोई भी दिन ऐसा नहीं निकलता जब वे एसैम्बली में सरकार की छवि खराब करने वाली कोई न कोई बात न कहते। इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि एक यूरोपियन लेखक ने ऐसेटिक रिव्यू में उनका जिक्र "एम्डैन आफ दी एसैम्बली" के रूप में किया है उनका संकेत जर्मनी" के इसी नाम के उस पोत से था जिसने द्वितीय विश्व युद्ध में एलाइड नौसेना को जबरदस्त नुकसान पहुंचाया था।

अनन्तशयनम् अय्यंगर 1940 में गांधी जी द्वारा शुरु किए गए व्यक्तिगत सत्याग्रह आन्दोलन में शामिल हुए और उन्हें तत्काल ही आठ माह के लिए जेल भेज दिया गया। उसके बाद उन्होंने अगस्त, 1942 में शुरु किए गए "भारत छोड़ो" आन्दोलन में भाग लिया और 4 दिसम्बर, 1944 तक वे जेल में बन्द रहे।

देश के मुक्ति आन्दोलन में सक्रिय भाग लेने के साथ ही श्री अय्यंगर छुआछूत, जो उस समय समाज में प्रचलित थी और हमारे सामाजिक ढांचे को विकृत कर रही थी, जैसी सामाजिक बुराइयों से लड़ने में महात्मा गांधी के रचनात्मक कार्यक्रमों का दृढ़तापूर्वक पालन करने वाले व्यक्ति भी थे। उन्होंने हरिजनों के उत्थान, विशेषकर मन्दिरों में प्रवेश के उनके अधिकार और अस्पृश्यता उन्मूलन की सदैव वकालत की।

संसद-विद् के रूप में

भावी पीढ़ी श्री अनन्तशयनम् अय्यंगर को एक महान संसद-विद् के रूप में याद करेगी। एक संसद-विद् के रूप में उनका जीवन स्वतंत्रता प्राप्ति से काफी समय पूर्व उस समय आरम्भ हो गया था जब उन्होंने सन् 1934 में केन्द्रीय विधान सभा की सदस्यता प्राप्त की। अपने ज्ञान और अनुभव के विस्तृत और समृद्ध कोष के कारण वे सभा के एक अध्यवसायी सदस्य सिद्ध हुए। अपनी कुशलता और लोकप्रियता के साथ-साथ श्री अय्यंगर को विनोद कला में भी महारत हासिल थी। जो अनेकों बार उनके लिये बहुत फलदायी सिद्ध हुई और जिससे समय-समय पर सदन के गरम वातावरण को शान्त और सहनीय बनाने में सहायता मिलती थी। एक समर्पित संसद-विद् के रूप में उन्होंने सदन की कार्यवाही में सदैव गहरी रुचि ली। वह संसदीय वाद-विवादों और वार्ताओं के लिये पूरी तरह से तैयार होकर आते थे और लोक सभा में उनके द्वारा दिये गये भाषण सदैव चर्चा को नया मोड़ और घुमाव दे देते थे और श्रोताओं को कुछ सोचने हेतु विवश कर देते थे।

श्री अय्यंगर जनता के प्रतिनिधि के रूप में एक संसद सदस्य के दुर्वह कर्तव्य से भली-भांति अवगत थे। संसद् के सदस्यों के उत्तरदायित्वों के बारे में अपने विचार व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा था[2]:—

> मेरे विचार में, उन्हें (संसद सदस्यों को) जनता और सरकार के मध्य संप्रेषण के द्विगामी तंत्र का कार्य करना चाहिए। उनके लिये केवल अपने निर्वाचन क्षेत्र के हितों तथा प्रतिक्रियाओं को व्यक्त करना ही पर्याप्त नहीं है अपितु उन्हें अपने क्षेत्र में वापस जाकर लोगों के सामने सरकार की नीतियों और सरकार के द्वारा उठाये गये कदमों की व्याख्या भी करनी होती है जिससे कि जनता को अपने चारों ओर हो रही गतिविधियों की पूर्ण जानकारी प्राप्त हो तथा उन्हें भी देश का प्रशासन सुचारू रूप में चलाने में अपनी भागीदारी तथा सहयोग की भावना का अहसास हो।

उनके दीर्घ संसदीय कार्यानुभव के प्रति सम्मान दर्शाते हुए श्री अनंतशयनम् अय्यंगर को सन् 1948 में सर्वसम्मति से उपाध्यक्ष चुना गया था। 30 मई, 1952 को प्रथम लोक सभा के उपाध्यक्ष के रूप में उनका निर्विरोध चुनाव उनकी कुशलता और लोकप्रियता का सूचक है।

उपाध्यक्ष के पद पर निर्विरोध चुने जाने पर संसद-सदस्यों का धन्यवाद करते हुए श्री अय्यंगर ने कहा[3]:—

> पद चाहे जो भी हो, मैं जब भी यह महसूस करता हूं कि पद का महत्व इतना नहीं होता, जितना कि सदन के सर्व-सम्मत निर्णय तथा मेरे नेता जिनकी राय का मैं पूरा सम्मान करता हूं (अध्यक्ष) महोदय और सदन के युवा तथा बुजुर्ग सदस्यों ने मुझमें जो विश्वास व्यक्त किया है, वह महत्वपूर्ण है। मैं आशा करता हूं कि उन्होंने मुझमें जो विश्वास व्यक्त किया है, वह मुझे अधिक बल प्रदान करेगा तथा मैं मुझे सौंपे गये प्रत्येक कर्तव्य का निर्वाह करने का प्रयास करूंगा।

उपाध्यक्ष की स्थिति थोड़ी सी कठिन और नाजुक होती है। उन्हें दो विभिन्न भूमिकाएं निभानी पड़ती हैं। कभी तो उन्हें अपनी पार्टी के प्रवक्ता के रूप में पार्टी के विचारों की अभिव्यक्ति करनी पड़ती है और अगले चंद ही मिनटों में उन्हें सदन में अध्यक्ष की कुर्सी

---

2 "संसदीय लोकतंत्र की संभावनाएं", भारत की विधान सभाओं के पीठासीन अधिकारियों के 21 जनवरी, 1960 को हैदराबाद में आयोजित पच्चीसवें सम्मेलन में अध्यक्ष अय्यंगर द्वारा उद्घाटन अभिभाषण, जर्नल आफ पार्लियामेन्टरी इन्फॉरमेशन (जे०पी०आई०) अप्रैल, 1960, पृष्ठ-3

3 संसदीय वाद-विवाद, हाउस आफ द पीपल, 30 मई 1952, का० 932

पर बैठना होता है। एक निर्णायक और एक खिलाड़ी का इस दोहरी भूमिका को निभाते हुए श्री अनंतशयनम् अय्यंगर ने सभी संबंधित व्यक्तियों को सन्तुष्ट करते हुए अपने कर्तव्यों का निर्वाह किया।

श्री मावलंकर के दुःखद निधन के पश्चात् श्री अय्यंगर को 8 मार्च, 1956 को और पुनः मई, 1957 में लोक सभा का अध्यक्ष चुना गया जब आम चुनावों के बाद द्वितीय लोक सभा समवेत हुई। दिसम्बर, 1957 में उन्होंने कांग्रेस संसदीय पार्टी की सदस्यता से त्यागपत्र दे दिया।

सन् 1952 में श्री अय्यंगर ने एक प्रतिनिधि की हैसियत से ओटावा में हुए राष्ट्रमंडलीय संसदीय सम्मेलन में भाग लिया। सन् 1956 में उन्होंने चीन को और सन् 1959 में पूर्वी यूरोपीय देशों (चेकोस्लोवाकिया, रोमानिया, बल्गारिया और पोलैंड) को भेजे गये संसदीय शिष्टमंडलों का नेतृत्व किया। उनके कार्यकाल के दौरान ही सन् 1957 में भारत में सर्वप्रथम राष्ट्रमंडलीय संसदीय संघ का एक सम्मेलन आयोजित किया गया था जो कि अभूतपूर्व रूप से सफल रहा। सन् 1962 के आम चुनावों में वह पुनः लोक सभा के सदस्य के रूप में निर्वाचित हुए परंतु उसी वर्ष बिहार के राज्यपाल के पद पर अपनी नियुक्ति होने पर उन्होंने लोक सभा की सदस्यता से त्यागपत्र दे दिया। श्री अय्यंगर ने गरिमा और आत्मविश्वास के साथ अक्तूबर, 1967 तक राज्यपाल के रूप में अपने कर्तव्यों का निर्वाह किया तदुपरांत वह अपने गृहनिवास तिरुपति में जाकर बस गये। 87 वर्ष की आयु को प्राप्त कर वह 19 मार्च, 1978 को स्वर्ग सिधार गये।

अध्यक्ष के रूप में

सन् 1956 में अध्यक्ष के पद पर अपने चुनाव के पश्चात् सदस्यों को धन्यवाद देते समय श्री अय्यंगर ने उन्हें अपने सद्विवेक से पूरी सेवा करने के प्रति आश्वस्त किया। उन्होंने कहा[4]:—

> मैं न तो इस देश और न ही इसकी संसद के, न तो इस सदन के और न ही सदन के किसी सदस्य की गरिमा को कोई क्षति पहुंचने दूंगा। मैं सदस्यों के विधिसम्मत समस्त विशेषाधिकारों का पूर्ण समर्थन करूंगा। मैं सदन की गरिमा को अक्षुण्ण बनाये रखने का पूरा प्रयास करूंगा तथा मुझे यह आशा और पूरा विश्वास है कि आप सभी का सहयोग पाकर मैं यह कार्य करने में सफल होऊँगा।

---

[4]लोक सभा वाद-विवाद, 8 मार्च 1956, कॉ॰ 1967-68

.....मैं इस सदन के प्रत्येक वर्ग को तथा किसी वर्ग विशेष से संबंध नहीं रखने वाले प्रत्येक सदस्य को आश्वस्त करता हूं कि उनके विशेषाधिकारों को कभी कोई हानि नहीं पहुंचने दूंगा। मुझे एक स्वतंत्र सदस्य की हैसियत से प्रत्येक सदस्य के विशेषाधिकारों का सदैव अहसास रहेगा। मैं परम्पराओं का पालन करूंगा, पुरानी परम्पराओं का अनुसरण करूंगा और जब कभी भी नई परम्पराओं को स्थापित करना होगा मैं वचन देता हूं कि मैं ऐसा करने के लिये प्रयास करूंगा।

प्रथम लोक सभा के अध्यक्ष के रूप में अपने संक्षिप्त कार्यकाल के पश्चात श्री अय्यंगर 11 मई, 1957 को द्वितीय लोक सभा के अध्यक्ष पद हेतु पुनः निर्विरोध निर्वाचित किये गये। उनका यह पुनः निर्वाचन अध्यक्ष के रूप में उनकी लोकप्रियता और व्यापक ग्राह्यता का प्रचुर प्रमाण है जिन्होंने अध्यक्ष के पद पर आसीन होकर भी सदैव निष्पक्षतापूर्वक कार्य किया और इन सबसे ऊपर सभी राजनैतिक दलों के साथ पक्षपातविहीन व्यवहार किया।

श्री अय्यंगर को उनके अध्यक्ष के पद पर पुनः निर्वाचन पर बधाई देते हुए प्रधान मंत्री नेहरू ने कहा था[5]:—

...महोदय आप इस पद के लिये नये नहीं हैं और मैं यह कहना चाहूंगा कि आपको इस पद के लिये निर्वाचित करके इस सदन ने कोई जोखिम मोल नहीं लिया है। हममें से अनेक—हममें से कुछ विगत संसद के भी सदस्य रहे थे—पहले इस सदन के उपाध्यक्ष के पद पर और फिर अध्यक्ष के पद पर आपके आरूढ़ होने के दौरान आपके निकट संपर्क में रहे हैं।

हमारे संविधान के अनुसार अध्यक्ष का पद काफी ऊँचा होता है परन्तु मैं यह कहना चाहूंगा कि व्यवहार तथा परंपरा के फलस्वरूप कदाचित लोक सभा के अध्यक्ष का पद आज संविधान द्वारा प्रदत्त गरिमा से कहीं अधिक ऊँचा हो गया है....यह सर्वविदित है कि संसदीय सरकार की व्यवस्था के अधीन हालांकि संविधान अनिवार्य रूप से सर्वोच्च शक्ति है और हम संसद सदस्य अपनी शपथ से तथा अन्यथा भी संविधान के नियमों का पालन करने हेतु बाधित हैं, तथापि संविधान अपने आप में पर्याप्त नहीं है। परंपराओं का आगे बढ़ना अनिवार्य है तथा व्यवहार की आदतें, एक दूसरे को सहन करने की क्षमता, आपसी समझ तथा सामंजस्य स्थापित करने हेतु प्रयत्नशीलता के विकासशील होने की भी आवश्यकता है, अन्य शब्दों में इस सदन को अपने आचार व्यवहार के माध्यम से संपूर्ण राष्ट्र के समक्ष एक दृष्टांत प्रस्तुत करना है.....।

---

[5] लोक सभा वाद-विवाद, 11 मई 1957, कॉ॰ 28-29

...आम चुनावों के बाद एक नयी संसद् का निर्माण हुआ है और हमें कठिन समस्याओं का सामना करना है क्योंकि हमने निर्माण के महत्वपूर्ण कार्य हाथ में लिये हैं। ...अतएव यह अनिवार्य है कि यह सदन इस भार और कठिनं जिम्मेदारी तथा आनंददायक जोखिम को हंसते हंसते और किसी विवेकशील नेतृत्व के मार्गदर्शन में अपने कंधों पर वहन करे। महोदय, विगत में भी इस पद पर कार्य करने का अमूल्य अनुभव लेकर आज आपने एक बार फिर इस पद को ग्रहण किया है और हम सभी यह जानते हैं कि आप हमें कुशल नेतृत्व प्रदान करेंगे और यदि किसी समय हम अपने कर्त्तव्यपथ से विमुख हो जाते हैं तो आप हमारा उचित मार्गदर्शन करेंगे।

लोक सभा के अध्यक्ष के उच्च पद पर निर्विरोध चुने जाने के लिये संसद सदस्यों को धन्यवाद करते हुए, श्री अय्यंगर ने कहा था [6]:-

"मैंने सर्वप्रथम सन् 1934 में इस सदन में प्रवेश किया था जो कि उस समय केन्द्रीय विधान सभा के नाम से जाना जाता था और तब से लेकर आज तक मैं निरंतर इस सदन का एक सदस्य रहा हूं और इसके भीतर होने वाले परिवर्तनों तथा उथल-पुथल का प्रत्यक्षदर्शी रहा हूं। पिछले शासनकाल के दौरान मुझे ऐसे महान नेताओं के अधीन विपक्ष में रहकर कार्य करने के अनेक अवसर प्राप्त हुए थे जिन्होंने सभा के अन्दर तथा सभा के बाहर स्वतंत्रता के लिए संघर्ष किया था। मैं विपक्षी सदस्यों द्वारा कार्य करने के दौरान अनुभव की जाने वाली कठिनाइयों से परिचित हूँ। मैं विभिन्न दलों के हितों तथा समग्र रूप से सदन के विशेषाधिकारों और स्वतंत्रता की रक्षा का भरसक प्रयास करूंगा।

सन् 1947 से लेकर आज तक मुझे सरकार की कार्य प्रणाली को बहुत नजदीक से अध्ययन करने के अनेक अवसर उपलब्ध हुए हैं। सन् 1948 में और फिर सन् 1952 में मैं सदन का उपाध्यक्ष चुना गया था। और मार्च, 1956 में मुझे अध्यक्ष पद के लिये निर्वाचित किया गया। अतएव, मुझे संसदीय लोकतंत्र की कार्यप्रणाली का प्रत्यक्ष अध्ययन करने के पर्याप्त अवसर प्राप्त हुए। मैं सदन को इस बारे में आश्वस्त कर सकता हूँ कि लोकतंत्र की आधारशिला को मजबूत बनाने तथा संसद् की प्रथाओं और परंपराओं को बनाये रखने में मेरी ओर से कोई कसर नहीं रहेगी।

हमारा लोकतंत्र विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है। मैं आशा करता हूं कि यह संसद् ऐसी परंपराओं का विकास करेगी जो न केवल हमारी संसद् के लिये अपितु

---

[6]तदेव, का॰ 36-38

विश्व के अन्य सभी संसदों के लिये भी अनुकरणीय तथा स्वीकार्य होगी। देश का शासन सुचारु रूप से चलाने तथा विधायी मामलों के निर्धारण में जनता की भावनाओं को अभिव्यक्ति प्रदान करने के माध्यम के रूप में मैं इसे आप सभी के सहयोग से अधिकाधिक प्रभावी बनाने का प्रयास करूंगा।

किसी संसदीय लोकतंत्र में अनेक दलों के अनिवार्य अस्तित्व का अभिप्राय वास्तव में यह कभी नहीं है कि वे सभी मामलों में आपस में झगड़ते रहें। सभी दलों के बीच सहमति का एक व्यापक आधार हो सकता है। मैं आशा करता हूं और मुझे पूरा विश्वास है कि सभी राजनैतिक दल आपस में सहयोग करेंगे और यदि कभी उनमें आपस में झगड़ने की नौबत भी आई तो वे अपने बीच किसी प्रकार के द्वेष को कभी उत्पन्न नहीं होने देंगे और बिना किसी कटुता के अपनी हार को स्वीकार करेंगे। इस प्रकार की भावना लोकतंत्र के विकास में निरंतर सहायक बनेगी।

हमने प्रथम संसद् के दौरान अच्छा कार्य किया है। मैं आशा करता हूं कि इस द्वितीय संसद के दौरान जो द्वितीय पंचवर्षीय योजना की अवधि के समकालिक है, चर्चा हेतु अनेक दूरगामी मुद्दे उठाये जायेंगे। मुझे आशा तथा पूरा विश्वास है कि इस सदन में सभी राजनैतिक दल और ग्रुप आपस में सौजन्य और सामंजस्य स्थापित करेंगे तथा देश के और समग्र रूप से समाज के हित में एकजुट होकर कार्य करेंगे।"

कांग्रेस पार्टी की अपनी सदस्यता के बारे में, श्री अय्यंगर ने टिप्पणी की[7]:—

...यह संभव हो सकता है कि मैं कांग्रेस पार्टी की अपनी सदस्यता से त्यागपत्र नहीं दूं, परंतु इस पद पर आसीन होकर मेरा आचार व्यवहार इस प्रकार का होगा जिससे कि मैं सभी दलों के सदस्यों के मनमस्तिष्क में अपने प्रति विश्वास पैदा कर सकूं और पूरी तरह से निष्पक्ष रह कर इस सदन की मान्यताओं, प्रथाओं तथा परंपराओं के विकास के प्रति प्रयत्नशील रहूंगा।

उन्होंने सदस्यों को यह भी आश्वासन दिया कि वे संसदीय लोकतंत्र की परंपराओं को बनाये रखने के लिये भरसक प्रयास करेंगे और यह सुनिश्चित करेंगे कि सदस्यों की आकांक्षाएं पूर्ण हों।

---

[7] तदेव, का॰ 38

अध्यक्ष के रूप में, श्री अय्यंगर को पीठासीन अधिकारी के भारी दायित्वों का पूरा-पूरा अहसास था, जैसाकि उन्होंने कहा था:[8]

> तानाशाही अथवा राजतंत्र के अधीन, नागरिकों के जीवन अथवा स्वातंत्र्य की कोई गारंटी नहीं हो सकती । ऐसी अवस्था में तानाशाह की भलमानसता ही एकमात्र गारंटी हो सकती है। किसी लोकतंत्रीय व्यवस्था का भी सांप्रदायिक अथवा भाषायी तानाशाही की ओर अपह्रास हो सकता है तथा वह भी अपने समुदाय विशेष के लोगों के प्रति पक्षपातपूर्ण व्यवहार और अल्पसंख्यक समुदाय के लोगों का दमन करना आरंभ कर सकती है। ऐसी प्रवृत्तियों को निर्ममतापूर्वक रोकना होगा। ऐसी परिस्थितियों में अल्पसंख्यक समुदायों के हितों की रक्षा करने तथा उनके प्रति होने वाले अत्याचारों को रोकने में केवल एक ही व्यक्ति समर्थ हो सकता है और वह पीठासीन अधिकारी है। पीठासीन अधिकारी पर एक बहुत बड़ा उत्तरदायित्व आ जाता है। उन्हें इस बात के प्रति निरंतर सतर्क रहना पड़ता है कि कानून और व्यवस्था के नाम पर समाज में चारों ओर क्या कुछ घटित हो रहा है और दमन, भाई-भतीजावाद तथा भ्रष्टाचार संबंधी सभी मामलों को प्रकाश में लाया जाये। उन्हें दलगत भावनाओं से ऊपर उठकर रहना चाहिए और विधानमंडल में सभी व्यक्तियों के हितों की और विधानमंडल के माध्यम से देश के प्रत्येक नागरिक के हितों की रक्षा करनी चाहिए। विधानमंडल संबंधी मामलों को इस प्रकार निपटाया जाना चाहिए जिससे कि प्रत्येक नागरिक अपनी शिकायतों को दूर करने के लिये समस्त उपचारात्मक उपायों के विफल हो जाने की स्थिति में उसे अपना अंतिम सहारा समझे।

श्री अय्यंगर संसदीय संस्थाओं के प्रति पूर्ण रूप से समर्पित थे और पीठासीन अधिकारी के रूप में अपने निर्णयों और व्यवस्थाओं के माध्यम से उन्होंने संसदीय प्रक्रिया और व्यवहार के क्षेत्र में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। वास्तव में, एक ऐसे महत्वपूर्ण समय में लोक सभा के अध्यक्ष के रूप में उनका निर्वाचन देश के लिये सौभाग्य की बात थी जिस समय नव प्रकल्पित प्रक्रियाओं, नियमों तथा विनियमों का व्यवहार में लाये जाने और उनके परीक्षण की प्रक्रिया जारी थी। उन्हें सदन के प्रथम अध्यक्ष, श्री मावलंकर द्वारा स्थापित परम्पराओं के आधार पर सदन की कार्यवाही संचालन हेतु सुदृढ़ परंपराओं के निर्माण का महान उत्तरदायित्व सौंपा गया था। उन्होंने काफी लंबी अवधि तक इस

---

[8] "लोकतंत्र के सामने आने वाले संकट—उनके कारण तथा उपचार", 31 दिसम्बर, 1960 से 2 जनवरी, 1961 तक बंगलौर में आयोजित भारत की विधान सभाओं के पीठासीन अधिकारियों के 26वें सम्मेलन में अध्यक्ष श्री अय्यंगर का अभिभाषण, जे०पी०आई० , भाग-VII, सं० 1, 1961, पृष्ठ 4

उत्तरदायित्व का पूरी क्षमता और विश्वसनीयता के साथ निर्वाह किया जिसका सुस्पष्ट प्रमाण उनके द्वारा अध्यक्ष जैसे संवेदनशील पद के लिए निर्वाचन के तत्काल पश्चात् कांग्रेस संसदीय पार्टी की सदस्यता से त्यागपत्र दे देना है।

अध्यक्ष के रूप में कार्यकाल के दौरान, श्री अय्यंगर ने अपने अनेक स्वस्थ परंपराओं की आधारशिला रखी जो न केवल सदन की कार्यवाही सुचारु रूप से संचालित करने में बल्कि सामान्य तौर पर संसद की गरिमा बढ़ाने में भी सहायक सिद्ध हुई। ऐसी ही एक परंपरा का संबंध प्रश्नों से है।[9] जब सदन में वह पीठासीन होते थे तो उन्हें प्रतिदिन उन सभी सदस्यों के नाम पुकारने होते थे जिनके नाम से कार्यसूची में प्रश्न पूछे गये होते थे, भले ही उन्होंने संपूर्ण सत्र में अनुपस्थित रहने की अनुमति मांगी हो अथवा वे विदेश-यात्रा पर गये हों। अध्यक्ष ने यह महसूस किया कि जब इस बात की जानकारी होती है कि संबंधित सदस्य इस प्रश्न को पूछने के लिये सदन में उपस्थित नहीं होंगे, तो मौखिक उत्तर हेतु उन प्रश्नों को पूछने का कोई औचित्य नहीं रहता। अतएव श्री अय्यंगर ने अध्यक्ष की हैसियत से यह निर्णय किया कि ऐसे सदस्यों के प्रश्नों को केवल लिखित उत्तर हेतु स्वीकार किया जायेगा। कानून के अन्तर्गत नजरबन्द किये गये सदस्यों द्वारा भेजे गये प्रश्नों पर भी यही निर्णय लागू होगा।

लोक सभा के प्रक्रिया संबंधी नियमों के अंतर्गत, मौखिक उत्तर हेतु निश्चित समय सीमा के भीतर न आ सकने की स्थिति में किसी प्रश्न का प्रश्नकाल के अंत में केवल तभी उत्तर दिया जायेगा जबकि मंत्री अध्यक्ष महोदय को इस आशय का एक अभ्यावेदन दे कि प्रश्न विशेषजनहित से संबंधित है और वह उसका उत्तर देना चाहते हैं। अन्यथा किसी भी महत्वपूर्ण प्रश्न को बारी से पहले प्राथमिकता दिये जाने का कोई प्रावधान नहीं था। यह सुनिश्चित करने के उद्देश्य से कि किसी विशेष दिन के लिये निर्धारित प्रश्न सूची में वास्तव में किसी महत्वपूर्ण प्रश्न को केवल समय की कमी के कारण न छोड़ा जाये, अध्यक्ष ने यह निर्णय किया कि सदन की सामान्य सहमति प्राप्त करने के पश्चात् प्रश्नकाल के समाप्त होने से कुछ देर पूर्व ही ऐसे किसी प्रश्न को उत्तर देने हेतु उठाया जा सकता है।

श्री अय्यंगर ने 26 फरवरी, 1960 . एक नई परम्परा शुरू की जब उन्होंने सदस्यों से राष्ट्रपति का सन्देश पढ़कर सुनाए जाते समय अपने-अपने स्थानों पर खड़े

---

[9] तदेव, पृष्ठ 10

होने का अनुरोध किया। अध्यक्ष ने टिप्पणी की कि राज्य[10] के प्रमुख की ओर से संदेश के मामले में यही भाव प्रदर्शन उपयुक्त है।

श्री अय्यंगर को गणपूर्ति के संबंध में एक नई परम्परा शुरू करने का भी श्रेय दिया जाता है। 22 मार्च, 1960 को सभा की बैठक 6.30 अपराह्न तक चलनी थी। जब खाद्य और कृषि मंत्रालय की अनुदानों की मांगों पर चर्चा शुरू हुई, तो कुछ सदस्यों ने अनुरोध किया कि उन मांगों की चर्चा के लिए अधिक समय दिया जाना चाहिए और इस हेतु यदि आवश्यक हुआ, तो वे सांय 7.00 बजे तक बैठक के लिए तैयार हैं। जब कुछ सदस्यों ने सांय 5.00 बजे के बाद गणपूर्ति बने रहने के बारे में कठिनाई का वर्णन किया तो अध्यक्ष अय्यंगर ने निम्नलिखित टिप्पणी की:[11]

> हमने एक परम्परा अपनाई है कि मध्याह्न भोजनावकाश के दौरान, कोई सदस्य गणपूर्ति की मांग नहीं करेगा, बशर्ते वास्तव में चर्चा चलती रहे और किसी विषय को मतदान के लिये न लाया जा रहा हो। मतदान हेतु, गणपूर्ति बेहद आवश्यक है, हम गणपूर्ति के बिना मतदान नहीं कराएंगे।
>
> इसी तरह से, यदि सभा सहमत हो तो गणना किए जाने के एक घंटे के अन्दर हम गणपूर्ति के लिए नहीं कहेंगे, परन्तु जब मतदान किया जाना है, तब तो गणपूर्ति का होना अनिवार्य है। इसका अर्थ है कि यदि एक बार गणना हो चुकी है तो उसके एक घंटे तक पुनः गणना नहीं की जाएगी....
>
> मध्याह्न भोजन के समय यह प्रथा अपना ली गई है, बेशक यह तथ्य है कि संविधान में इसके विरुद्ध एक प्रावधान है। यदि वह सही है, तो यह भी सही है। यदि वह गलत है, तो दोनों ही गलत होंगे। यदि कानून संतोषजनक रूप से कार्य करता है तो किसी नई परिपाटी की आवश्यकता नहीं है। कानून को हर समय बदला नहीं जा सकता लेकिन मुनष्य के रीति रिवाज समय के अनुसार बदलते रहते हैं। मैं इस प्रथा को अब एक नियम के रूप में लागू नहीं कर रहा हूं। हमारी प्रगति के साथ यह स्वतः एक प्रथा के रूप में विकसित हो जायेगी हमें इस बात को समझना चाहिये कि यदि हम समय बढ़ाते हैं तो तब

---

[10] लोक सभा वाद विवाद, खंड XXXIX, सं॰ 11, 26 फरवरी 1960, का॰ 2942-43

[11] लोक सभा वाद विवाद, खंड XLI, सं॰ 31, 22 मार्च 1960, का॰ 7264-65

तक गणपूर्ति की मांग नहीं की जाएगी जब तक कि मत विभाजन न करवाना हो। इसे एक सामान्य सहमति समझा जाना चाहिए।

जब सभा का सत्र चल रहा हो तब सभा के बाहर मंत्रियों द्वारा दिए जाने वाले नीति संबंधी वक्तव्यों के बारे में अध्यक्ष ने कहा :[12]

> जब सभा का सत्र चल रहा हो....तो सदन का सम्मान करते हुए नीति संबंधी अथवा नीति संबंधी परिवर्तन अथवा किसी नई नीति की घोषणा अन्य लोगों के समक्ष करने से पहले उसे सदन के ध्यान में लाया जाना चाहिए। परन्तु हम यहां किसी मंत्री को यह सलाह देने के लिए नहीं बैठे हैं कि अमुक विशेष चीज का संबंध किसी नीतिगत मामले से अथवा उसके विवरण से है। मुझे विश्वास है कि माननीय मंत्री महोदय यह निर्णय करने में स्वयं सक्षम हैं कि कोई मामला नीतिगत है अथवा नहीं।

अध्यक्ष होने के नाते श्री अय्यंगर ने संसदीय कार्य और प्रक्रिया से संबंधित कई महत्वपूर्ण मामलों पर अपना निर्णय दिया। स्थगन प्रस्ताव के बारे में उन्होंने कहा।[13]

> किसी राज्य में नागरिक प्रशासन को सहायता देने के लिए सशस्त्र सेनाओं को बुलाने संबंधी मुद्दे पर बहस करने के लिए स्थगन प्रस्ताव लाने की अनुमति नहीं है क्योंकि यह राज्य का, कानून और व्यवस्था संबंधी, मामला है।

अध्यक्ष ने यह भी कहा कि किसी ऐसे मामले पर बहस करने के लिए स्थगन प्रस्ताव लाने की इजाजत नहीं है जिस में जांच चल रही हो।[14]

ध्यानाकर्षण संबंधी सूचना पर अपना निर्णय देते हुए अध्यक्ष ने कहा:[15]

> "सामान्य रूप से नियमों के अन्तर्गत किसी भी विशेष दिन एक से अधिक ध्यानाकर्षण संबंधी सूचना पर बहस नहीं कराई जा सकती। जैसाकि ये मामले महत्वपूर्ण होते हैं, अतः सदस्यों के प्रति रियायत बरतने के उद्देश्य से मैं अन्तिम दिन के लिए एक प्रथा स्थापित करना चाहता हूं। अगर अत्यन्त महत्व के मामले हैं तो मैं इस तरह की अनेक सूचनाओं पर बहस करने की अनुमति प्रदान करूंगा।

श्री अय्यंगर ने लोक सभा में विधेयक पुरःस्थापित करने संबंधी प्रक्रिया में भी परिवर्तन किया जिसके अनुसार विधेयकों की प्रतियां, उन्हें सदन में पुरःस्थापित करने से दो

---

[12] लोक सभा वाद-विवाद, भाग दो, 23 दिसम्बर 1960, कॉ० 7334-35

[13] लोक सभा वाद-विवाद, भाग दो, 12 अगस्त 1958, कॉ० 363

[14] लोक सभा वाद-विवाद, भाग दो, 12 मार्च 1953, कॉ० 5426-27

[15] लोक सभा वाद-विवाद, भाग दो, 31 मई 1957, कॉ० 3209

दिन पूर्व, परिचालित कर दी जानी चाहिए। तथापि विनियोग विधेयक, वित्त विधेयक और गोपनीय विधेयक को इस अपेक्षा से मुक्त रखा गया है। इसका उपबन्ध अध्यक्ष द्वारा निम्नलिखित निर्देश के अनुसार किया गया था:[16]

> कोई विधेयक पुरःस्थापित करने के लिए किसी दिन की कार्यसूची में सम्मिलित नहीं किया जायेगा जब तक कि उसकी प्रतियां उस दिन जब कि विधेयक को पुरःस्थापित किये जाने का विचार हो, कम से कम दो दिन पूर्व सदस्यों के उपयोग के लिए उपलब्ध न कराई गई हों।
>
> परन्तु विनियोग विधेयक, वित्त विधेयक और ऐसे गोपनीय विधेयक जो कार्य सूची में नहीं रखे जाते, सदस्यों को पहले प्रतियां बांटे बिना ही पुरःस्थापित किये जा सकेंगे।
>
> परन्तु यह भी कि अन्य मामलों में जिन में मंत्री यह चाहता हो कि प्रतियां, परिचालित करने के पश्चात् दो दिन से पहले अथवा उस दिन के परिचालित किये बिना भी, विधेयक पुरःस्थापित किया जाये, तो वह अध्यक्ष के विचार के लिए एक ज्ञापन में, जिसमें यह बताया गया होगा कि सदस्यों को पहले से प्रतियां न दिये बिना विधेयक क्यों पुरःस्थापित किया जा रहा है, पूरे-पूरे कारण देगा, और यदि अध्यक्ष अनुमति दे तो विधेयक उस दिन की, जब कि विधेयक को पुरःस्थापित किये जाने का विचार हो, कार्य-सूची में सम्मिलित कर दिया जाएगा।

इस प्रक्रिया को लागू करने से पूर्व विधेयकों की प्रतियां उसके पुरःस्थापित किये जाने के बाद ही सदस्यों को परिचालित की जाती थी।

किसी प्रश्न पर पूछे जा सकने वाले पूरक प्रश्नों की संख्या के सवाल पर अध्यक्ष श्री अय्यंगर ने 31 जुलाई, 1957 को निम्न टिप्पणी की:[17]

> पूरक प्रश्नों की संख्या के संबंध में प्रश्न की महत्ता और अन्य विभिन्न पहलुओं को ध्यान में रखा जाता है....यदि मैं इस बात से संतुष्ट हूं कि अमुक प्रश्न के बारे में काफी कुछ पूछा जा चुका है, तो मैं और अधिक पूरक प्रश्न पूछे जाने की अनुमति प्रदान नहीं कर सकता।

---

[16] प्रक्रिया संबंधी मामले—लोक सभा विधेयक पुरःस्थापित करने से पूर्व उसकी प्रतियों का सदस्यों को परिचालन, जे०पी०आई०, भाग IV, सं० 1, अप्रैल 1958, पृष्ठ 52-53

[17] लोक सभा वाद विवाद, 31 मई 1957, कॉ० 6110-11

यह सीमा पूरक प्रश्नों की संख्या पर आधारित नहीं है, अपितु इसके प्रश्न की महत्ता को ध्यान में रखना होगा। अध्यक्ष यह निर्धारित करने के लिए स्वतंत्र है कि कोई विशेष प्रश्न पर्याप्त रूप से महत्वपूर्ण है अथवा नहीं तथा क्या उसका उत्तर पर्याप्त रूप से दे दिया गया है अथवा नहीं। यदि उसका उत्तर पर्याप्त रूप से नहीं दिया गया है तो वह और पूरक प्रश्न पूछने की अनुमति दे सकता है। यदि किसी प्रश्न का उत्तर पूर्ण रूप से पहले ही पूरक प्रश्न द्वारा ही दे दिया जाता है तो मैं अगले प्रश्न को ले लेता हूं। यह निर्णय करना मेरा काम है कि किसी प्रश्न का उत्तर पर्याप्त रूप से दिया गया है अथवा नहीं।

श्री अय्यंगर ने संसद की शक्ति और प्रतिष्ठा में वृद्धि करने तथा उसे लोगों की इच्छाओं को व्यक्त करने वाला सर्वोच्च मंच बनाने के लिए वह सब कुछ किया जो वह कर सकते थे। द्वितीय लोक सभा के अंतिम दिन 30 मार्च, 1962 को सेवा निवृत्त हो रहे अध्यक्ष श्री अय्यंगर की प्रशंसा करते हुए प्रधान मंत्री तथा सदन के नेता श्री जवाहर लाल नहरु ने कहा:[18]

हो सकता है कि यह अंतिम अवसर हो जब आप लोक सभा अध्यक्ष के रूप में इस संसद में पीठासीन हैं। जुदाई की अभिव्यक्ति शब्दों में करना हमेशा बड़ा मुश्किल काम रहा है लेकिन हम इसे निश्चित तौर पर जुदाई नहीं कह सकते क्योंकि आप जहां कहीं भी जिस किसी भी उच्च पद पर शोभायमान होंगे, आप हमेशा हमारे करीब रहेंगे, आप उसी उद्देश्य के लिए कार्य करते रहेंगे, जिसके लिए आपने आजीवन किया है। केवल आपके काम करने का क्षेत्र अलग होगा। फिर भी हम उस उच्च पीठ पर आपके आसीन होने के इतने आदी हैं कि आपकी अनुपस्थिति को हम अत्यधिक महसूस करेंगे, यहां तक कि हम उन चीजों को भी महसूस करेंगे जिनकी हम अकेले में कभी कभार आलोचना भी करते थे, क्योंकि आपने जो कुछ यहां किया है वह सहृदयता और दोस्ताना तरीके से किया है, जिसका उद्देश्य इस सदन में किसी के भी प्रति किसी प्रकार की कोई दुर्भावना नहीं रखना था, जो एक महत्वपूर्ण बात है। जब भी हम लोक सभा अध्यक्षों के बारे में चर्चा करेंगे, आपका नाम सबसे पहले हमारे सामने आएगा। और इसलिए जो कुछ भी हम आपको इस अवसर पर दे सकते हैं वह है हमारा धन्यवाद और हमारी बधाईयां कि आपने इतने दिनों तक संसद के अध्यक्ष के रूप में सफलतापूर्वक कार्य किया और हम आशा करते हैं कि आप आने वाले कई वर्षों तक इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए राष्ट्र को अपनी सेवाएं अर्पित करते रहेंगे। आपकी शुभकामनाएं हमारे साथ हैं और जब आप उस कुर्सी में नहीं होंगे तब भी मैं सोचता हूं कि आप की परछाई उसके आसपास कहीं न कहीं रह कर हमारा

---

[18] लोक सभा वाद विवाद, खंड LXII, 30 मार्च 1962, का० 2788-90

मार्ग दर्शन करती रहेगी और आप जहां कहीं भी रहेंगे, आप को हमेशा इस बात का ध्यान रहेगा कि लोक सभा किस तरह कार्य कर रही है।

समाजवादी के रूप में

श्री अनंतशयनम् अय्यंगर एक अच्छे समाजवादी थे तथा उनका विश्वास था कि केवल एक समाजवादी सरकार ही राष्ट्र का कल्याण कर सकती है। मिश्रित अर्थव्यवस्था की अवधारणा को उनका समर्थन प्राप्त था, वह एक ऐसी औद्योगिक नीति के पक्षधर थे जिसके द्वारा उन कतिपय मदों का निर्धारण किया जाये जिनका स्वामित्व और जिसकी व्यवस्था पूर्णरूपेण राज्य के अंतर्गत होनी चाहिए। परिणामस्वरूप, उन्होंने कतिपय उद्योगों में राज्य के हस्तक्षेप की वकालत की। श्री अय्यंगर ने ऐसे सभी तर्कों की अवहेलना की जिसके अनुसार औद्योगिक उत्पादन के लिए लाभ ही एकमात्र उद्देश्य था। उनके मत में यह कहना मानव के सामान्य ज्ञान के लिए एक प्रकार के कलंक की बात है कि सभी कार्य केवल लाभ प्राप्ति के लिए ही किए जाते हैं। वह राजनीति और आर्थिक जगत दोनों में प्रजातंत्र चाहते थे। इस प्रकार उन्होंने राज्य की तरफ से एक सक्रिय भूमिका का पक्ष लिया। उन्होंने कहा:[19]

> कोई सरकार वास्तव में सत्ता में केवल मात्र नीति निर्धारण करने के लिये नहीं रहती, अपितु उसका कार्य सुख समद्धि में वृद्धि करके, रोजगार प्रदान करके और प्रत्येक नागरिक को प्रसन्न और संतुष्ट बनाकर समाज की पुनसंरचना करना है। वह राज्य का प्राथमिक कार्य होता है। अतः मैं यह महसूस करता हूं कि इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए हमें केन्द्र स्तर पर संयुक्त प्रयास, समन्वित प्रयास और सुसंगठित प्रयास करने चाहिये। स्वतंत्रता प्राप्त होते ही हमें दूसरी बुराईयों के विरुद्ध भी मुहिम छेड़नी होगी।

श्री अय्यंगर भारत की आर्थिक और वित्तीय नीतियों में गहरी रुचि रखते थे। उनका दृष्टिकोण और तर्क इतने गहरे तथा सुस्पष्ट होते थे कि वह प्रायः वित्त मंत्री को भी उलझन में डाल देते थे और वित्त मंत्री यह नहीं समझ पाते थे कि क्या करना चाहिए।

---

[19] संविधान सभा (विधायी) वाद विवाद, खण्ड-दो, 5 दिसम्बर 1947, पृष्ठ 1341

अर्थव्यवस्था के बेहतर विकास के लिए कृषि और उद्योग में आयोजना का महत्व बताते हुए श्री अय्यंगर ने यह दलील दी:[20]

> कृषि के लिए कृषि बोर्ड और केन्द्रीय योजना आयोग बनाया जाना चाहिए। सभी बड़ी परियोजनाएं केन्द्र द्वारा अपने हाथों में ली जानी चाहिए। बेकार पड़ी भूमि को सिंचाई योग्य भूमि में बदला जाना चाहिए। किसानों को केन्द्र द्वारा ऋण अथवा अनुदान सहायता दी जानी चाहिए और विद्युत उनके घरों तक ले जाई जानी चाहिए। कुएं खोदे जाने चाहिए, नहरें खोदी जानी चाहिए। इसके अतिरिक्त मैं सुझाव देता हूं कि अन्य विभिन्न पूरक किस्मों का भोजन दिया जाना चाहिए। बाग लगाने चाहिए। इसलिए यह आवश्यक है कि केन्द्र में कृषि को समर्पित एक योजना बोर्ड अवश्य बनाया जाना चाहिए। केवल नीति की घोषणा करना ही पर्याप्त नहीं है। मैं कहना चाहूंगा कि जहां तक उद्योगों का संबंध है, हमारे मूल उद्योगों को राज्य द्वारा अपने हाथों में लिया जाना चाहिए। यहां तक कि इस उद्देश्य के लिए भी आयोजना की आवश्यकता है, प्राथमिकता आवश्यक है।....

उन्होंने विभिन्न चरणों में समाजवाद की उपलब्धि का पक्ष लिया और वह इस बात से खुश थे कि हमारे देश ने पूँजीवादी और साम्यवादी प्रणालियों पर आधारित समाजवादी लोकतंत्र को अपनाया। देश को प्रजातंत्रीय और समाजवादी बनाकर मध्यमार्ग अपनाए जाने पर अपनी संतुष्टि व्यक्त करते हुए, श्री अय्यंगर ने कहा:[21]

> यह संयोजन प्रत्येक व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व के विकास के लिए अधिक अवसर प्रदान करेगा। सारी दुनिया के लोग हमारे प्रयोग पर नजर रखे हुए हैं। कुछ एक का विचार है कि प्रजातंत्रीय देश में योजनाओं पर कार्य नहीं किया जा सकता और न ही उनको क्रियान्वित किया जा सकता है, बल्कि उनको लागू करने में सर्वसत्ताधारी सरकार का होना आवश्यक है। कुछ अन्य व्यक्ति यह महसूस करते हैं कि आर्थिक क्षेत्र में समाज का समाजवादी स्वरूप उस प्रजातंत्र और स्वतंत्रता के अनुकूल है जिसकी उसमें वकालत की गई है। सौभाग्य से हम अब तक दोनों में सफल रहे हैं। हमारे लोगों को वास्तव में गर्व करना चाहिए कि सरकार ने न केवल समाज के समाजवादी स्वरूप को चलाने का उत्तरदायित्व अपने ऊपर लिया है बल्कि वे एक स्वतंत्र और लोकतांत्रिक राज्य में रह रहे हैं। न केवल जीवन के लोकतांत्रिक तरीके को विकसित ही किया जाना चाहिए बल्कि लोगों में समाजवादी भावना को भी पैदा करना होगा। इस कार्य को करने का

---

[20] तदेव, पृ॰ 1342

[21] "लोकतंत्र के सामने आने वाले संकट—उनके कारण और उपचार," उद्धृत कृति, पृष्ठ 7.

सबसे अच्छा उपाय यह है कि सरकार द्वारा चलाई जा रही आर्थिक संस्थाएं जनता के हित और लाभ के लिए कार्य करें ताकि जनता यह अनुभव करे कि समाज का समाजवादी स्वरूप उनके लिए अधिक लाभदायक है।

एक लोकतांत्रिक के रूप में

श्री अय्यंगर को इस बात पर गर्व था कि वह एक ऐसे देश से संबंध रखते हैं जिसने संसदीय लोकतंत्र को अपनी राजनैतिक प्रणाली के रूप में अपनाया है। उनके लिए लोकतंत्र अपने राजनैतिक गुणार्थ तक ही सीमित नहीं था। यह प्रजातंत्र को प्रभावशाली बनाने का जीवन का रास्ता था ताकि प्रत्येक नागरिक को यह महसूस हो सके कि वह सरकार का एक अंग है और सरकार उसकी प्रतिनिधि है। उनकी राय थी कि सरकार को लोगों के निकट लाने के लिए यह आवश्यक है कि शक्तियों के विभाजन की संघीय प्रणाली को ग्राम स्तर तक ले जाया जाए। श्री अय्यंगर राजनैतिक शक्ति के विकेन्द्रीकरण के साथ-साथ आर्थिक शक्ति के विकेन्द्रीकरण में भी विश्वास रखते थे। वह इस बात से संतुष्ट थे कि भारत में लोकतांत्रिक संस्थाएं बहुत अच्छे ढंग से कार्य कर रही हैं। फिर भी वह राजनैतिक दलों के बीच दलबंदी संबंधी झगड़ों से असंतुष्ट थे जिसके क़ारण कुछ राज्यों में अस्थिरता पैदा हुई है। उन्होंने टिप्पणी की:[22]

> "विधान मंडलों में दलों के अंदर ही दलबंदी उत्पन्न हो गई है और सरकारों को अस्थिर बना रही है। सत्ता को प्राप्त करने या पुनः प्राप्त करने के लिए व्यक्तियों या दलों को सहायता देने के लिए किए जाने वाले जोड़-तोड़ द्वारा सरकार में परिवर्तन से लोग जल्दी ही ऊब सकते हैं। परिणामस्वरूप व्यक्तियों के दिमाग से सुरक्षा की भावना समाप्त हो सकती है। यदि सत्ता के लिए निरंतर लड़ाई होती रहती है, तो लोगों को तत्कालीन सरकार से कुछ नहीं प्राप्त होगा। दलबन्दी के कारण सत्ताधारी दल की बदनामी हो सकती है। इस स्थिति को सुधारने के लिए केवल एक यही उपाय है कि एक प्रथा होनी चाहिए कि जब एक बार कोई नेता चुन लिया जाता है, तो घोर दुराचरण की बात को छोड़कर उसे तब तक नहीं हटाया जाना चाहिए जब तक उसे निर्वाचित करने वाले दल का विधानमंडल में बहुमत रहता है। एकमात्र यह प्रथा विभिन्न राज्यों में सरकारों को स्थिरता प्रदान करेगी।"

प्रजातंत्र में प्रत्येक नागरिक को विमत टिप्पण देने और अपनी राय व्यक्त करने का

---

[22] तदेव

अधिकार होता है। श्री अय्यंगर प्रजातंत्र में विरोधी पक्ष की भूमिका से भलीभांति परिचित थे क्योंकि वह विभिन्न मामलों पर न केवल जनमत बनाता है बल्कि सत्ताधारी दल की गलतियों से भी बचाता है। प्रजातंत्र में विरोधी पक्ष के मजबूत होने के महत्व पर जोर देते हुए श्री अय्यंगर ने कहा:[23]

> "जहां तक संभव हो, सत्ताधारी दल को सभी आवश्यक मामलों पर विरोधी पक्ष को साथ लेकर चलना चाहिए। महत्वपूर्ण विषयों पर विभिन्न दलों के नेताओं के साथ व्यापक और स्वतंत्र सलाह मशविरा विवाद खत्म कर सकता है और विरोधी पक्ष के सदस्यों को यह महसूस करा सकता है कि देश के मामलों में उनका भी कुछ योगदान है। यह नहीं भूलना चाहिए कि विधानमंडल का प्रत्येक सदस्य, चाहे वह विरोधी पक्ष का है या सत्तारूढ़ दल का है, किसी भी मंत्री या सरकार के प्रमुख की तरह जनता का प्रतिनिधि होता है....जहां तक संभव हो सके सरकार को विरोधी पक्ष को साथ लेकर चलना चाहिए और विधानमंडल में सभी वर्गों के बीच व्यापक सहमति से सरकार चलाने का भरसक प्रयास किया जाना चाहिए। यदि संभव हो तो सर्वसम्मति से काम किया जाना चाहिए और साधारण बहुमत द्वारा किसी विधायी कार्य का निष्पादन एक अपवाद होना चाहिए।"

एक लोकतांत्रिक के रूप में श्री अय्यंगर शिकायतों को दूर करने के लिए हिंसा का पूर्ण रूप से विरोध करते थे। जैसा कि उन्होंने कहा था:[24]

> "हमने इस देश में प्रजातंत्रीय स्वतंत्रता प्राप्त की है...इस देश में हिंसा का रास्ता अप्राकृतिक है...इस देश में हिंसा को फैलाने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिये। क्या ऐसा इसलिये है कि भगवान बुद्ध इस देश में पैदा हुये थे? क्या इसलिए कि महात्मा गांधी ने इस देश में जन्म लिया था? हिंसा का रास्ता अपनाने के इस मूर्खतापूर्ण उपाय को समाप्त किया जाना चाहिये।"

भिन्न-भिन्न धर्मों के व्यक्तियों में धार्मिक सद्भावना फैलाने के स्थान पर धर्म के माध्यम से घृणा और गलत फहमियां फैलाने के लिये धर्म का उपयोग करने वाले लोगों

---

[23] तदेव

[24] संसदीय वाद-विवाद, 4 अगस्त, 1952, खण्ड-4, 1952, कॉ० 5325

से श्री अय्यंगर अत्यंत दुखी थे। इस संबंध में अपने विचारों को व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा:[25]

> ".....धर्म ने विश्व में अपनी भूमिका निभाई है। जिस समय देश में अराजकता फैली हुई थी उस समय इन अराजक तत्वों को एक जुट करने का पुनीत कार्य इन प्राचीन धर्माचार्यों ने किया है। धर्मों को जिन मूल भावनाओं से आरंभ किया गया था उसका उद्देश्य एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति के बीच भेद को समाप्त करना और उसमें भ्रातृभाव का संचार करके उसे देवतुल्य बनाना था, लेकिन आज वे ही धर्म दुर्भाग्य से अपने बाह्य रूप के प्रतीक रह गए हैं और अन्तर्निहित भाव लुप्त हो गए हैं तथा वे धर्म ही समाज के विक्षोभकारी तत्व बन रहे हैं। अतः हमें मानवता की भलाई के लिये नए चिरस्थायी और चिरकालिक तत्वों की खोज करनी होगी। धर्म की शिक्षा लेने वाले विद्यार्थियों को आज राष्ट्रवाद अन्तर्राष्ट्रीयवाद की बातें नहीं करनी चाहिये और व्यक्तियों और अराजकता फैलाने वाले धर्मों के स्थान पर समूची मानवता की भलाई की बातें करनी चाहिये। मैं चाहता हूं कि उन सभी व्यक्तियों को, जो वस्तुतः अपने-अपने धर्मों—इस्लाम, ईसाई अथवा हिन्दुत्व की बातें करते हैं, उन्हें इस्लाम, ईसाई और हिन्दू धर्म की सच्ची भावना को आत्मसात करना चाहिये। यहां तक कि इन धर्माचार्यों ने भी अपने-अपने अनुयायियों और मानव समाज के समस्त प्राणियों को समन्वित करने का उपदेश दिया है और उन्हें पृथ्वी पर शान्ति और खुशी लाने और ऐसे भेद पैदा न करने का उपदेश दिया है, जिनसे ईश्वर में विश्वास अथवा उसके आदेशों पर चलने में बाधा आती हो।"

श्री एम० ए० अय्यंगर, साम्प्रदायिकता और पंथवाद की बुराईयों से भी अवगत थे, क्योंकि इनसे देश पिछड़ जाता है। लोगों को इससे सतर्क करते हुए उन्होंने निम्नलिखित टिप्पणी[26] की थी:—

> "साम्प्रदायिकता और सम्प्रदायवाद भी अनेकों राज्यों में अशान्ति फैलाने वाली शक्ति है...। बहुत से भागों में लोगों में पुनः पुरानी जातियों और सम्प्रदायों में बंटने की प्रवृति दिखाई दे रही है और इनसे सार्वजनिक और राजनैतिक जीवन में बटवारा हो रहा है। यह एक खतरनाक स्थिति है और इससे बचा जाना चाहिये।"

---

[25] विधान सभा वाद-विवाद, खण्ड-7, 31 अक्तूबर, 1946, पृ० 333-34

[26] "लोकतंत्र के सामने आने वाले संकटः उसके कारण और उपचार", उद्धृत कृति

श्री अय्यंगर का दृढ़ विश्वास था कि लोगों को सरकार के साथ सौदेबाजी करके बिक जाने की बजाय त्याग और सार्वजनिक भावना से कार्य करना चाहिये। सार्वजनिक सेवा में व्याप्त स्थिति पर अपना दुख व्यक्त करते हुए, उन्होंने निम्नलिखित कहा:[27]

> "हम देश में लोगों को खरीद रहे हैं और इस तरह से पूरे देश को अनैतिक बना रहे हैं। हम लोगों की सेवा की कीमत पैसों से आंकते हैं...। मैं नहीं चाहता कि आम जनता सरकार से सौदेबाजी करके अपने को बेंच दे । शीर्षस्थ लोगों को त्याग और सार्वजनिक भावना से कार्य करना चाहिए।"

श्री अनन्तशयनम अय्यंगर ईमानदारी और सत्यनिष्ठा जैसे सद्गुणों की प्रतिमूर्ति थे। वह सरकार अथवा इसके अधिकारियों में व्याप्त भ्रष्टाचार के कटु आलोचक थे क्योंकि इससे पूरी व्यवस्था के कार्यकरण पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। उन्होंने कहा:[28]

> "सरकार की स्थिति ऐसी होनी चाहिए कि उस पर संदेह न किया जा सके। किसी भी प्रकार के भ्रष्टाचार से मनोबल गिर जाता है और शासन की लोकप्रियता के प्रति सम्मान नहीं रहता है। यदि प्रशासन में भ्रष्टाचार व्याप्त हो जाता है तो जनता का सरकार से विश्वास उठ जाता है और यदि यह भ्रष्टाचार सरकार में फैल जाता है तो विद्रोह पैदा हो जाता है....। इसलिए, भ्रष्टाचार के सभी आरोपों की जांच पूरी सावधानी से की जानी चाहिए। सरकार को न केवल भ्रष्टाचार से मुक्त होना चाहिए, अपितु ऐसा दिखाई भी दे कि उसमें भ्रष्टाचार नहीं है।"

शांति और विश्व संघीय सरकार के समर्थक

श्री अय्यंगर ने राज्य की सीमाओं तक सीमित न रह कर विश्व की पारस्परिक निर्भरता के बढ़ते हुए महत्व को भी भलीभांति समझा, जिसमें किसी देश को अकेला नहीं छोड़ा जा सकता अथवा अकेला रहना उसके बूते से बाहर है। उनके विचार से अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा का अनुपालन और अंतर्राष्ट्रीय सहयोग और मैत्रीभाव को प्रोत्साहन मानवता के उज्ज्वल भविष्य के आधार हैं। इसलिए उन्होंने यह अनुभव किया कि किसी भी देश की विदेश नीति का उद्देश्य विश्व के सभी राष्ट्रों की शांति और सुरक्षा होना चाहिए। श्री अय्यंगर दोनों महाशक्तियों, सोवियत संघ और अमरीका के बीच शीत युद्ध के प्रति

---

27 संसदीय वाद-विवाद, खंड ग्यारह, 4 मई 1941, कालम 8084

28 "लोकतंत्र के सामने आने वाले संकट उसके कारण और उपचार", उद्धृत कृति

अत्याधिक चिंतित थे। वह विश्व में स्थायी शांति और सुरक्षा स्थापित करने के लिए ठोस कदम उठाने के पक्षधर थे। उन्होंने कहा:[29]

> ....पूंजीवादी लोकतंत्र साम्यवाद पर साम्राज्यवादी दृष्टिकोण और विस्तारवादी नीति अपनाने का आरोप लगाता है। दूसरी तरफ साम्यवादी कहते हैं कि साम्राज्यवाद तो लोकतंत्र में है और पूंजीवाद दुनिया को गर्त में ले जाएगा। उनमें से प्रत्येक एक दूसरे से भयभीत है। इस तरह का भय समाप्त किया जाना चाहिए। विश्व इतना व्यापक है कि इन दोनों विचारधाराओं को समायोजित कर सकता है और इन दोनों विचारधाराओं का शांतिपूर्वक साथ-साथ प्रयोग किया जा सकता है। अतः मेरा सुझाव है कि इस तरह का भय दूर किया जाना चाहिए और एक दूसरे के प्रति संदेह दूर हो जाना चाहिए। उसके बाद एक दूसरे को परमाणु बम को हथियार के रूप में प्रयोग से हमेशा बचने के लिए कहा जाना चाहिए। तत्पश्चात् निरस्त्रीकरण की प्रक्रिया होनी चाहिए। संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रत्येक देश को निरस्त्रीकरण और अपने भू भाग के अंतर्गत शांति और सुरक्षा बनाए रखने के अथवा पुलिस की दृष्टि से पर्याप्त बल रखने के लिए आग्रह किया जाना चाहिए।

श्री अय्यंगर ने संयुक्त राष्ट्र संघ को मजबूत बनाने की आवश्यकता पर अत्यधिक बल दिया था ताकि युद्ध की संभावना को टाला जा सके। इसलिए उन्होंने टिप्पणी की:[30]

> ....मानव जीवन के आरंभ से किसी भी युद्ध को युद्ध के द्वारा पूरी तरह समाप्त नहीं किया जा सकता है। इसके लिए अन्य उपाय निकालने होंगे। मेरे विचार से एकमात्र तरीका यह है कि विश्व संघीय सरकार और विश्व व्यवस्था की स्थापना की दृष्टि से अंततः संयुक्त राष्ट्र संघ को मजबूत बनाया जाना चाहिए। यही एक आदर्श तरीका है और जब तक इस प्रकार की सरकार की स्थापना नहीं होती तब तक विश्व में न तो शांति कायम होगी और न ही सुरक्षा।

उनके निधन पर श्रद्धांजलि

अध्यक्ष अय्यंगर एक अनुभवी संसद्विद् थे और उन्हें संसदीय जीवन की गहरी जानकारी और व्यापक अनुभव थे। उनकी मृत्यु 19 मार्च, 1978 को 87 वर्ष की आयु में हुई। उनकी स्मृति में संसद की दोनों सभाओं के सभी दलों और ग्रुपों के नेताओं ने

---

[29]संसदीय वाद-विवाद, खण्ड-छह भाग दो, 7 दिसंबर 1950, कॉ॰ 3120-21

[30]तदेव, कालम 1321

अत्यंत मार्मिक शब्दों में उन्हें श्रद्धांजलि दी। श्री अय्यंगर के निधन पर अपना दुःख व्यक्त करते हुए, तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री मोरारजी देसाई ने कहा:[31]

> ...उनका व्यक्तित्व बहुआयामी था। वे स्वतंत्र विचारों वाले व्यक्ति थे और उनकी अभिव्यक्ति भी वे अपने ढंग से करते थे। उन्होंने विभिन्न तरीकों से देश की सेवा की। उन्होंने असहयोग आंदोलन में भाग लिया और वे संसद, इसकी प्रक्रियाओं और लोकतंत्र के प्रति पूरी तरह से समर्पित थे। उनकी मृत्यु से देश ने एक महान देशभक्त खो दिया है।

अपना शोक संदेश व्यक्त करते हुए विपक्ष के नेता श्री यशवन्तराव बलवन्तराव चव्हाण ने कहा था कि:

> श्री अय्यंगर एक विशिष्ट विद्वान थे और संसदीय वाद-विवादों में अत्यंत निपुण व्यक्ति थे। उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम के दौरान महान सेवाएं की। वे अपने अंतिम दिनों तक सक्रिय रहे तथा सदैव देश की समस्याओं के बारे में सोचते रहे और वे अपने विचारों में स्पष्ट थे। उनकी मृत्यु से संसद और देश को महान क्षति हुई है।

श्री अय्यंगर ने वस्तुतः अपने महान गुणों के कारण ही भारत के इतिहास में एक महान सांसद, स्वतंत्रता सेनानी और राजनेता के रूप में स्थान बना लिया था। उन्होंने राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर समस्याओं के समाधान के लिए तथा सूझ-बूझ विकसित करने हेतु एक यथार्थ और कारगर आधार तैयार किया।

---

[31] लोक सभा वाद-विवाद, खण्ड ग्यारह, 20 मार्च 1978, कॉ० 1-7

भाग—दो

उनके विचार

श्री अय्यंगर द्वारा सेंट्रल लेजिस्लेटिव एसेम्बली, संविधान-सभा (विधायी), अन्तरिम संसद् और प्रथम लोक सभा में दिये गये भाषणों से उद्धरण।

2

आर्थिक और वित्तीय मामले

व्यापार मुनाफे पर कर*

इन उद्योगपतियों द्वारा देश के औद्योगिकीकरण में मैं विश्वास नहीं रखता। मैं समझता हूं कि इस देश का उद्धार समाजवादी सरकार से ही हो सकता है। मात्र वही देश का औद्योगिकीकरण कर सकती है। समृद्ध व्यक्ति कर देना नहीं चाहते और निर्धन दे नहीं सकते। तो फिर पैसा किससे लिया जाये? आईये देखते हैं उद्योगपति देश में उद्योगों को कहां तक ले गये हैं। आयकर अधिनियम में अनुसंधानों के लिये प्रावधान करने हेतु गत वर्ष से पूर्व वर्ष एक खण्ड पुरःस्थापित किया गया था। इनमें से कितने उद्योगपतियों ने अपने ही उद्देश्यों हेतु शोध प्रयोगशालायें स्थापित की हैं? मुझे अफसोस है कि हमारे उद्योगपति बनियों की तरह हैं, आसानी से पैसा कमाना चाहते हैं, अपने नये उद्योग नहीं लगाते।

वे उद्योगों का विस्तार नहीं करना चाहते। उन्होंने देश के प्रत्येक कोने में उद्योग धन्धे स्थापित नहीं किये हैं। अमरीका के हेनरी फोर्ड का उदाहरण लीजिये। प्रारम्भ में वह एक साधारण व्यक्ति थे। उन्होंने अपनी बुद्धि से काम लिया और बहुत से इंजिनियरों को काम पर रखा और अन्ततः वह अमरीका के एक करोड़पति व्यक्ति बन गये। हमारे यहां लोग निर्धन व्यक्तियों को काम पर रख पैसा कमा कर समृद्ध बनते हैं। अतः मैं नहीं समझता कि ये लोग देश में उद्योगों का विस्तार कर सकते हैं। यह कार्य सरकार को ही करना चाहिये। समृद्ध व्यक्तियों के संसाधनों का उपयोग करने में मैं निश्चय ही सरकार का साथ दूंगा परन्तु सरकार के पास देश में औद्योगिकीकरण की योजना नहीं है। आज सुबह माननीय फाइनेन्स मेम्बर (वित्त मंत्री) ने अपने उत्तर में उनके पास उपलब्ध योजना का **उल्लेख किया था परन्तु वास्तव में उनके पास कोई योजना नहीं है। निस्संदेह ही उनके पास जो विभाग हैं, पूंजी निवेश (केपिटल इश्यूज़ के लिये कुछ आवेदन इसी के माध्यम से**

---

* व्यापार मुनाफा कर विधेयक, 1947 पर वाद-विवाद में भाग लेते हुये, विधान सभा वाद-विवाद, 31 मार्च 1947, खण्ड चार, पृष्ठ 2770-71, 2792-93, 1 अप्रैल, 1947, 2822-2844।

जाते हैं परन्तु उनके पास कटौती योजना नहीं है जिसके द्वारा वह देश में सभी प्रकार का सामान बनाने के लिये उद्योगों को संगठित कर सकें। उनके पास ऐसी कोई योजना नहीं है। हमारे समक्ष कभी भी कोई योजना नहीं रखी गयी। अतः मेरा सुझाव यह है कि इस कराधान से प्राप्त पैसे को कोष के रूप में एकत्र कर रखें न कि इसे बरबाद करें। हम जानते हैं कि हमारे यहां अनेकों आरक्षित राजस्व कोष थे। सर जेम्स ग्रिग ने फाइनेन्स मेम्बर (वित्त मंत्री) के पद पर रहते समय राजस्व में कमी के पूर्वाभास को देखते हुये आरक्षित राजस्व कोष बनाया था। मैं कहूंगा कि इस धन से उद्योग संबंधी कोष भी बनाया जाये। उनके पास जितना भी पैसा है उसे एकत्र किया जाये और जब कभी भी आवश्यकता हो और मंदी आने का खतरा हो, उस समय इस पैसे को खर्च किया जा सकता है और उद्योग-धन्धे शुरू किये जा सकते हैं। सम्मानीय फाइनेन्स मेम्बर ने अत्यधिक कृतज्ञता और दयालुतापूर्वक 111 करोड़ रु० का जो चंदा दिया है मैं उससे सहमत नहीं हूं। ज्यादा अच्छा होता यदि वह देश में मुद्रा के परिचालन को रोक कर मुद्रास्फीति को कम करते। आपने फिर से पैसा देकर सभी प्रकार की समस्यायें उत्पन्न कर दी हैं। यह एक अच्छा सुझाव हो सकता है कि उन्होंने जो पैसा दिया है उसे वापस ले लें और इसका प्रभाव देखें। सड़क निर्माण और अन्य कार्य बाद में भी किये जा सकते हैं। बहुत से उद्योग मंदी समाप्त होने के पश्चात ही प्रारम्भ किये जा सकते हैं। इस समय कोई तत्काल आवश्यकता नहीं है। बजट में फाइनेन्स मेम्बर ने विभिन्न योजनाएं आरम्भ करने लिये प्रान्तीय सरकारों को विभिन्न प्रकार की आर्थिक-सहायता और रियायतें देने की पेशकश तथा कई कार्यों के लिये प्रावधान किया है। ये सभी औद्योगिक योजनाएं नहीं हैं और न ही मात्र देश में सम्पदा को बढ़ाने या बनाने के उद्देश्य से ही हैं। मुझे माननीय मित्र सर कोवसजी जहांगीर से कोई सहानुभूति नहीं है वह समझते हैं कि यदि एक पैसा भी उनसे मांग लिया गया तो वह बर्बाद हो जायेंगे। लेकिन वास्तव में ऐसी बात नहीं है। उनकी स्थिति एक हाथी के समान है अगर वह बैठ जाता है तो उसकी स्थिति चींटी अथवा बिल्ली की नहीं हो जाती। वह तब भी घोड़े के आकार का होता है। अतः उन्हें सातवीं मंजिल से पहली मंजिल पर आना होगा उन्हें धन का बन्दोबस्त करना होगा। मैं माननीय मेम्बर से आग्रह करूंगा कि इन व्यक्तियों से जितना पैसा आप ले सकते हैं लीजिये। युद्ध के दौरान उन्होंने देश की समुचित सेवा नहीं की। निसंदेह ही ई०पी०टी० मौजूद था परन्तु पूर्व फाइनेन्स मेम्बर ने उदारतावश इस कर को हटा दिया। ताकि उद्योगपति उपभोक्ताओं के हितों की हिफाजत करें। परन्तु उन्होंने उपभोक्ता वस्तुओं की कीमतों में कमी नहीं की। क्या वे मजदूरों की स्थिति में सुधार लाये? क्या उन्होंने मजदूरों को ज्यादा मजदूरी दी?

इन सभी का उत्तर है, नहीं। क्या उन्होंने नये उद्योग लगाये? उन्होंने देश का सर्वनाश कर दिया? देश के सामने कौन सी योजनाएं हैं? हमारे उद्योगपति हमारी देशभक्ति की भावना को प्रभावित करते हैं। वे मानते हैं कि वे ही देश का उद्धार कर सकते हैं। उनका कहना है कि वे देश का औद्योगिकीकरण कर रहे हैं अन्यथा हम अन्य देशों की तुलना नहीं कर सकते हैं। मैं मात्र औद्योगिकीकरण चाहता हूं। परन्तु उन्होंने इस दिशा में कुछ नहीं किया है। खेद की बात है कि सरकार भी लड़खड़ा रही है...। कुछ बैंकों की विफलता का जिक्र किया गया था। ई०पी०टी० के अंतर्गत बैंक भी देनदार थे। बीमा कम्पनी मुनाफा ई०पी०टी० के अंतर्गत नहीं आता था। बी०पी०टी० के अंतर्गत बैंकों को ही इतनी दिक्कतों का सामना क्यों करना पड़ता है? ई०पी०टी० अधिनियम के अंतर्गत आठ या दस प्रतिशत मुनाफे की राशि हेतु कटौती करने की अनुमति दी गई थी। इस विधेयक में आठ प्रतिशत को कम करके पांच प्रतिशत कर दिया गया है। मेरे मित्रों ने कहा है कि लोग बैंकों की ओर जा रहे हैं। वैसे ये कांग्रेस बैंक नहीं हैं। बैंकों में कांग्रेस और गैर-कांग्रेसी वाली कोई बात नहीं है। जब प्रतिभूतियों में गिरावट आती है तब निस्संदेह ही तहलका मच जाता है और लोग बैंकों की ओर दौड़ते हैं। प्रतिभूतियों की कीमतें भी गिर जाती हैं यदि मुनाफा राशि को कम कर दिया जाये और ऐसा उद्योग व्यवसायों को व्यापार लाभ कर के क्षेत्राधिकार में लाने से हुआ है; इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि यह विधेयक बैंकों और औद्योगिक व्यवसायों पर लागू नहीं होना चाहिये। तो अब विधेयक में क्या शेष है? प्रारम्भ में शायद लोग विधेयक के महत्व को नहीं समझ पायें और इसके प्रति आशंकित भी हो सकते हैं। बैंकों में जाने के कुछ और भी कारण हो सकते हैं चूंकि मात्र बैंक ही अन्य व्यवसायों के साथ इस विधेयक के अंतर्गत प्रभावित होते हैं। वे इस घटना के लिये भ्रमवश फाइनेन्स मेम्बर को दोषी ठहराते हैं। बैंकों की विफलता और प्रतिभूतियों में गिरावट के संबंध में मैंने अपने मित्रों के तर्कों को ध्यानपूर्वक सुना है। माननीय मेम्बर को यह कहकर हंगामा नहीं खड़ा करना चाहिये था कि कोई अन्य फाइनेन्स मेम्बर अगले वर्ष इस कर का नवीनीकरण करेगा। उन्हें यही बताना चाहिये कि उनके इरादे क्या हैं? इससे हर प्रकार की शंकायें दूर होंगी। मेरे निर्वाचन-क्षेत्र में पांच जिले आते हैं। वह हमेशा से ही अकालग्रस्त हैं। मेरी उद्योग और आपूर्ति मेम्बर से अपील है कि वहां कुछ कताई-मिलें (स्पिनिंग मिलें) स्थापित करवायें। वहां कपास होता है। परन्तु इंडस्ट्री मेम्बर ने मिलों को लगाने का कार्य प्रांतीय सरकारों पर छोड़ दिया है। मैं फाइनेन्स मेम्बर से कहूंगा कि वह व्यापार मुनाफा कर में से कुछ धन मुहैया करायें ताकि प्रांतीय सरकार मेरे इलाके में कताई मिलें लगा सकें। अतः मैं कहूंगा कि इस कर से प्राप्त सारे धन को प्रांतीय सरकारों द्वारा चलाई जा रही अनुपयोगी योजनाओं पर बर्बाद न करके निधिबद्ध बनाया जाये।

यह सच नहीं है कि युद्ध पश्चात के प्रभाव समाप्त हो गये हैं। क्या युद्ध के समय में आपको घाटा नहीं हुआ है? अभी भी हम समायोजन करने में लगे हुए हैं। छंटनी करने संबंधी एक संकल्प ऐसेम्बली में आ रहा है। सम्मानीय फाइनेन्स मेम्बर खर्च में किफायत के विभिन्न तरीकों को खोज सकते हैं। वह 52 करोड़ रुपये की आयकर बकाया राशि को भी इकट्ठा कर सकते हैं। उधार लेने में कोई आपत्ति नहीं है। सर कोवसजी जहांगीर स्वयं अपना और मेरा पैसा भी देंगे। उन्हें तो पूरे देश की उधार राशि का भी भुगतान करना चाहिये क्योंकि वह गरीबों के पैसों पर कर लगाते हैं। फाइनेन्स मेम्बर को अपनी जेब से पैसा नहीं देना है। मुझे प्रसन्नता है कि समझौता हो गया है और मतदान लॉबी में भाग लेने के लिये हवाई जहाज से मुझे यहां आने की आवश्यकता नहीं थी। उन्हें ये सोचने की आवश्यकता नहीं है कि इस कर से उन्हें मात्र 12 करोड़ रुपये ही मिलेंगे। निश्चित ही उन्हें इससे ज्यादा राशि मिलेगी। यह एक वर्ष के लिये परीक्षण के रूप में किया है। अगर तब भी घाटा बना रहता है तो अगली बार हम इसे पूरा कर सकते हैं। सर कोवसजी जहांगीर जैसे उद्योगपति देश छोड़ कर तो चले नहीं जायेंगे, हम उन्हें पकड़ सकते हैं। इस समझौते पर पहुंचने के लिये सारा श्रेय फाइनेन्स मेम्बर को जाता है।

विधेयक की कुछ विशेषताएं अच्छी हैं। ई॰पी॰टी॰ में स्वयं की कुशलता/दक्षता से की गई आमदनी पर प्रत्येक को छूट है परन्तु बी॰पी॰टी॰ छूट नहीं देता है। मद्रास के एक वकील ने शिकायत की है कि व्यापार मुनाफा कर के अंतर्गत एक रु॰ की आमदनी में से केवल आधा आना ही उसे मिलेगा। 1,75,000 रु॰ की आय में से उसे कर देने के पश्चात् एक लाख रु॰ के लगभग मिलेगा। मुझे विश्वास है कि वकीलों को अपनी वकालत का थोड़ा सा हिस्सा देने पर घबराना नहीं चाहिये। कुछ कनिष्ठ कर्मचारियों को भी पैसा देना चाहिये। यहां तक तो फाइनेन्स मेम्बर ने अच्छा कार्य किया है। उन्होंने विभिन्न लोगों में काम को विभाजित करने की कोशिश की है। मैं उन व्यक्तियों के लिये आंसू नहीं बहाऊंगा जिनकी आमदनी एक लाख रुपये से अधिक है मैं नहीं समझता कि उद्योग कैसे प्रभावित होंगे। इसके लिये बहुत कुछ कहा जा रहा है। मैं समझता हूं कि जरूरत से ज्यादा कहा जा रहा है। यदि फाइनेन्स मेम्बर के असिस्टेंट भारतीय होते तो मैं उनकी बात बिना किसी आपत्ति के स्वीकार कर लेता। ऐसा नहीं है कि मैं इस विधेयक के निर्माता सर सिरिल जोन्स को पसन्द नहीं करता परन्तु मुझे अपने देशवासियों में ज्यादा विश्वास है। यदि हमारे देश की वित्त व्यवस्था शुरू से भारतीय के हाथ में रहती और यदि वित्त अधिकारी सर कोवसजी जहांगीर श्री बडीलाल लालूभाई को आमंत्रित करते और उन्हें आश्वस्त करते कि इस कर को लगाने से उद्योग प्रभावित नहीं होंगे और तब भी अगर वे अड़े रहते तो मैं फाइनेन्स मेम्बर को इन व्यक्तियों की आलोचना की परवाह न करते हुये इस प्रस्ताव पर अमल करने की बात कहता। मैं

आशा करता हूं कि फाइनेन्स मेम्बर अपने विभाग में एक अंग्रेज की बजाय भारतीय को नियुक्त करने पर पुनः विचार करेंगे। हमारे द्वारा उठाई जा रही आपत्तियों को वह इस प्रकार से नजरअन्दाज नहीं कर सकते।

महोदय, कल आदरणीय फाइनेन्स मेम्बर ने सुझाये गये संशोधनों को स्वीकार करते हुये कहा था कि जो समझौता उपाय उभर कर सामने आया है उसको लागू करने पर उन्हें 30 करोड़ रुपये, जिसकी मूल विधेयक* के अन्तर्गत अपेक्षा की गई थी, की तुलना में केवल 12 करोड़ रुपये का राजस्व ही प्राप्त होगा। मुझे आश्चर्य है कि जब यह सुझाव दिया गया था कि अधिक लाभ कर अधिनियम को इस वर्ष भी जारी रखा जाए तो उन्होंने इस सुझाव को बिल्कुल भी स्वीकार नहीं किया था। अधिक लाभ कर से निश्चित ही 30 करोड़ रुपये प्रापत होंगे, जिसकी आदरणीय मेम्बर महोदय ने अपेक्षा की है। मैंने देखा था कि वह सुझाव के विरुद्ध स्पष्ट रूप से अपने सिर को हिला रहे थे और मेरे द्वारा दिये गये वक्तव्य की वास्तविकता पर विवाद कर रहे थे। अतः मैं चाहता हूं कि आदरणीय मेम्बर उस धन राशि का हमें ब्यौरा दें, जिसे पूर्व वर्षों में अधिक लाभ कर अधिनियम के लागू रहते हुये प्राप्त किया गया है। आदरणीय मेम्बर के पूर्वाधिकार सर आर्किबाल्ड रॉलैण्ड्स अधिक लाभ कर को समाप्त करना चाहते थे। हमने इसको असमय ही समाप्त किए जाने पर आपत्ति व्यक्त की थी। हम चाहते हैं कि इसे इस वर्ष भी जारी रखा जाए। इसके अलावा, समृद्ध उद्योगपति भी अधिक लाभ कर को जारी रखने के पक्ष में नहीं है, यदि उससे उद्योग विकास में कोई रुकावट न आये। लेकिन अब मैं देखता हूं कि उद्योगपति स्वयं व्यापार मुनाफे पर कर की अपेक्षा अधिक लाभ कर को प्राथमिकता देंगे। अब जबकि वो चाहते हैं कि इसे जारी रखा जाए तो हम इसके इच्छुक नहीं हैं और जब हम चाहते थे कि इसे जारी रखा जाए, तो उन्होंने इसका विरोध किया था। यह एक विचित्र परिस्थिति है। हम अधिक लाभ कर को पिछले वर्ष समाप्त करना नहीं चाहते थे। यदि इसे जारी रखा जाता है तो मैं नहीं समझता कि यह विधेयक अर्थात व्यापार मुनाफे पर कर विधेयक को लाया जाता अथवा इसके लिए विचार किया जाता अथवा नहीं। हम चाहते हैं कि इसे जारी रखा जाए। अब जबकि इसको जारी रखने की बात स्वयं उद्योगपतियों द्वारा स्वीकार कर ली गयी है तो हम अपनी बात से पीछे हटना चाहते हैं और एक अन्य विधेयक लाये हैं। यह बहुत ही विचित्र बात है। पता नहीं लोग इतना शीघ्र अपना विचार क्यों बदल देते हैं। यद्यपि आदरणीय फाइनेंस मेम्बर पिछले वर्ष भी हमारे सम्मुख बैठते थे लेकिन उनकी जो हैसियत अब है वह तब नहीं थी। मैं इस संबंध में एक स्पष्टीकरण चाहता हूं कि उन्होंने इस प्रकार का सुझाव क्यों दिया है कि अधिक लाभ

---

*लेजिस्लेटिव एसेम्बली डिबेट्स, 1 अप्रैल, 1947 खण्ड चार, 1947, पृ॰ 2792-2793.

कर को जारी रखा जाए। यह सत्य है कि कुछ मामलों में अधिक लाभ कर से अधिक समृद्ध व्यापारियों का ही अधिक हित होता है और यह निर्धनतम वर्ग के हितों में नहीं है। यदि ऐसा है तो अधिक लाभ कर का उपयुक्त ढंग से संशोधन किया जाए ताकि निर्धनतम वर्ग के लिए भी एक लाख रुपये तक की छूट दी जा सके। इसे आसानी से किया जा सकता है। मैं एक प्रश्न का उत्तर चाहता हूं कि उन्होंने अधिक लाभ कर को वरीयता क्यों नहीं दी, जिससे उन्हें निश्चय ही राजकोष के लिये अधिक राजस्व की प्राप्ति होती, जिसे उद्योगपतियों द्वारा भी स्वीकार किया जाता और कुछ संशोधन अथवा उपयुक्त संशोधन किये जाते तो छोटे व्यापारी भी, जिन्होंने अपना व्यापार 1936 के पश्चात् प्रारम्भ किया है इससे संतुष्ट होते। उन्हें भी वह लाभ प्राप्त होता जो व्यापार मुनाफे पर कर अधिनियम के अन्तर्गत प्रदत्त किया जा रहा है।

एक अन्य मुद्दा है जिसके दृष्टिकोण से भी इस विधेयक को देखा जा सकता है। यदि अधिक लाभ कर को जारी रखा जाता तो वर्तमान विधेयक में जो संशोधन किये गये हैं, उनसे बचा जा सकता था। वर्तमान अधिनियम के अन्तर्गत पूंजी में उधार ली गई पूंजी शामिल है। उधार ली गई पूंजी पर दी जाने वाली ब्याज की राशि को छोड़कर उससे अधिक राशि की कटौती के रूप में वर्तमान विधेयक के अन्तर्गत जो अनुमति है, मैं नहीं समझता हूं कि उधार ली गई पूंजी को पूंजी के रूप में शामिल किया गया है, जैसा कि अधिक लाभ कर अधिनियम में व्यवस्था है। उद्योगपति स्वयं भी अधिक व्यय कर को जारी रखने के पक्ष में हैं न कि व्यापार मुनाफे पर कर अधिनियम को संशोधनों सहित पुरःस्थापित किये जाने के पक्ष में।

जब इस वित्त विधेयक पर चर्चा हो रही थी तब मैं यहां पर उपस्थित नहीं था मैंने अपने निर्वाचन क्षेत्र से समाचार पत्रों के माध्यम से यह जानकारी प्राप्त की थी कि आदरणीय सदस्य ने एक निर्धन व्यक्ति वाला बजट प्रस्तुत किया है और यदि वास्तव में यह बात सही है, तो मुझे विधेयक की एक विशेषता के बारे में आश्चर्य है। आदरणीय सदस्य अपने इस विधेयक द्वारा संयुक्त हिन्दू परिवार के पक्ष में छूट की सीमा को एक लाख रुपये से बढ़ाकर दो लाख रुपये किये जाने हेतु सहमत हुए हैं। मैं नहीं समझता कि एक संयुक्त हिन्दू परिवार, जिसकी वार्षिक आमदनी एक लाख रुपये है, उसे इस प्रकार की सहायता अथवा समर्थन की कोई आवश्यकता है, लेकिन उन्हें सामान्य आयकर अधिनियम के अन्तर्गत कुछ करना चाहिए था। उन्हें न्यूनतम आय सीमा को 2500 रुपये से बढ़ाकर 5,000 रुपये करना चाहिए था। जहां तक व्यापार मुनाफे पर कर अधिनियम का सम्बन्ध है, यदि उन्होंने यह किया होता तो हमारे साथियों द्वारा आय सीमा को एक लाख रुपये से बढ़ाकर दो लाख रुपये किये जाने के लिए दबाव नहीं डाला जाता। वह वहां से प्राप्त करना चाहते हैं जहां से उन्हें नहीं करना चाहिए और वह वहां के लिए निष्ठुर

हैं जहां पर उन्हें नहीं होना चाहिए। मैं इस विधेयक के लिए जो हमारे सम्मुख लाया गया है। आदरणीय सदस्य को बधाई नहीं दे सकता। फिर भी, हम सभी को प्रसन्नता व्यक्त करनी चाहिए कि ऐसा एक समझौता हुआ है और हम बिना किसी कठिनाई के शांति के साथ उसे वहन करने का प्रयास कर रहे हैं।

* * * *

महोदय, विश्व के इतिहास में सभी युद्ध महिलाओं के कहने पर हुए हैं, और मुझे पूरा विश्वास है कि हमारी आदरणीय महिला मित्र मिस मनी बेन कारा के कहने पर उद्योगपतियों के साथ निष्ठुरता से युद्ध किया जायेगा। उनका यह विचार है कि विधेयक के तीसरे वाचन पर इस पक्ष के लोग अचानक समाजवादी हो गये हैं और यद्यपि उन्हें अपने विचार प्रस्तुत करने का अवसर प्राप्त हुआ था, लेकिन फिर भी उन्होंने ऐसा नहीं किया है। मैं अपनी आदरणीय महिला मित्र को यह स्मरण कराना चाहता हूं कि इस दिशा में अनेक कदम उठाये गये हैं। यह केवल आज सुबह की ही बात है जबकि हमने यह पूछताछ की कि क्या सभी प्रकार का बीमा अर्थात् अग्नि बीमा, जीवन बीमा और अन्य प्रकार के बीमाओं का राष्ट्रीयकरण नहीं किया जाएगा। आदरणीय कामर्स मेंम्बर ने बताया कि हमने इस मामले की जांच के लिए एक समिति नियुक्त कर दी है और वह शीघ्र ही यह पता लगायेगी कि क्या कदम उठाए जाने चाहिए। हमने ऐसा अन्य विभागों के मामलों में भी देखा है जहां तक वायु मार्गों का सम्बन्ध है हमने आदरणीय मेंम्बर से प्रार्थना की थी और एक संकल्प भी पारित किया था। उन्होंने कहा कि हम इस पर विचार करने के लिए समय लेंगे कि किस प्रकार के राष्ट्रीय यातायात अर्थात राजमार्गों अथवा उपमार्गों का कार्य तुरन्त प्रारंभ किया जाना चाहिए। समग्र तंत्र का किस प्रकार उपयोग किया जाये, क्या सभी को एक साथ अथवा थोड़ा-थोड़ा करके उद्योग के अन्य रूपों के बारे में भी उपाय किये जा रहे हैं। बैंकिंग को ही लीजिए। रिजर्व बैंक के बारे में फाइनेंस मेम्बर ने पहले ही एक आश्वासन दिया है और मुझे विश्वास है कि इस बैंक के राष्ट्रीयकरण हेतु एक विधेयक पुरःस्थापित किया गया है। मैं यह नहीं जानता कि आदरणीय महिला मित्र मिस कारा हमें कितनी गति से आगे बढ़ाना चाहती है।

* * * *

हम अपने लाभ के साधनों को एक साथ ही समाप्त कर देना नहीं चाहते हैं। हम किसी भी समय उनकी पूंजी प्राप्त कर सकते हैं। आज यदि सर कोवासजी जहांगीर, करों की अदायगी से बच भी जाते हैं तो वह उस धनराशि को लेकर कहां जाएंगे? वह इसे अरब सागर में नहीं डालेंगे। वह इसे अपने पास रखेंगे और अगले वर्ष जब हमें धन की आवश्यकता होगी तो हम निश्चित रूप से ही उनसे धनराशि प्राप्त कर लेंगे। लेकिन मेरी

आदरणीय महिला मित्र को इतनी जल्दी क्या है? इससे पहले कि मुझे यह जानकारी प्राप्त हो कि इस पर कितनी धनराशि खर्च करनी है, क्या मैं इस धनराशि को यूं ही खर्च कर दूं। महोदय, इससे मुझे एक छोटी कहानी याद आती है। मैं डिग्री प्राप्त करने के शीघ्र ही पश्चात् एक विद्यालय में एक अध्यापक के रूप में कार्य करने लगा। वहां पर एक विज्ञान के अध्यापक भी थे। अचानक और बिल्कुल ही अप्रत्याशित रूप से उसे सरकार से अपनी प्रयोगशाला और अन्य उपकरणों के प्रयोजन हेतु तीन अथवा चार हजार रुपये की अनुदान राशि प्राप्त हुई। उस बेचारे अध्यापक ने कोई योजना नहीं बनाई थी। इसलिए अपने आरियों और हथौड़ों और पेचकस आदि के 30 सैट खरीद लिए। मेरी आदरणीय महिला मित्र यदि वित्त सदस्य होती तो सर कोवासजी जहांगीर से सारी धनराशि प्राप्त कर लेती और उसे एक निर्धन व्यक्ति बना देती निसंदेह मुझे उससे कोई आपत्ति नहीं है क्योंकि सर कोवासजी एक निर्धन व्यक्ति रह सकते हैं, जैसे कि मैं एक निर्धन व्यक्ति हूं लेकिन कब तक? क्या उसे बिना किसी योजना के खर्च कर दिया जायेगा। इस पर मेरे माननीय मित्र श्री गाडगिल ने भी यही आपत्ति व्यक्त की है। आदरणीय फाइनेंस मेंम्बर के पास ऐसी कोई योजना नहीं है। उन्हें भली भांति इस पर विचार करना चाहिए कि कौन-कौन सी योजनाएं उचित हैं और कौन-कौन सी अनुचित हैं। वास्तव में, हमें अब तक की सबसे अधिक परिसम्पत्ति प्राप्त हुई है। हमने बहुत पहले रेलों का राष्ट्रीयकरण किया था, जो हमारी सबसे बड़ी राष्ट्रीय परिसम्पत्ति है। वहां पर शीर्ष स्तर पर हमारे सर्वोत्तम योग्य प्रशासक हैं, लेकिन फिर भी वह स्वयं को रेलों के समुचित कार्य संचालन में असमर्थ पाते हैं। वह एक छोटा सा कार्य करने में भी असमर्थ हैं। मद्रास तक 1,300 मील का सफर करने के लिए हमें 52 घंटे का समय लगता है। वह विभिन्न प्रशासकों के साथ अनुरूपता ला रहे हैं। मुझे संदेह है कि मेरी आदरणीय महिला मित्र को घर पर अथवा बाहर कोई जिम्मेदारियां नहीं हैं। इसलिए वह नहीं जानती हैं कि कार्य को व्यवहारिक रूप देना इतना आसान नहीं है।

* * * *

प्रत्येक विधेयक के संबंध में हम समय लेना चाहते हैं। मुझे प्रसन्नता है कि इस विषय पर शान्तिपूर्वक विस्तार से विचार किया गया है और फाइनेंस मेंम्बर ने दोनों ही पक्षों के विचार सुने हैं। वास्तव में मेरे आदरणीय मित्र यह नहीं चाहते कि हम फासिस्ट बनें। यह लोकतंत्र की निशानी है कि जैसे ही कोई विधेयक सदन में प्रस्तुत किया जाता है तो विभिन्न व्यक्ति, जो इच्छुक होते हैं वो आगे आते हैं और अपनी आपत्तियों अथवा सुझाव रखते हैं। क्या फाइनेंस मेंम्बर किसी ऐसे विधेयक के लिए जो उन्होंने प्रस्तुत किया है की पूर्णता अथवा पूर्णतः सफलता का दावा करते हैं? वह एक तरफा सोचते हैं और उसे संसद् के समक्ष ले आते हैं। सभा और संबंधित व्यक्तियों को समय देना चाहिए और तब अपने सुझाव देने चाहिए यह कहना कि सम्बन्धित व्यक्ति सदस्यों के प्रभाव में आ

गये हैं, बात दूसरी प्रकार की है। मुझे प्रसन्नता है कि मेरे आदरणीय महिला मित्र ने विचार रखने का अवसर दिया, अन्यथा मैं तृतीय वाचन पर अपनी बात नहीं रख पाता। वह एक आश्वासन चाहती है कि हममे से किसी को भी अगले विधेयक पर कोई बातचीत नहीं करनी चाहिए अथवा अपने विचार सभा के समक्ष विचारार्थ हेतु नहीं रखने चाहिए और विधेयक को उसी रूप में स्वीकार कर लेना चाहिए जिस रूप में इसे लाया गया था। ऐसा नहीं है कि क्या उसके अथवा किसी अन्य संदस्य के पास पूर्ण योजनाएं हैं और उन्हें बिना किसी आलोचना अथवा जांच-पड़ताल के स्वीकार कर लिया जाये।

महोदय, मैं इस प्रस्ताव का समर्थन करता हूं कि विधेयक को पास किया जाए।

रुपये का अवमूल्यन*

मुझे आशा है कि इस समय-सीमा को भूतलक्षी प्रभाव से लागू नहीं किया जायेगा। जब मैं इस सत्र में उपस्थित होने के लिये घर से चला तो मैं यह सोचते हुये आया था कि मैं माननीय वित्त मंत्री से सीधे ही प्रश्नोत्तर करूंगा। परन्तु कल जो कुछ मैंने सुना, उसके बाद, मैं इस बात से बहुत हद तक सहमत हो गया कि जो कुछ उन्होंने किया है उसके अतिरिक्त वह और कुछ कर भी नहीं सकते थे। परन्तु फिर भी, मैं उन्हें बचाने का कोई प्रयास नहीं करूंगा क्योंकि जो कदम उन्होंने परिस्थितियों और विश्व के हालातों को देखते हुये, जिनके ऊपर उनका कोई नियंत्रण नहीं है, उठाये हैं, उन्हें वह कदम उठाने ही पड़ते। परन्तु मैं उनसे एक-दो ऐसी परिस्थितियों के बारे में जरूर कहना चाहूंगा जिन पर यदि कुछ अधिक ध्यान दिया जाता तो इस बात को टाला जा सकता था।

वह इस बात में मुझसे सहमत होंगे कि अवमूल्यन केवल एक अस्थायी उपाय ही है और यह हमारे भुगतान सन्तुलन के अन्तर को समाप्त करने का एक स्थायी उपाय नहीं हो सकता। (एक माननीय सदस्य :— "यह विपदा का इलाज नहीं है"।) बहुत शीघ्र ही विश्व बाजार में प्रचलित मूल्यों से यह अवमूल्यन अप्रभावी हो जायेगा और जब तक कि हम अपना उत्पादन नहीं बढ़ाते और कीमतों में कमी नहीं करते तब तक समय के साथ ही साथ हमारे भुगतान संतुलन का अन्तर बढ़ता ही चला जायेगा। इसलिये यह कोई स्थायी उपाय नहीं है। हमें यह देखना है कि क्या सरकार ने इस दिशा में लगन से कार्य करना आरम्भ किया है या नहीं। हमें कब पता चला कि हमारे व्यापार सन्तुलन में सारे संसार की तुलना में घाटा है? युद्ध के पांच वर्षों के दौरान में हमने न अपना सारा स्टरलिंग ऋण उतार दिया बल्कि लगभग 11000 लाख पौंड जमा भी कर लिये। परन्तु यह हमारा दुर्भाग्य ही रहा कि युद्ध समाप्त होने के बाद इंग्लैंड सरकार द्वारा अधिकांश धनराशि अवरुद्ध खाते (ब्लाक्ड एकाउंट) में डाल दी गई और केवल कुछ ही धनराशि मुक्त की गई। हमने इस आशा से इतनी बड़ी धनराशि जमा की थी कि हम इसका उपयोग करेंगे। ये धनराशि हमारी कड़ी मेहनत और खून पसीने की कमाई थी। जो हमने भूखे रहकर और बंगाल के मानव निर्मित भयंकर अकाल में तीस लाख निर्दोष जानों की

---

* स्वर्ण के संदर्भ में रुपये के अवमूल्यन के संबंध में एक प्रस्ताव पर वाद-विवाद में हस्तक्षेप करते हुए, संविधान सभा (विधायी) वाद-विवाद, 6 अक्टूबर 1949, खण्ड-पांच, पृष्ठ 60-63

आहुति देकर संचित की थी। हमें आशा थी कि वह पुरानी मशीनों के नवीनीकरण या प्रतिस्थापन में और कारखानों के थके हुये मजदूरों की, जो युद्ध के दौरान दो और तीन पारियों में काम करते थे, दशा सुधारने में सहायक होगें। दुर्भाग्यवश इंग्लैंड हमारा पुनर्वास करने के बजाय अपना पुनर्वास करने के लिये कहीं अधिक उत्सुक था। और अमरीका उसे सहारा देने के लिये उपस्थित हो भी गया। 37,500 लाख डालर के ऋण को जो इंग्लैंड ने अमरीका से लिया था, हमारी आवश्यकताओं से अधिक प्राथमिकता दी गई और इतनी ही राशि को हमारे ऋण की अर्थात् इंग्लैंड पर हमारी बकाया राशि की उपेक्षा कर दी गई। साहूकार को अपनी ही बकाया धन राशि में से कुछ धन राशि वापस करने के लिये कर्जदार के सामने भिखारियों की तरह हाथ फैलाकर भीख मांगनी पड़ी। युद्ध के बाद हमारी स्थिति यह थी कि हमारा प्रतिकूल भुगतान संतुलन कम हो गया था। हमारे कुछ मित्रों ने हमें यह सुझाव दिया है कि जहां तक खाद्य पदार्थों का सम्बंध हैं हमें दो वर्ष या इससे भी कम अवधि के भीतर चावल का आयात धीरे-धीरे बन्द कर देना चाहिये और जो हमने प्रधानमंत्री से कल सुना था कि 1950 से भी पहले ही खाद्य पदार्थों का आयात कर दिया जायेगा या बिल्कुल ही बन्द कर दिया जायेगा। मेरी तो केवल यही कामना थी कि हमें युद्ध से पहले ही अर्थात् सन् 1939 में ही अपनी अर्थव्यवस्था पर विचार कर लेना चाहिये था। तब हम बर्मा से 1.5 लाख टन चावल का आयात कर रहे थे। क्या इस स्थिति में कोई परिवर्तन हुआ है? क्या हमारी जनसंख्या उतनी ही है?

हम बर्मा को निर्यात कर रहे थे। सम्भवतः हम बर्मा को उस मात्रा का पुनः निर्यात कर रहे थे जो बर्मा के लोग मूलतः नहीं चाहते थे। कुल मिलाकर मैं अपने मित्रों को यह विश्वास दिलाना चाहता हूं कि बर्मा को निर्यात करने के बजाय हम बर्मा से केवल आयात कर रहे थे। दक्षिण के नट्टुकोटाई चेटियार जिन्होंने दक्षिणी बर्मा में भारी मात्रा में पूंजी निवेश किया हुआ है, वहां जमीनें लीं, भारत से श्रमिकों को बर्मा ले गये, जमीनों में खेती की और हमें चावल भेजा। अब वह स्थिति बदल गई है। बर्मा अब हमें कोई चीज भी देने की स्थिति में नहीं है। यही स्थिति इन्डो-चाइन्स और अन्य पूर्वी देशों की है। हमारे व्यापार स्रोत परिवर्तित हो चुके हैं। यहां तक कि खाद्य पदार्थों के मामले में भी हम पश्चिम पर अधिकाधिक निर्भर होने जा रहे हैं जो हमें केवल पूंजीगत सामान की ही सप्लाई किया करते थे। न तो इंग्लैंड और न ही अमरीका जिनसे हम अपने उद्योगों आदि के पुनरुद्धार की आशा रखते थे, हमें पूंजीगत सामान की सप्लाई करने में समर्थ हैं। दूसरी ओर हम अपनी खाद्य पदार्थों की आवश्यकता के लिये भी उन्हीं की ओर देख रहे

हैं। यह बहुत बड़ी मद है और हमारे व्यापार सन्तुलन पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है। जहां तक हमारे व्यापारिक माल का सम्बंध है, आज तक भी, हमारा व्यापार सन्तुलन प्रतिकूल नहीं है। यह प्रतिकूल व्यापार सन्तुलन इसलिये है क्योंकि सरकार सरकारी खाते से खाद्यान्न खरीद रही है। यह स्थिति वर्षों से चली आ रही है। इस स्थिति से निपटने के लिये सरकार ने क्या कदम उठाये हैं? सरकार के चार स्तम्भों अर्थात् वित्त मंत्री, वाणिज्य मंत्री, उद्योग मंत्री और खाद्य मंत्री में कोई तालमेल ही नहीं है। मैं बार-बार यह आग्रह करता आ रहा हूं कि इन सभी मंत्रियों पर नियंत्रण रखने के लिये एक सुपर-मंत्री होना चाहिये अर्थात् एक आर्थिक कार्य मंत्री, कोई ऐसा व्यक्ति इस पद पर होना चाहिये जैसे कि सदन का माननीय नेता या उप प्रधान मंत्री। सदन की ओर से या सारे भारत की ओर से, मैं उपप्रधान को देश में राजनीतिक गड़बड़ियों को रोकने में और 560 रियासतों को मिलाकर एक करने में सफल होने पर धन्यवाद देता हूं। अब उन्हें यह काम और करना है कि वह देश के लाखों भूखों और गूंगे देशवासियों के लिये भोजन और कपड़े की व्यवस्था भी करें। मेरा ख्याल है कि इस स्थिति से निपटने के लिये और समन्वय स्थापित करने के लिये उप प्रधान मंत्री से बेहतर व्यक्ति कोई नहीं है।

मैं स्थिति में सुधार लाने के लिये केवल सुझाव दे रहा हूं। मैं किसी मंत्री या मंत्रियों के विरुद्ध व्यक्तिगत रूप से या सामूहिक रूप से कोई शिकायत नहीं कर रहा हूं। मेरा तो बस यह कहना है कि इनमें अपेक्षित सहयोग नहीं है। मैं इसका एक उदाहरण देता हूं। जब हमारे भूतपूर्व वित्त मंत्री जी इंग्लैंड गये और कुछ और अधिक पौंड स्टरलिंग वापस देने की मांग की तो उन पर व्यंग्य कसा गया कि जो पौंड स्टरलिंग राशि हमें पिछले वर्ष दी गई थी, उसी का ही उपयोग नहीं किया गया। तब यह इंगलैंड के हित में था जो अपने निर्यात को बढ़ावा देने में दिलचस्पी रखता था जिसके बगैर उसका अस्थित्व ही खतरे में पड़ सकता था और इसीलिये उसने इस तरह से हम पर व्यंग्य कसा था। मैं उस समय स्थायी वित्त समिति का सदस्य था और हमने कहा था कि माननीय वित्त मंत्री को अपने पास वह सारे तथ्यात्मक आंकड़े रखने चाहिये ताकि वह केवल ऐसी पूंजीगत वस्तुओं को ही भेजने पर जोर दे सके जिसकी हमारे देश में आवश्यकता हो। इसके बजाय वह खुले आम लाइसेंस पद्धति के द्वारा सभी तरह की लिपस्टिक, पेन्ट्स, वार्निश, ब्रुश और अन्य ऐसी ही चीजें भारी मात्रा में लेकर वापस लौटे। क्या ऐसी अवस्था में देश का कोई उद्योग फलफूल सकता है। इस लायसेंस पद्धति के अधीन आर्डर दिये जाने से पहले एक और खुला लायसेंस था, पुराने लायसेंस आदि को सीमित करने के लिये। माननीय वित्त मंत्री जी राष्ट्रमंडल देशों के मंत्रियों के सम्मेलन में गये जहां उनसे हमारे आयात में 25 प्रतिशत की कटौती करने के लिये कहा गया जिसे हमें स्वयं ही कम कर

लेना चाहिये था। उस 25 प्रतिशत की कटौती से, हमारा आयात जो पहले होता था, कम होकर 75 प्रतिशत रह गया है। परन्तु आज यह 75 प्रतिशत आयात का खर्च अवमूल्यन से बढ़कर 106 हो गया है। इसलिये वह लायसेंस की एक चौथी पद्धति के बारे में सोच रहे हैं। जो कुछ भी वह करते हैं उनके मित्रों को भी इससे सहमत होना चाहिये। हमारे उद्योग मंत्री ने जापान से कपड़ा मंगाने के लिये आर्डर दे दिया। आज के दिन तक भी यह कठिनाई सामने है कि उसका निपटान कैसे किया जाये। इसलिये, मेरी इच्छा है कि मंत्रीमंडल की विभिन्न अनुभागों के बीच तालमेल होना चाहिये और एक आर्थिक कार्य मंत्री होना चाहिये जिसके पास एक योजना और एक कार्यक्रम हो। इंग्लैंड, में, सर स्टेफर्ड क्रिप्स कहते हैं कि "इस सप्ताह के समाप्त होने से पूर्व या इस पखवाड़े की समाप्ति से पूर्व मैं यह कर लूंगा" और वह दिखा भी देते हैं कि उन्होंने वह काम कर लिया है, परन्तु दुर्भाग्यवश यहां कोई ऐसा मंत्री नहीं है जो ऐसा कह सके। किसी चीज के लिये, हमारे पास आंकड़े नहीं हैं। ये कठिनाइयां तब तक रहेंगी जब तक कि हमारे यहां एक विश्व अर्थव्यवस्था और एक विश्व मुद्रा नहीं होगी। चाहे आप रुपये का मूल्य सोने, डालर, या स्टरलिंग में लगायें फिर भी कुल मिलाकर बात एक ही है। मेरा निवेदन है कि जहां तक अवमूल्यन का सम्बंध है, इसे तत्काल करने की कोई जल्दी नहीं थी। वित्त मंत्री जी को कुछ और समय तक इन्तजार कर लेना चाहिये था। माननीय वित्त मंत्री जी का यह तर्क था कि अवमूल्यन अनिवार्य है, क्योंकि हमारा 75 प्रतिशत व्यापार सुलभ मुद्रा क्षेत्र स्टरलिंग क्षेत्र के साथ होता है मैंने उन्हें यह कहते हुये नहीं सुना कि वे कौन से क्षेत्र हैं, परन्तु मेरे पास ताजा आंकड़े हैं और यह केवल 51 प्रतिशत है न कि 75 प्रतिशत।

यदि इंगलैंड को निर्यात बढ़ाना तब तो या तो उसे अपने सामान की कीमतों में कमी करनी चाहिये या अमरीका में उसे अपने टैरिफ में कमी करने के लिये कहना चाहिये या उन्हें कहना चाहिये कि वह अपने यहां रबड़ और ऐसी अन्य चीजों के भंडार बनाये जिनके लिये उनके यहां पहले से ही विकल्प हैं। मेरा कहना है कि जहां तक हमारा संबंध है, यदि हमने तत्काल अवमूल्यन न किया होता तो आकाश गिर नहीं पड़ता। जहां तक इस 51 प्रतिशत आयात का संबंध है, हम इन चीजों की खरीद कहीं और से भी कर सकते थे। अब हमारा आयात और महंगा हो जायेगा। उदाहरण के लिये पाकिस्तान को लीजिये हमारा पाकिस्तानी कपास और जूट पर कोई नियंत्रण नहीं है। अकेली कपास पर ही, हमें दस करोड़ रुपये की हानि उठानी पड़ेगी। हमें नहीं मालूम कि इजिप्ट और अमरीका अपनी अपनी कपास की कीमतों के बारे में क्या करेंगे। जूट पर हमें लगभग 30 करोड़ रुपये की हानि उठानी पड़ेगी। ये आवश्यक वस्तुयें हैं। ट्रावनकोर और उड़ीसा में जूट पैदा करने के प्रयास किये जा रहे हैं परन्तु इसमें समय लगेगा। फिर खालों को लें जिस पर दक्षिण भारत का चमड़ा उद्योग निर्भर है। इसके लिये भी हमें पाकिस्तान का मुंह ताकना पड़ेगा।

पाकिस्तान ने कश्मीर में न केवल राजनीतिक युद्ध छेड़ रखा है बल्कि उसने एक आर्थिक युद्ध भी प्रारंभ कर दिया है। परन्तु दुर्भाग्यवश, हमारे यहां एक दुर्भाग्यपूर्ण प्रवृत्ति है कि यदि हमारे यहां सौंदर्य प्रसाधनों पर भी रोक लगा दें तो हम यही समझेंगे कि हमने सभी कुछ खो दिया है।

मैं पहले भी कह चुका हूं कि एक आर्थिक कार्यमंत्री होना चाहिये। मैं माननीय वित्त मंत्री जी से आग्रह करूंगा कि वह उन सभी विविध प्रकार के मामलों के लिये जिनके बारे में उन्होंने रूपरेखा तैयार की है, उन्हें सलाह देने के लिये एक स्थायी समिति का तत्काल गठन करें। उन्होंने बताया है कि आठ मुद्दों पर कार्यवाही करने जा रहे हैं। यदि अमरीकी डालर का मूल्य बढ़ गया है तो हम अपने आयात में कमी कर सकते हैं। हम अपना निर्यात बढ़ा सकते हैं। अपने निर्यात में वृद्धि करने के लिये, ऐसी वस्तुओं पर जिन पर हमारा एकाधिकार है, हम निर्यात शुल्क लगा सकते हैं। ये विभिन्न सुझाव हैं और मैं इनका स्वागत करता हूं। ये सुझाव विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। उन्हें इन सभी बातों की जानकारी है और ऐसा कोई भी सुझाव नहीं है जिनके बारे में उन्हें जानकारी न हो। यहां तक तो बहुत अच्छा है। परन्तु, वह एजेन्सी कहां है जो उन्हें सलाह देगी और इन मामलों में कार्यवाही करने के लिये उन पर जोर डालेगी। इस प्रयोजन के लिये मेरा सुझाव है कि उन्हें इस सदन की एक स्थायी समिति की नियुक्ति कर देनी चाहिये जिसमें चार मंत्री हों अर्थात् वह स्वयं उद्योग और आपूर्ति मंत्री, वाणिज्य मंत्री और खाद्य मंत्री इसमें शामिल हों और इसके अलावा इसमें इस सदन के सात या ग्यारह सदस्य भी हों। इन व्यक्तियों को उन्हें खुद चुनना है, कुछ तो स्थायी वित्त समिति से, कुछ उद्योग और आपूर्ति मंत्रालय की स्थायी समिति से। जो एक समिति अभी है वह यह सारा कार्य नहीं कर सकती। मैं यह नहीं चाहता कि एक स्थायी वित्त समिति ही यह सारा कार्य करे क्योंकि इसमें अन्य समितियों के सदस्य नहीं हैं। जैसे कि यह तय करने के लिये हमें उस संस्था का सदस्य होना चाहिये या नहीं, ब्रिटेन वूडस एग्रीमेंट के लिये एक समिति है, रूपये का विनिमय मूल्य क्या होना चाहिये तथा और ऐसी ही बातों को तय करने के वास्ते अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के लिये एक समिति है, उसी तरह इस प्रयोजन के लिये भी एक समिति होनी चाहिये। मैं तो यह भी चाहता कि यह समिति अपनी रिपोर्ट इस सदन में प्रस्तुत करे। यह काफी है कि वह चारों मंत्रियों के साथ मिलकर मामलों की जांच करें और उन्हें सलाह दें कि किस-किस वस्तु के आयात में कटौती की जाये, कौन सी वस्तु का निर्यात किया जाये और किस तरह से कीमतों को कम किया जाये। जब तक इन सभी उपायों को नहीं अपनाते, मुझे आशंका है कि हमें अपने रुपये का और भी अवमूल्यन करना पड़ सकता है (व्यवधान) मुझे केवल एक मिनट और चाहिये। मैं तो केवल सदस्यों से अपील कर रहा हूं कि खतरा समाप्त नहीं हुआ है। माननीय वित्त मंत्री

जी ने कल अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के आग्रह का उल्लेख किया था। किसी संस्था विशेष ने जोर दिया या नहीं, परन्तु खतरा प्रारम्भ हो चुका है और हम लगातार नीचे की ओर गिर रहे हैं और जब तक हम कुछ और अधिक वस्तुओं का निर्यात करके रुपये का समुचित रूप से मूल्य बरकरार नहीं रखते, तब तक हमें परिस्थितियों से बाध्य होकर रुपये का अवमूल्यन बार-बार करते रहना पड़ेगा। मुझे नहीं मालूम कि यह स्थिति हमें कहां तक ले जायेगी। मुझे आशा है कि माननीय वित्त मंत्री जी मेरे इस सुझाव को उसी भावना से स्वीकार करेंगे जिस भावना से मैंने यह सुझाव दिया है। हमारा लड़ने झगड़ने का कोई इरादा नहीं है।

कर अपवंचन और काला बाजारी*

काला बाजारी और कर अपवंचन दोनों को रोकने की आवश्यकता पर अधिक बल नहीं दिया जा सकता है परन्तु जैसा कि माननीय वित्त मंत्री ने टिप्पणी की है इनसे निबटने के लिए विद्यमान कानून के अन्तर्गत सामान्य प्रावधान हैं।

जहां तक कर अपवंचन का संबंध है वित्त मंत्री महोदय ने अभी-अभी यह कहा कि वह एक ऐसा विधेयक पुरःस्थापित करने के लिए विचार बना रहे हैं जिसमें आय कर प्राधिकारियों को दिए गए झूठे विवरणों के लिए वर्तमान की तुलना में अधिक कठोर दण्ड दिया जाएगा और उन्हें भारतीय दंड संहिता में निर्धारित अपराधों की पंक्ति में शामिल किया जाएगा। इस अपराध के लिए दंड संहिता में सात साल के कारावास के दण्ड की व्यवस्था है। यदि कारावास को अनिवार्य बनाया जाता है तो सात साल की अवधि भी आवश्यक नहीं है। तीन महीने की अवधि भी काफी होगी। जब सरकार द्वारा इस उपाय पर विचार किया जा रहा है तो मैं यह नहीं समझता कि यह विधेयक आवश्यक है। वह एक काफी व्यापक विधेयक होगा।

जहां तक काला बाजारी का संबंध है यह खेदजनक है कि हम कई काला बाजारियों को पकड़ नहीं पाए हैं यद्यपि कई अधिनियमों में जरूरत से ज्यादा प्रावधान किए गए हैं। मैं यहां केवल तीन उदाहरण देता हूं। 1946 के अधिनियम 24 को ही लीजिए। एक ऐसा अधिनियम है जिसमें कतिपय वस्तुओं के उत्पादन, सप्लाई और वितरण, व्यापार और वाणिज्य पर नियंत्रण रखने की शक्तियों को एक सीमित अवधि के दौरान जारी रखने की व्यवस्था है। इसमें यह बताया गया है:—

> इस अधिनियम में जब तक कि विषय अथवा संदर्भ में कोई प्रतिकूल बात है—
>
> (क) आवश्यक वस्तु का तात्पर्य निम्नलिखित वस्तुओं में से किसी वस्तु से है:—
>
> (1) खाद्य सामग्री
>
> (2) सूती और ऊनी वस्त्र

---

* श्री के० जी० शाह द्वारा पेश किए गए कर अपवंचन तथा काला बाजारियों को सजा संबंधी विधेयक पर वाद-विवाद में भाग लेते हुए। संसदीय वा० वि० 25 मार्च 1950, खण्ड-3, भाग-2 पृष्ठ सं० 2121 से 2124।

(3) कागज

(4) पेट्रोलियम और पेट्रोलियम उत्पाद

(5) यांत्रिक रूप से प्रवृत वाहनों के फालतू पुर्जे

(6) कोयला

(7) लोहा तथा इस्पात

(8) अभ्रक, इत्यादि

अब उन में से प्रत्येक वस्तु के बारे में एक नियंत्रण आदेश भी जारी किया गया है जब यह पाया गया कि यह सामान्य अधिनियम पर्याप्त नहीं है। इस अधिनियम के उपबंधों की जांच की जानी चाहिए। यह अधिनियम सरकार को उन मूल्यों,जिन पर वस्तुएं बेची जानी चाहिए,उतनी मात्रा जिससे ज्यादा कोई व्यक्ति अपने पास नहीं रख सकता हो, वह समय जिसके अंदर उसे अपना स्टॉक निपटाना चाहिए आदि से संबंधित नियम बनाने की शक्तियां प्रदान करता है। अर्थात् यदि वह किसी विशेष मूल्य से अधिक में कोई वस्तु बेचता है तो वह अपराधी माना जाएगा; यदि वह किसी विशेष समय से पहले अपने कब्जे में ली गई वस्तुओं को नही बेचता है तो वह अपराधी माना जाएगा; और यदि वह निश्चित मात्रा से अधिक मात्रा रखता है तो वह अपराधी माना जाएगा।

तत्पश्चात् इन अपराधों की जांच को लीजिए इस उद्देश्य के लिए विशेष उपबंध भी किए गए हैं। इस अधिनियम के खण्ड (3) के उपखण्ड (2) के भाग (2) में यह व्यवस्था है:

> किसी आकस्मिक तथा पूरक मामलों जिनमें विशेष रूप से अहातों,वाहनों, पोतों और वायुयानों में प्रवेश करना और उनकी तलाशी लेना भी शामिल है, किसी ऐसी वस्तुओं की इस प्रकार की तलाशी लेने के लिए प्राधिकृत किसी व्यक्ति द्वारा कोई वस्तु जिनके बारे में ऐसे व्यक्ति को यह विश्वास हो जाता है कि ऐसे आदेश का उल्लंघन किया गया है, किया जा रहा है अथवा किये जाने की संभावना है जब्त करने के लिए लाइसेंस, परमिट अथवा अन्य प्रलेख प्रदान अथवा जारी किया जाता है और उसके लिए फीस वसूल की जाती है।

यह एक काफी व्यापक अधिनियम है और यदि कोई जांच अधिकारी यह सोचता है कि

किसी आदेश का उल्लंघन किया गया है, किया जा रहा है अथवा किए जाने की संभावना है, तो वह किसी भी अहाते में प्रवेश कर सकता है और किसी भी ऐसी वस्तुओं को जब्त कर सकता है जिनके बारे में उस अधिनियम के अन्तर्गत कोई अपराध सुविचारित है।

अब जांच अधिकारी द्वारा पकड़ा गया कोई व्यक्ति यह कहकर बच नहीं सकता है कि किसी अन्य व्यक्ति ने यह अपराध किया है। इस अधिनियम के खण्ड (9) में इस प्रकार बताया गया है:

> यदि खण्ड (3) के अन्तर्गत जारी किए गए किसी आदेश का उल्लंघन करने वाला कोई व्यक्ति, कोई कम्पनी अथवा कोई अन्य निकाय है, जिसमें प्रत्येक निदेशक, प्रबंधक, सेक्रेटरी अथवा अन्य अधिकारी अथवा उसका एजेंट शामिल है तो वह जब यह सिद्ध नहीं करता है कि यह उल्लंघन उसकी जानकारी के बिना हुआ है अथवा यह कि उसने ऐसे उल्लंघन को रोकने के लिए सभी उचित प्रयास किए थे, ऐसे उल्लंघन के लिए दोषी समझा जाएगा।

इसका अर्थ यह हुआ कि उनमें से प्रत्येक व्यक्ति व्यक्तिगत रूप से इसके लिए जिम्मेदार होगा, जब तक वह सिद्ध नहीं करता है कि उसे किए गए अपराध की बिल्कुल कोई जानकारी नहीं है अथवा वह यह उल्लंघन किए जाने के समय इंगलैण्ड अथवा अमेरिका में था। अतः कोई भी व्यक्ति इससे बच नहीं सकता है।

तत्पश्चात् सिद्ध करने के भार के बारे में खण्ड (15) के अन्तर्गत यह भार न केवल अदालती कार्यवाही पर सामान्य आपराधिक मामलों में डाला गया है बल्कि उस व्यक्ति पर डाला गया है जिस पर अदालती कार्यवाही ही की गई है। सामान्य आपराधिक कानून के अन्तर्गत प्रत्येक व्यक्ति को पूर्णतया निर्दोष समझा जाता है जब तक कि उसे दोषी न सिद्ध कर दिया गया है। अब जहां तक इन नियंत्रण आदेशों का संबंध है इस प्रक्रिया को बदल दिया गया है। खण्ड (15) में इस प्रकार बताया गया है:—

> खण्ड (3) के अन्तर्गत जारी किए गए किसी आदेश का उल्लंघन करने के लिए जब किसी व्यक्ति पर अदालती कार्यवाही की जाती है तो उसे कोई कार्य करने अथवा किसी कानूनी अधिकार के बिना अथवा परमिट, लाइसेंस अथवा अन्य प्रलेख के बिना किसी वस्तु को कब्जे में लेने के लिए रोकता है, तो यह सिद्ध करने का भार उसी पर होगा कि उसके पास ऐसा प्राधिकार, परमिट, लाइसेंस अथवा अन्य प्रलेख मौजूद है।

अतएव यह भार उस व्यक्ति पर भी निश्चित कर दिया गया है जिस पर अदालती कार्यवाही की जा रही है।

अब दण्डों का क्या विधान है? कारावास की अवधि 3 वर्ष है। जुर्माना भी लगाया जा सकता है अथवा दोनों ही हो सकते हैं। 1948 के अधिनियम संख्या (64) द्वारा बाद में जब्त करने संबंधी उपबंध भी जोड़ा गया था। इसमें यह प्रावधान है:—

(क) जब कोई उल्लंघन सूती वस्त्रों से संबंधित किसी आदेश का हो, तब न्यायालय—

(1) ऐसे उल्लंघन करने वाले किसी अपराधी व्यक्ति को ऐसी अवधि के लिए कारावास की सजा देगा जो तीन वर्षों के लिए बढ़ायी जा सकती है और इसके अलावा जुर्माने की सजा भी देगा, और

(2) यह निर्देश देगा कि उस व्यक्ति को ऐसी सम्पत्ति जिसके बारे में आदेश अथवा इसके किसी भाग का उल्लंघन हुआ है, जैसा कि न्यायालय उचित समझे, से वंचित किया जाएगा।

उसका तात्पर्य यह है कि उन वस्तुओं, जिनके बारे में अपराध किया गया है, से वंचित किया जा सकता है। जुर्माना भी लगाया जा सकता है। इसके अलावा कारावास भी दिया जा सकता है।

अब झूठे विवरणों के बारे में खण्ड (10) में इस प्रकार बताया गया है:

यदि किसी व्यक्ति (1) जब खण्ड (3) के अन्तर्गत जारी किए गए किसी आदेश द्वारा कोई वक्तव्य देने अथवा कोई जानकारी भेजने के लिए कहा जाता है तो वह व्यक्ति कोई ऐसा वक्तव्य देता है अथवा जानकारी भेजता है जो किसी विशेष सामग्री के बारे में झूठा है और जिसे वह जानता है अथवा उसके पास वह झूठा होने के उपयुक्त कारण मौजूद है अथवा उसे सत्य नहीं मानता है, अथवा

(2) किसी पुस्तक, लेखे, रिकार्ड, घोषणा विवरणी अथवा अन्य प्रलेख जिसे किसी ऐसे आदेश के द्वारा तैयार करने अथवा भेजने के लिए कहा गया हो, में उपयुक्त अनुसार ऐसा कोई वक्तव्य देता है उसे ऐसी अवधि के लिए कारावास की सजा दी जा सकती है जिसे तीन वर्ष के लिए बढ़ाया जा सकता है अथवा जुर्माने अथवा दोनों की सजा दी जा सकती है।

अब मामले की जांच करने वाले न्यायाधीश के मामले में यह कहा जा सकता है कि उसे यह शक्ति दी जा सकती है परन्तु संबंधित पार्टी एक हजार साक्षियों की जांच करने के लिए कह सकती है और इस प्रकार समय का लाभ उठा सकती है। परन्तु खण्ड (12) के अन्तर्गत कोई न्यायाधीश मामले की संक्षिप्त रूप से जांच कर सकता है।

अतएव मैं यह नहीं समझता कि इस विधेयक से इस निर्दयी अधिनियम ने पहले ही

मौजूद उपबंधों में कोई सुधार होगा जिसका मैंने अभी उल्लेख किया है और जिसे हम पहले भी पारित कर चुके हैं। ऐसा नहीं कि कानूनी पुस्तकों में अत्यंत कठोर उपबंध पहले ही मौजूद न हों। वास्तव में दोष प्रशासन में है। मैं जानता हूं कि प्रांतीय तथा केन्द्र सरकार दोनों में ही प्रत्येक मंत्रालय में भ्रष्टाचार विरोधी विभाग मौजूद हैं। मैं जानता हूं कि सरकार के वाणिज्य विभाग में एक सेवा निवृत्त महालेखाकार, जिसे विभाग से कुछ लेना देना नहीं था, को भ्रष्टाचार विरोधी अधिकारी नियुक्त किया गया था और आयात तथा निर्यात, परमिटों और लाइसेंसों से संबंधित सभी शिकायतें उनके समक्ष रखी गई थी और वे एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाया करते थे। यही बात संचार विभाग पर भी लागू है। डाक व तार विभाग में एक भ्रष्टाचार विरोधी अधिकारी मौजूद है जो उस विभाग में स्वतंत्र रूप से कार्य करता है। मद्रास प्रांत के बारे में भी मुझे इसी प्रकार की जानकारी है वहां आवश्यक तौर पर प्रशासन को चुस्त बनाने के लिए भ्रष्टाचार विरोधी अधिकारी मौजूद है। मैं यह नहीं समझता कि हमें किसे दूसरे अधिनियम की आवश्यकता है, क्योंकि मैं यह नहीं समझता कि हम विद्यमान कानून में कोई सुधार ला सकते हैं। यह भी इसी प्रकार का ही कानून होगा सिवाय इसके कि तीन साल के कारावास/और अथवा जुर्माने और संपत्ति से वंचित करने के बजाय आप मृत्यु दण्ड अथवा आजीवन कालापानी की सजा दे सकते हैं। मैं नहीं जानता परन्तु आप लोगों को कुछ सीमा तक आतंकित कर सकते हैं। परन्तु इससे कोई काम नहीं बनेगा। अगर नमक अथवा पीपर अथवा कोई नियंत्रित वस्तु 12 आने की दर की बजाय जो कि नियंत्रित है $12^{1/2}$ आने की दर पर बेचने से किसी व्यक्ति को 1/2 आने का लाभ होता है और इसके लिए आप उसे मृत्यु दण्ड देना चाहते हैं तो यह केवल कागजी धमकी होगी। इसका केवल यही मतलब होगा भ्रष्टाचार विरोधी अधिकारियों को और अधिक रिश्वत दी जाएगी। मैं भ्रष्टाचार के विरोधी अधिकारियों के खिलाफ नहीं हूं। जब तक माननीय संस्थाएं विद्यमान हैं तो कुछ सीमा तक भ्रष्टाचार मौजूद रहेगा। परन्तु उससे यथासंभव कानून से बचने के खिलाफ उपबंध की व्यवस्था करने की आवश्यकता समाप्त नहीं हो जाती है। मैं विधेयक के उद्देश्य से पूरी तरह सहमत हूं। परन्तु ऐसे मामलों से निपटने के लिए कानूनी पुस्तकों में उपबंध पहले ही मौजूद है। और जो बहुत ही कठोर है, तथा विभिन्न विभागों में भ्रष्टाचार विरोधी एजेंसियां भी मौजूद हैं।

दुष्प्रेरणा भी एक अपराध है। मैं एक दूसरे मामले का भी उल्लेख करूंगा कि हमारे देश के नैतिक स्तर को भी ऊंचा उठाने की आवश्यकता है। दुर्भाग्यवश जब हमें किसी चीज की कमी होती है तो हम खुद उसे काले बाजार से खरीदते हैं अगर अचानक कोई मेहमान आ जाता है तो हम उसे होटल में जाने के लिए नहीं कहते बल्कि हम तुरन्त अपने नौकर को बाजार भेजते हैं। और उसे यह नहीं कहते हैं कि किसी भी तरह वस्तु

खरीद कर लाए। शायद वह आधा रुपया ज्यादा देकर चीज खरीद कर लाता है। यदि घर में चीनी नहीं है तो हम इसके बिना काम चलाने के लिए तैयार नहीं होते हैं। हम सोचते हैं कि हमारा जन्म चीनी के लिए हुआ है और हम चीनी के साथ ही मरेंगे। यदि घर में पर्याप्त चीनी नहीं है तो हम उसके बिना काम नहीं चलाते हैं। हम सरकार को और अपने आप को भी इस बात के लिए विवश करने का प्रयास करते हैं कि अधिक धनराशि का भुगतान करके अपने स्टाक को भरपूर रखा जाए। अतः विधेयक के उद्देश्य का समर्थन न करते हुए मैं सम्मानपूर्वक यह कहूंगा कि इस विधेयक की बिल्कुल आवश्यकता नहीं है। इससे विद्यमान कानून में कोई सुधार नहीं होगा। और इसके लिए तंत्र भी पहले ही मौजूद है। मैं सरकार से उस तंत्र को चुस्त बनाने के लिए अनुरोध करूंगा और इस बात को भी सुनिश्चित करें कि परिणामों के बावजूद, इस बात के बावजूद भी कि उसमें कौन व्यक्ति शामिल है, कानून को प्रशासित किया जाता है। यदि कोई बड़ा व्यक्ति दोषी पाया जाता है और उसे सजा दी जाती है तो यह उतना ही अच्छा होगा। बड़े व्यापारी के मामले में एक दिन का कारावास भी काफी है। उसे पकड़े जाने दीजिए। सारी बात पकड़े जाने की प्रक्रिया पर निर्भर करती है। आप को उपयुक्त अधिकारियों की नियुक्ति करनी चाहिए। दूसरी तरफ भी मैं यह कहूंगा कि हमें साक्षी बनने की जिम्मेदारी से नहीं बचना चाहिए। यदि मैं काला बाजार से कोई वस्तु खरीदता हूं तो मुझे आगे आकर यह कहना चाहिए कि मैंने इसे काला बाजार से खरीदा है यद्यपि मुझे उस अपराध का दोषी होना चाहिए। यह एक ऐसा अपराध है जो जनता तथा व्यापारी दोनों के द्वारा ही किया जा सकता है। निश्चित रूप से व्यापारी काफी हद तक जिम्मेदार है। उसे पकड़ने के लिए कानून पहले ही मौजूद है और मैं यह नहीं समझता कि यह नया कानून आवश्यक है। इससे वर्तमान स्थिति में कोई सुधार नहीं होगा और अतएव मैं इसे प्रवर समिति को भेजने के हक में नहीं हूं।

वित्त आयोग की रचना*

मैं केवल कुछ बातें ही कहना चाहूंगा। सबसे पहले, मैं इस बात से शुरू करूंगा कि चेयरमैन के लिये क्या योग्यता निर्धारित की गई है। माननीय मेरे मित्र पंडित कुंजरू ने कहा कि विधान में यह निर्धारित नहीं किया जाना चाहिये कि चेयरमैन को सरकारी कार्यों की अच्छी जानकारी होनी चाहिये। मैं उनसे सहमत नहीं हूं और न ही मैं मेरे माननीय मित्र जसपत राय कपूर की इस बात से सहमत हूं कि उच्च न्यायालय का जज सरकारी व्यक्ति से अच्छा कार्य करेगा। जहां तक मैं समझ पाया हूं उच्च न्यायालय के जज को एक राज्य तथा अन्य राज्य के बीच वित्तीय समस्याओं से कुछ भी लेना देना नहीं होता और न ही उसे सामान्य परिस्थितियों में उसकी अच्छी जानकारी होती है। सरकारी व्यक्ति को ही सरकारी कार्यों की अच्छी जानकारी होती है। एक प्रतिष्ठित व्यक्ति समान मापदण्ड रख सकता है और राज्य तथा केन्द्र में जब कभी मतभेद होता है तो वह उनमें विश्वास की भावना पैदा कर सकता है और मतभेद दूर कर सकता है। अपनी उम्र और अनुभव के कारण सरकारी व्यक्ति सभी सामाजिक कार्यों के साथ न्याय करेगा और इस बात का ध्यान रखेगा कि सार्वजनिक हित के कार्य चाहे वे केन्द्र के हैं या राज्यों द्वारा शुरू किए गए हैं उनके लिये धन की कमी न हो। इसलिये मैं चेयरमैन के लिये अपेक्षित योग्यता का स्वागत करता हूं। इसके लिये यह निर्धारित नहीं किया जाना चाहिये कि वह उच्च न्यायालय का जज हो। चेयरमैन उच्च न्यायालय का जज हो सकता है। यदि मेरे लिये योग्यता निर्धारित करना सम्भव होता तो मैं यही कहता कि आयोग का चेयरमैन उच्च न्यायालय का जज नहीं होगा। मेरा यह कहना है कि यहां एक धुन सवार है। मैं स्वयं वकील हूं और कानून के मुताबिक मैं चेयरमैन बनने के योग्य हूं। मैंने दस वर्ष से ज्यादा समय तक वकालत की है। परन्तु केवल उस वकालत से, मैं महसूस करता हूं कि मैं चेयरमैन बनने के लिये पूर्णतया अयोग्य हूं। क्योंकि मैं जानता हूं कि ये भद्रपुरुष नागरिकों के सामान्य मामलों को निपटाते हैं, वे निजी अधिकारों का कार्य करते हैं, लेकिन उनका एक राज्य तथा दूसरे राज्य के बीच सरकारी अधिकारों तथा वित्तीय मामलों से कुछ भी लेना देना नहीं है।

---

* वित्त आयोग (विविध उपबंध) विधेयक 1951, पर वाद-विवाद में हस्तक्षेप करते हुए, संसदीय वाद-विवाद, 4 मई, 1951, खण्ड ग्यारह, कॉ॰ 8078-8085।

मैं जानता हूं कि बहुत से जज इस बात से सहमत होंगे कि इनमें से अधिकांश को इन सभी मामलों की कोई जानकारी नहीं है।

वित्त आयोग का चेयरमैन सरकारी व्यक्ति होना चाहिये। एक तो उसे हमारे संसाधनों का भरपूर ज्ञान होना चाहिये, दूसरा हमारे समाज की जरूरतों और उनसे संबंधित प्राथमिकताओं तथा इन संसाधनों को समय-समय पर किस प्रकार आबंटित किया जाना है, इसका ज्ञान होना चाहिये। यह केवल संसाधनों को देने की बात नहीं है। वह सिफारिशें कर सकता है, उसे दैनिक कार्यों पर भी निगरानी रखनी चाहिये। इसलिये, इस समिति की रिपोर्ट के प्रतिकूल, यह सिफारिश की जाती है कि यह बहुत अच्छा होगा यदि व्यापक अनुभव वाले एक या इससे अधिक सार्वजनिक व्यक्ति हों। वित्त मंत्री ने तो केवल इतना ही आग्रह किया है कि इस आयोग का चेयरमैन ऐसा व्यक्ति होना चाहिये जिसे सार्वजनिक कार्यों का व्यापक अनुभव हो। मुझे विश्वास है कि वे अपनी तत्परता से किसी प्रतिभाशाली व्यक्ति को चुनेंगे जो राज्यों में विश्वास पैदा करेगा, विभिन्न राज्यों में मतभेदों को दूर करेगा और केन्द्र या राज्यों को भी साधनों की कमी न होने देते हुए संसाधनों का न्यायोचित वितरण करेगा। मुझे उच्च न्यायालय के जज को चेयरमैन बनाने पर कोई आपत्ति नहीं है यदि अन्यथा वह इन मामलों में सक्षम है। इसलिये उच्च न्यायालय के जज के लिये भी उपबंध किया गया है।

जहां तक भर्ती का संबंध है, मैं समिति की सिफारिश से सहमत नहीं हूं। इस सिफारिश में यह कहा गया है कि राज्य पेनल बनायेंगे जिस में से दो व्यक्ति चुने जायेंगे तथा केन्द्र पेनल बनायेगा जिससे दो व्यक्ति चुने जायेंगे और चेयरमैन की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जायेगी। इसे व्यवहार्य नहीं पाया गया इसलिये इसे यहां नहीं लिया गया।

मैं जानता हूं कि इनमें से बहुत सी सिफारिशें व्यवहार्य नहीं है। क्या किसी माननीय सदस्य की यह राय है कि क्योंकि समिति नियुक्त की जाती है और यह रिपोर्ट देती है, इसलिये सरकार के लिये वह सब कुछ स्वीकार करना जरूरी है जो वह समिति कहती है और सरकार उस समिति के पक्ष में अपनी सभी शक्तियां त्याग दें। तो फिर उस समिति को यहां वित्त मंत्री ही क्यों न बना दिया जाये? मुझे आशंका है कि हम हीन भावना के शिकार हैं।

पर समिति केवल परामर्शदात्री समिति है। समिति का जो भी नाम हो, यह आवश्यक नहीं है कि सरकार उसकी सभी सिफारिशें स्वीकार करें। यह सब इस बात पर निर्भर

करता है कि सिफारिशें किस तरीके से की जाती हैं और क्या सिफारिशें की जाती हैं। निःसन्देह यदि सरकार उन सिफारिशों में से कोई सिफारिश स्वीकार नहीं करती और उन्हें छोड़ देती है तब निश्चित रूप से यह शिकायत होगी कि जब किसी विशेष उद्देश्य के लिये समिति नियुक्त की गई थी तो उसकी कोई भी सिफारिश क्यों नहीं स्वीकार की गई। परन्तु मेरा यह सुझाव है कि चाहे यह विधान में हो या न हो एक व्यक्ति जो राज्य का वित्त मंत्री है अथवा राज्य का भूतपूर्व मंत्री है वह इस आयोग का सदस्य होना चाहिये। यह केन्द्र से राज्यों को राजस्व बांटना तथा आबंटन करने के साथ-साथ केन्द्र से राज्यों को सहायता अनुदान का बंटवारा करने का भी मामला है। इसलिये राज्य का प्रतिभाशाली वित्त मंत्री सदस्य के रूप में आयोग में शामिल होना चाहिये। मैं यह आग्रह नहीं करता कि इसे विधेयक के किसी खण्ड में शामिल किया जाना चाहिये परन्तु मैं आशा करता हूं कि सरकार इसे ध्यान में रखेगी अन्यथा यह तो एकतरफा तस्वीर होगी। आयोग को राज्य की जरूरतों का अनुभव नहीं होगा। मैं इस सुझाव को यहीं छोड़ता हूं और इस विधेयक में विशिष्ट खण्ड के रूप में शामिल किये जाने का आग्रह नहीं करता।

इसके बाद, जहां तक सदस्यों के चयन का संबंध है, मैं यह कहूंगा कि राष्ट्रपति के परामर्श के लिये एक चयन समिति की नियुक्ति की जाये और राष्ट्रपति को परामर्श देने वाली इस समिति में माननीय वित्त मंत्री, राज्य का वित्त मंत्री तथा एक संसद सदस्य हो। मेरा यही सुझाव है। मैंने जो सुझाव दिया है उसी के अनुरूप एक चयन समिति होनी चाहिये। क्योंकि इस मामले में बहुत से दबाव सहने होंगे और किसी सीधे-सादे को इसमें शामिल कर दिया जायेगा। कभी-कभी किसी ऐसे व्यक्ति को रिज़र्व बैंक का गवर्नर नियुक्त कर दिया जाता है जिसे उसके कार्यों की बिल्कुल जानकारी नहीं होती।

मैं किसी व्यक्ति विशेष पर दोषारोपण नहीं करता परन्तु हमें कुछ उदाहरण देने होंगे। सम्भव है कि जिस व्यक्ति को इस काम पर लगाया जाये वह सीख जाये। लेकिन हम उसे वहां प्रशिक्षण लेने के लिये लगा रहे हैं। जब तक वह अच्छी तरह प्रशिक्षण प्राप्त करता है, उस स्थान पर वह काफी उम्र का हो जाता है और सेवानिवृत्त हो जाता है। क्या हम संस्थाओं को ऐसे व्यक्तियों के हाथों में सौंप रहे हैं क्योंकि उन्हें वहां लगाया जाना है? मुझे खेद के साथ यह कहना पड़ रहा है। परन्तु ऐसी बात नहीं होनी चाहिये। मैं नहीं चाहता कि चयन के समय इस तरह के प्रभाव डाले जायें। चाहे कितना बड़ा व्यक्ति क्यों न हो, हमें इस कार्य विशेष के लिये उसकी उपयुक्तता देखनी होगी। मैं एक वकील हूं, लेकिन एक औषध विक्रेता के रूप में, लेखापाल के रूप में या लेखापरीक्षक के रूप में मैं बिल्कुल अयोग्य हूं। आखिरकार हमें देखना होगा कि क्या अमुक व्यक्ति उस अमुक कार्य के लिए उपयुक्त है। वह अच्छा प्रशासक हो सकता है, परन्तु इस कार्य विशेष में वह अयोग्य हो सकता है। वह अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष के निदेशक पद के लिये योग्य नहीं

हो सकता। इसलिये मैं अभी सचेत कर देना चाहता हूं। एक तदर्थ समिति होनी चाहिये जिसमें वित्त मंत्री, राज्यों का एक वित्त मंत्री तथा संसद का एक ऐसा प्रतिष्ठित व्यक्ति होना चाहिये जो राष्ट्रपति को उन नामों की सिफारिश करेगा और राष्ट्रपति उनमें से चयन करेगा। यह मेरा अपना मत है और मैं आशा करता हूं कि बहुत से सदस्यों का यही मत होगा। मैं चाहता हूं कि वित्त मंत्री को उन पर डाले जाने वाले प्रभावों से मुक्त रखा जाए। ऐसा मेरा सुझाव है।

इसके बाद मैं माननीय वित्त मंत्री महोदय से यह जानना चाहूंगा कि इस समिति की इस सिफारिश को किस तरह लागू किया जायेगा, सिफारिश से मेरा अभिप्राय आयोग के लिये सामग्री जुटाने के बारे में है ताकि आयोग शीघ्र इस काम पर जुट जाये। रिपोर्ट के पैरा 66 में कहा गया है:—

> अब और वित्त आयोग के गठन होने के बीच, हम सिफारिश करते हैं कि केन्द्र सरकार कुछ आधारभूत मामलों जैसे उत्पादन का मूल्य, मात्रा और उसका वितरण, आय का वितरण, कर का भार, केन्द्र तथा राज्य दोनों का, प्रमुख वस्तुओं का उपभोग, विशेषकर वे वस्तुएं जिन पर कर लगाया जाता है अथवा कर लगाये जाने की सम्भावना है, इत्यादि के बारे में आंकड़ों संबंधी सूचना एकत्र करना, संकलन करना और उसे रखने के लिये राज्यों के परामर्श से कदम उठाना, वित्त आयोग, जब नियुक्त किया जायेगा, उसके पास बुनियादी जानकारी होगी जिसका वह अध्ययन करेगा और निःसन्देह उसे आवश्यक और सूचना मांगेगा। इससे आवश्यक सीमा तक सभी महत्वपूर्ण मामलों के बारे में सतत छानबीन तथा अनुसंधान की व्यवस्था हो सकेगी।

मैं वित्त मंत्री जी से तत्काल कराधान जांच समिति नियुक्त करने का आग्रह करूंगा। यह बहुत जरूरी है और समय-समय पर इसके बारे में सभा में वायदा किया गया है। परन्तु इस कारण से कि एक अन्य समिति राष्ट्रीय आय की जांच के कार्य में लगी हुई है। इसलिये यह समिति अभी तक गठित नहीं की गई है। परन्तु उस समिति ने अपना कार्य समाप्त कर दिया है और अपनी रिपोर्ट भी दे दी है। यदि मैं गल्ती पर नहीं हूं तो मुझे प्राप्त जानकारी और इन परिस्थितियों के अन्तर्गत मुझे ऐसा लगा कि कराधान जांच समिति की नियुक्ति में और देरी नहीं होनी चाहिये। इससे वित्त आयोग को निर्णय लेने में बहुत अधिक सहायता मिलेगी और वह वित्त आयोग के सम्मुख ऐसी सामग्री रखेगी जिस पर वह आय-व्यय, संसाधनों तथा अन्य चीजों का केन्द्र तथा राज्यों के बीच उचित वितरण कर सकेगा।

वित्त आयोग के कार्यों के बारे में मैं यह समझता हूं कि उन्हें फिर से बताना अनिवार्य नहीं है क्योंकि संविधान में उन्हें पूरी तरह निर्धारित कर दिया गया है। परन्तु एक कार्य जिसकी इस समिति द्वारा सिफारिश की गई है उसे संविधान में अन्तर्विष्ट नहीं किया गया और मेरा यह सुझाव है कि उसे इस विधेयक में अन्तर्विष्ट किया जाये।

आयोग राजस्व का आवंटन करेगा। यह पहला कार्य होगा। यह अनुदान सहायता के आवेदन पत्रों पर विचार करेगा। यह दूसरा कार्य होगा । और राष्ट्रपति द्वारा सौंपे गये अन्य मामलों पर विचार करना उसका तीसरा कार्य होगा। इसके अलावा समिति ने सिफारिश की कि उसकी जांच के दौरान यदि कोई मामला उसके ध्यान में आता है तो वह उस मामले को भी लेगी और उसकी जांच करेगी और उस बारे में अपनी सिफारिशें प्रस्तुत करेगी। यह उसकी मर्जी पर है कि वह इस मामले पर भी विचार कर सकती है और वह यह न महसूस करे कि यह मामला आयोग के विचारार्थ विषयों में नहीं है। हमें इसे आयोग के कार्य के रूप में विधेयक में शामिल कर सकते हैं। वित्त मंत्री यह कह सकते हैं कि समिति को हमेशा इस बात की छूट होती है कि यह जो चाहे सिफारिशें करें और इसे राष्ट्रपति स्वीकार करे या न करे। परन्तु इसके साथ ही मैं उसे यह अधिकार देना चाहूंगा कि वह ऐसी सिफारिशें करें जिसे वह ठीक समझती है और जो उसकी जांच के दौरान उसके ध्यान में आती है और ऐसे आवंटन के मामले में उसके कार्य करने के हित में है।

मैं एक और सुझाव देना चाहूंगा। अब तक ये समितियां तदर्थ समितियां रही हैं। प्रभार शुल्क मामलों में भी अब तक तदर्थ आयोग थे उनका कार्य तभी समाप्त हो जाता था। जब उसे सुरक्षा दी गई तो यह देखने के लिये कोई अभिकरण नहीं था कि उन्हें दी गई सुरक्षा उचित थी या नहीं और क्या इसे जारी रखा जाये अथवा समाप्त कर दिया जाये। इसी तरह वित्त आयोग का गठन पांच साल के लिये किया जा सकता है। विधेयक में तथा संविधान के अनुसार आयोग का कोई सदस्य जरूरी नहीं कि पांच वर्ष के लिये ही नियुक्त किया जाये, उसे पांच वर्ष से कम अवधि के लिये भी नियुक्त किया जा सकता है। राष्ट्रपति किसी सदस्य को पूर्णकालिक सदस्य के रूप में अथवा अन्यथा भी नियुक्त कर सकता है। मैं यह चाहता हूं कि ये सदस्य इस तरह के सदस्य नहीं होने चाहिएं जो एक बार बैठक करें और उठके चले जाएं। इनमें निरन्तरता बनी रहनी चाहिये। कम से कम इनमें से एक या दो सदस्य पांच वर्ष की पूर्ण अवधि के होने चाहिएं। आयोग की सिफारिशों के परिणाम निकालना उसका कर्त्तव्य होना चाहिये। उसे उस वितरण या आवंटन के परिणामों पर निगरानी रखनी होगी जिसकी उसने सिफारिश की है और उसे अपने निर्णय की समय-समय पर समीक्षा करनी होगी और राष्ट्रपति को सिफारिशें करनी होगीं जो इन सिफारिशों को संसद के सम्मुख रखेगा। यद्यपि संविधान में यह कहा गया है कि आयोग का गठन पांच वर्षों में एक बार किया जाना चाहिये, इसे

केवल तदर्थ आयोग माना जाना चाहिये क्योंकि समिति द्वारा यहां यह कहा गया है कि आयोग के पास पूरे पांच वर्ष काम नहीं होगा। इस टिप्पणी से मैं सहमत नहीं हूं। कम से कम वह प्रगति तथा जिस तरह से दी गई अनुदान सहायता कार्य कर रही हैं, क्या उस से कोई कठिनाई हो रही है या नहीं उस पर निगरानी रख सके। ताकि अगले बजट तक राज्यों को किये जाने वाले आवंटनों या सहायता अनुदान में परिवर्तन किये जाने की सिफारिशें की जा सकें।

मेरा यह सुझाव है कि कम से कम पहले आयोग की नियुक्ति तीन वर्ष से कम अवधि के लिए नहीं होनी चाहिये। इस विधेयक के अंतर्गत उसकी नियुक्ति केवल एक वर्ष के लिए भी की जा सकती है। इतनी कम अवधि के भीतर इनमें कोई परिवर्तन नहीं किया जाना चाहिये क्योंकि वे वह अनुभव और जानकारी नहीं प्राप्त कर पायेंगे जिससे वे विभिन्न राज्यों को कारगर परामर्श दे सकें।

वेतन के बारे में मुझे कुछ शंकाएं हैं। यह कहा गया है कि कुछ लोग केवल निश्चित वेतन लेंगे। मैं नहीं चाहता कि लोगों में वेतन का अंतर होना चाहिये। विधेयक में ही निश्चित राशि से अनधिक वेतन निर्धारित कर दिया जाये। हमने दुर्भाग्य से पिछली सरकार की भावना का प्रतिपादन किया है जो कि राष्ट्रीय सरकार नहीं थी और जिसने केवल पैसे से निष्ठा खरीदी थी। उसके पास अपील करने का कोई और साधन नहीं था। वह सरकार यह नहीं कह सकती थी कि "आपका देश और मेरा देश एक ही है"। वह सरकार देश भक्ति या जनसेवा की भावना की अपील नहीं कर सकती थी। दुर्भाग्य से हमारी मनोदशा भी वैसी ही होती जा रही है। हम देश में लोगों को खरीद रहे हैं और सम्पूर्ण देश को अनैतिक बना रहे हैं। हम लोगों की सेवाओं को पैसे में तोलते हैं। इस तरह का जो दृष्टिकोण पनप रहा है वह दुर्भाग्य से हमारे सदस्यों में भी उत्पन्न हो रहा है। हमारा सेवा का बहुत अच्छा रिकार्ड है और हमारे हजारों पुरुष और महिलाओं ने सब कुछ बलिदान कर दिया है। परन्तु आज जनसेवा में भी एक और मानसिकता पनप रही है। हम अपने आपको बेच देते हैं प्रत्येक सरकारी कर्मचारी यह सोचता है कि जब तक आप उसे चार हजार रुपया नहीं देंगे वह काम नहीं करेगा। उन परिस्थितियों के अंतर्गत कुछ न्यूनतम मानदंड निर्धारित किये जाने चाहिए ताकि इस मामले में किसी तरह की सौदेबाजी न हो। इसकी एक अधिकतम सीमा भी निर्धारित की जानी चाहिये। पांच सौ रुपये का पुराना मानदंड आज बहुत कम होगा। परन्तु एक न्यायोचित मानदंड निर्धारित करना होगा। यदि हमारे लोगों में देश भक्ति या सेवा की भावना है जो वह सरकार को निष्ठा में लगाते हैं तो किसी दिन हम यह कहेंगे कि हम अपने लोगों को इतना ही देते हैं। मैं नहीं चाहता कि सार्वजनिक व्यक्ति सौदेबाजी के काउंटर पर खुद को, सरकार को बेचे। उच्चतम स्तर के व्यक्तियों को बलिदान तथा जनहित की भावना से काम करना चाहिये।

3
औद्योगिक विकास

उद्योग किसी भी देश की अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। विश्व के लगभग सभी देशों का औद्योगिकीकरण हो चुका है। केवल औद्योगिक देश ही अपने नागरिकों के जीवन स्तर को उन्नत कर सकते हैं। अमरीका की 50 प्रतिशत से अधिक आबादी उद्योगों में कार्यरत है। अन्य देशों के मामलों में भी यही स्थिति है। किन्तु हमारे देश में आम आदमी का जीवन स्तर बहुत निम्न कोटि का है क्योंकि हम लगभग 150 वर्षों से कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था पर ही निर्भर रहे हैं और लंकाशायर, मानचेस्टर और अन्य स्थानों के लिये कच्चे माल का उत्पादन करते रहे हैं। सौभाग्यवश हम इस गिरफ्त से मुक्त हो गये हैं और हमने आत्मनिर्णय की स्थिति प्राप्त कर ली है। हमें शीघ्र अपने देश का औद्योगिकीकरण करना है। इसके अनेक आवश्यक कारक हैं। जैसे निजी उद्योग में उद्यमी, प्रबंधक, मशीन, बिजली, तकनीकविद्, मजदूर और कच्चा माल जरूरी है, उसी प्रकार एक ऐसी अर्थव्यवस्था में जिसका एक भाग सरकार के स्वामित्व में हो और दूसरा गैर-सरकारी उद्यमियों के लिये आरक्षित हो, हमें इन दोनों में संसाधनों का आवंटन करना होता है।

सर्वप्रथम मैं इस देश में आर्थिक आयोजना की आवश्यकता पर प्रकाश डालूंगा जिसका मैं कुछ दिन पूर्व बजट संबंधी अपने भाषण में उल्लेख कर चुका हूं। उद्योगों की आयोजना के संबंध में यत्र-तत्र छुटपुट प्रयास किये गये हैं, किन्तु अभी तक कोई समन्वित योजना तैयार नहीं की गई। दो माह पूर्व एक उद्योग सम्मेलन हुआ था और इस सभा के सदस्य उस पुस्तिका के प्रति आभारी होंगे जो मुद्रित कर सदस्यों में परिचालित की गई है। और जिसमें अब तक तैयार की जा चुकी योजनाओं के बारे में बहुत सी जानकारी दी गई है। उद्योग और पूर्ति मंत्रालय के द्वारा जारी की गई भारत में औद्योगिक विकास संबंधी सम्मेलन विषयक इस पुस्तिका के पृष्ठ 38 में यह स्वीकार किया गया है कि कुछ उद्योगों के संबंध में कोई योजना तैयार नहीं की गई है। कुछ अन्य उद्योगों के बारे में, जिनके लिये पैनल गठित किये जा चुके हैं, मंत्रालय ने योजना के विषय में विचार नहीं

---

* उद्योग और पूर्ति मंत्रालय से संबंधित अनुदान की मांग के बारे में कटौती प्रस्ताव रखना, संविधान सभा (विधायी), वाद-विवाद 5 मार्च 1948, पृ० 1658-1663

किया क्योंकि अभी इन उद्योगों पर विचार किया जा रहा है। मैं चाहता हूं कि राष्ट्रीय योजनाओं के समन्वयन के लिये शीघ्र ही योजना आयोग की नियुक्ति की जानी चाहिये। सरकार को शीघ्र ही एक नीति तैयार करनी चाहिये जिसमें यह बताया जाये कि सरकार का कौन-कौन से उद्योगों का स्वामित्व और प्रबन्धन अपने हाथ में लेने का विचार है, कौन-कौन से उद्योग सरकारी और गैर-सरकारी उद्यमियों के संयुक्त क्षेत्र में होने चाहिएं और किन उद्योगों को पूर्ण रूप से गैर-सरकारी उद्यमियों के लिये छोड़ दिया जाना चाहिये। ऐसी किसी नीति के बिना कुछ नहीं हो सकता, उत्पादन में वृद्धि नहीं की जा सकती। यह नीति निरूपित कर दिये जाने के बाद अगली कार्यवाही यह होगी कि इसे एक निश्चित अवधि, जैसे कि पांच वर्षों की अवधि में कार्यान्वित किया जाये। मुझे इस बात की खुशी है कि माननीय वित्त मंत्री जी को ऐसा लगा है कि विश्व में विद्यमान परिस्थितियों की सापेक्षता में हमारी जो स्थिति है, उसे देखते हुये पांच वर्ष की अवधि बहुत लम्बी है। इसलिये हमें तीन वर्ष की योजना बना कर प्रत्येक वर्ष के लिये कार्यक्रम निर्धारित करना चाहिये। हम इसमें देरी नहीं कर सकते और वित्त मंत्री सहित सभी सदस्यों को विभिन्न उद्योगों के बारे में अब तक दी गई सभी रिपोर्टों को ध्यान में रखकर इस दिशा में सरकारी नीति के निरूपण और एक समन्वित योजना तैयार करने के लिये और यह सुनिश्चित करने के लिये पूर्ण प्रतिबद्धता के साथ प्रयास करने चाहिएं कि इन कार्यक्रमों को साल-दर-साल कार्यान्वित किया जाता रहे। सर्वप्रथम यही अभिष्ट है। चूंकि हम अनेक उद्योगों के गैर-सरकारी उद्यमियों के लिये छोड़ रहे हैं और उत्पादन में वृद्धि करना हमारी पहली जरूरत है, इसलिये हमें इस बात पर जोर देना चाहिये कि वे अधिक उत्पादन करें। यदि इस दिशा में कोई चूक होती है, तो मैं चाहूंगा कि सरकार के अधिकारी ऐसे उद्योग का प्रभार अपने हाथ में लें उसका संचालन करें।

मान लो एक निजी मोटर कार का ड्राइवर मोटर कार नहीं चलाता है, तो निश्चित रूप से वाहन का मालिक स्टीयरिंग पर स्वयं बैठ कर यही कहेगा कि "ड्राइवर कार नहीं चलाता है, तो मैं गलियों में तो रुका नहीं रहूंगा; मैं स्वयं ही कार चलाउंगा।"

आगे कोई खतरा नहीं है, जो था सो गुजर गया। इसीलिये मैं यह सुझाव देता रहा हूं और फिर से दे रहा हूं कि भारत सरकार को वाणिज्यिक और औद्योगिक सेवायें शुरू कर देनी चाहिये। हमने प्रशासन के स्तर का उन्नत करने के लिये अखिल भारतीय प्रशासनिक सेवा प्रारंभ की है। इसी प्रकार ऐसे वाणिज्यिक और औद्योगिक उपक्रमों के मामले में जिनका संचालन ठीक प्रकार से नहीं किया जा रहा है अथवा देश का उत्पादन बढ़ाने की योजना के अनुरूप नहीं किया जा रहा है, सरकार को सही मौके पर उनके अधिग्रहण के लिये तैयार रहना होगा। मैं कोई नया सुझाव नहीं दे रहा हूं। यह सिद्धान्त पहले ही स्वीकार किया जा चुका है। औद्योगिक वित्त निगम विधेयक को रखते हुये मेरे मित्र

माननीय वित्त मंत्री ने इस सिद्धान्त को स्वीकार किया था कि ऐसी स्थिति में जबकि किसी औद्योगिक प्रतिष्ठान को ऋण दिये गये हों और उस प्रतिष्ठान का प्रबन्ध संचालन ठीक से नहीं किया जा रहा हो, निगम को हस्तक्षेप करना चाहिये। औद्योगिक वित्त निगम को यह अधिकार दिया गया है कि वह ऐसी स्थिति में प्रबन्ध अपने हाथ में ले ले और स्वयं उद्योग का संचालन करे। यदि संयोगवश कुछ औद्योगिक प्रतिष्ठान ऋण की अदायगी न करे और माननीय वित्त मंत्री जी को स्वयं प्रबन्ध कर प्रभार ग्रहण करना पड़ जाये, तो वे इसके लिये आदमी कहां ढूंढ़ते फिरेंगे? इसलिये हमने जो विधान बना दिया है, उसे देखते हुये यह आवश्यक है कि ऐसे प्रतिष्ठानों के कुशल संचालन के लिये किसी संस्था अथवा औद्योगिक बैंक की स्थापना की जाये। ऐसी स्थिति में जबकि उनके प्रबन्धन का अधिग्रहण आवश्यक हो जाये, इस औद्योगिक सेवा का होना आवश्यक है।

मुझे यह जानकर खुशी है कि औद्योगिक वित्त निगम की स्थापना के बाद प्रांतों में भी यथाप्रत्याशित रूप से इसी प्रकार के औद्योगिक वित्त निगम स्थापित कर दिये गये हैं। इस दिशा में सर्वप्रथम प० बंगाल के राज्यपाल द्वारा प्रयास किया गया था। अपने बजट भाषण में बंगाल के वित्त मंत्री ने कहा था कि केन्द्रीय वित्त निगम तो बड़े उद्योगों की जरूरत पूरी करेगा, अतः वे बंगाल के लघु उद्योगों की जरूरतों को पूरा करने के लिये एक औद्योगिक वित्त निगम स्थापित करने का विचार कर रहे हैं। सरकार को स्वयं ही प्रबन्ध कार्मिकों और उद्यमी वर्ग के सहयोग से ऐसी सेवा आरंभ करने के लिये सुविधायें प्रदान करनी चाहिये।

अगला मुद्दा वित्त का है। वित्त मंत्री पदभार ग्रहण करने के समय से ही खुले तौर पर यह घोषित करते आये हैं कि वे उत्पादन वृद्धि करने के मुख्य उद्देश्य को; सभी गौण हितों पर तरजीह देंगे ताकि हमें उपभोक्ता वस्तुयें भी उपलब्ध हो सकें और साथ ही हम रक्षा उद्योगों की स्थापना में भी यथावश्यक वृद्धि कर सकें। मैं इस बात से सहमत हूं कि हम सभी को इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिये कटिबद्ध हो जाना चाहिये उनके अथक प्रयासों के फलस्वरूप ही बड़े उद्योगों के लिये औद्योगिक वित्त निगम बना है। करारोपण में राहत देकर उन्होंने कारबार लाभ कर में कमी करने का ही प्रयास किया है। उन्होंने करों में कमी करके छोटी कम्पनियों की भी सहायता करने का प्रयास किया है। किन्तु मेरा उनसे अनुरोध है कि वे इस बात को लेकर सावधान रहें कि इन सुविधाओं का श्रेष्ठतम ढंग से उपयोग किया जाये। यदि आवश्यक हो तो वे उन उद्योगों को, जो मेरे द्वारा आवश्यक समझी गई आयोजना की स्कीमों की परिधि में आने योग्य हैं, संरक्षण अथवा राज-सहायता प्रदान करे। योजना में विभिन्न उद्योगों को अवश्य ही प्राथमिकता दी जानी चाहिये और योजनायें आयात शुल्कों में कमी करने और अन्य राजसहायतायें प्रदान करने की व्यवस्था अवश्य होनी चाहिये।

इनके बाद हैं, कोयला और बिजली। जहां तक मशीन का संबंध है, कुछ मशीनें जापान द्वारा दी जायेंगी। कुछ लोग यह पता लगाने भेजे गये हैं कि हमें जापान और जर्मनी से कौन-कौन सी मशीनें प्रतिपूर्ति के आधार पर मिल सकती हैं इनके अलावा अन्य देशों को भी कुछ मशीनों के आर्डर दिये गये हैं। इसके अतिरिक्त युद्ध के बाद अप्रयुक्त पड़ी मशीनों के उपयोग के लिये भी तत्काल कुछ प्रयास करने होंगे। भारी संख्या में मशीनों को बिना इस बात का विचार किये ही बेच दिया गया कि उनका सिविल उद्योगों में उपयोग किया जा सकता है। मेरी इच्छा है कि सरकार इस बात का पता लगाने के लिए एक उप समिति गठित करे कि ऐसी कौन-कौन सी मशीनों का नागरिक प्रयोजनों के लिये उपयोग किया जा सकता है।

मैं पहले ही निवेदन कर चुका हूं कि आयात शुल्क में कमी करके व्यापारियों और उद्योगपतियों की सहायता की जाये। मशीनों को चलाने के लिये कोयला और बिजली नितान्त आवश्यक है, किन्तु परिवहन को लेकर कुछ अड़चन है। हालांकि मुहानों पर भारी मात्रा में कोयला पड़ा हुआ है किन्तु उसका शीघ्र परिवहन नहीं हो पाता। परसों मैंने इस बात की ओर ध्यान दिलाया था कि युद्ध के दौरान वेगनों द्वारा प्रतिदिन 77 मील की औसत से कोयला ढोया जाता था किन्तु अब यह घटकर केवल 33 मील प्रतिदिन रह गया है। ऐसे लोगों पर जुर्माना किया जाना चाहिये जो चार या पांच वैगन ले लेते हैं किन्तु उनसे शीघ्र कोयला उतार कर अथवा शीघ्र उन्हें भर कर उनका पूरा उपयोग नहीं करते। ऐसे मामलों में प्रति घंटा अथवा प्रतिदिन के आधार पर उनसे कोई जुर्माना लिया जाना चाहिये। केवल विलम्ब शुल्क लगाना ही काफी नहीं होगा। यदि कोई व्यक्ति वेगनों का उचित रूप से उपयोग नहीं करता है, तो उसे दिये जाने वाले वेगनों की संख्या में कटौती की जानी चाहिये। केवल कोयले से ही समस्या हल नहीं होगी और केवल रेल परिवहन के भरोसे ही नहीं रहना चाहिये। मेरा माननीय उद्योग मंत्री एवं वाणिज्य मंत्री जी, दोनों से आग्रह है कि वे कलकत्ता के समीपवर्ती कोयला क्षेत्रों से बम्बई के लिए समुद्र मार्ग से अतिरिक्त कोयला परिवहन सुविधायें प्रदान करने हेतु संयुक्त रूप से कुछ जलपोतों को भाड़े पर लें। केवल कोयले से ही नहीं वरन अन्य स्रोतों से भी बिजली तैयार करना प्रारंभ करना होगा। महोदय, कुछ अर्सा पहले दक्षिण भारत में मद्रास सरकार और वहां से विद्युत आपूर्ति निगम द्वारा लोगों को सस्ती दरों पर बिजली सप्लाई करके उद्योग लगाने के लिये प्रेरित किया गया था। किन्तु उन्होंने मूलतः प्रस्तावित बिजली प्रभार की दरों में वृद्धि कर दी। इससे उत्पादनकारी उद्योगों को धक्का लगता है। हाल में मैंने देखा कि पश्चिमी देशों ने, विशेषकर उन अमरीकी कम्पनियों ने जो तेल उद्योग में अग्रणी हैं और जिन्हें मध्य-पूर्व के देशों के तेल क्षेत्र सौंपे गये हैं, हमारे देश के लिये तेल की सप्लाई के कोटे में कमी कर दी। ईंधन और तेल हमारी मुख्य अड़चनें हैं। मेरा विचार है

कि यदि अमरीका हमारी सहायता नहीं करता है तो हमें रूस से बातचीत करनी ही चाहिये। मैंने कुछ दिन पहले अखबारों में पढ़ा था कि बतावियां से तेल सप्लाई किया जा सकता है। आस्ट्रेलिया ने बतावियां के साथ करार किया है। इण्डोनेशिया हमारा अच्छा मित्र है और हम वहां से तेल आयात करने की संभावनाओं का पता लगा सकते हैं और अपने देश के लिए ईंधन और तेल की सप्लाई के लिए उसके साथ एक दीर्घकालिक समझौता कर सकते हैं। जहां तक कच्चे माल का संबंध है, पता नहीं इसके लिये क्या कदम उठाये गये हैं। कच्चा माल एक प्रांत से दूसरे प्रांत तक, तथा उत्पादक स्थान से मिलों तक ले जाने के भाड़े में कमी करने के लिए अब तक कोई कदम नहीं उठाये गये हैं। इस दिशा में शीघ्र कदम उठाये जाने चाहिएं। मैं माननीय उद्योग मंत्री से पूछता हूं कि जो विभिन्न समितियां नियुक्त की गई थीं, उनके प्रस्तावों और प्रतिवेदनों को कार्यान्वित करने के लिये क्या कदम उठाये गये हैं। उनमें एक कपड़ा समिति का प्रतिवेदन है। कपड़े पर कुछ हद तक नियंत्रण समाप्त कर दिया गया है किन्तु कपड़े के लिये अपेक्षित स्टोरों पर नियंत्रण जारी है। बोबिनों और तकलियों पर अब भी नियंत्रण है। विदेशों में रह रहे लोगों को उनके उपयोग की अनुमति नहीं है। मैं कपड़ा उद्योग समिति के प्रतिवेदन से कुछ पंक्तियां पढ़ूंगा, जिसे पिछले दिसम्बर में हुये भारत में औद्योगिक विकास संबंधी सम्मेलन को मंत्रणा देने के लिये नियुक्त किया गया था। समिति ने कहा है:

> हमने नोट किया है कि कपड़ा आयुक्त द्वारा इन पर यह सुनिश्चित करने के उद्देश्य से नियंत्रण रखा जा रहा है कि मिलों में आयातित सामग्री—जो अधिकांशतः ब्रिटेन से आती है—का न्यायोचित वितरण हो। हम यह सिफारिश करते हैं कि ऐसे मामलों में जहां आयातकर्ता ब्रिटेन के अलावा अन्य सुलभ मुद्रा क्षेत्रों से माल आयात कर सकता है, उसे इस आशय की पेशकश मिलने पर आयात लाइसेंस जारी कर दिया जाना चाहिये और सरकार को माल की खेपों के वितरण का कार्य आयातकर्ता के स्वविवेक पर छोड़ देना चाहिये। हम समझते हैं कि इससे आयातकर्ताओं को आयात के नये स्रोतों का उपयोग करने की दिशा में प्रोत्साहन मिलेगा।

> महोदय मेरे विचार से कपड़े पर नियंत्रण हटा दिये जाने के बाद भण्डारण और अन्य सामग्रियों पर नियंत्रण जारी रखना आवश्यक नहीं है। मैं अपना यह कटौती प्रस्ताव स्वीकृति के लिये सभा को प्रस्तुत करता हूं और निपटान तथा अन्य मुद्दों के संबंध में मेरे मित्रों द्वारा रखे गये कटौती प्रस्ताव का समर्थन करता हूं।

* * * *

*माननीय मंत्री जी ने एक उपभोक्ता के रूप में मेरा उल्लेख किया है, इसलिये मैं बोलने के लिये खड़ा हुआ हूं, अन्यथा में इस समय जबकि सारे दिन की कार्यवाही समाप्त होने जा रही है, मैं खड़ा होकर बीच में बोलने का प्रयास न करता जबकि मैं जानता हूं कि मैं स्वयं उपभोक्ता के रूप में एक कप नहीं बल्कि दो कप चाय पीना चाहता हूं। श्रीमान्, पूंजीपति और श्रमिक दोनों यह भूल जाते हैं कि एक नियोक्ता अथवा नियोक्ताओं का समूह अर्थात् समुदाय भी होता है जब तक वह कारखानों में बनायी गयी वस्तुओं को नहीं खरीदेगा तो एक तरफ नियोक्ता वे चाहे कितने भी अमीर क्यों न हों और दूसरी ओर श्रमिक भूखों मरने के लिये विवश होंगे। सरकार द्वारा तैयार किये गये नीति संबंधी वितरण की सारी आलोचना को मैंने बड़ी प्रसन्नतापूर्वक सुना। पिछली सरकार पूर्ण पूंजीवाद के पक्ष में थी। इस बारे में उन्होंने 1945 में ही एक योजना तैयार की थी। उसी योजना के अनुसरण में अथवा उसकी प्रत्याशा में इस देश के पूंजीपतियों ने 15,000 करोड़ रुपये की एक योजना से शुरुआत की। अन्य कई योजनायें भी आयी। इस सरकार के सत्ता में आने के बाद यह बताना आवश्यक था कि वह क्या नीति अपनायेगी, क्या योजना बनायेगी और किस प्रकार का कार्यक्रम तैयार करने जा रही है ताकि योजना कारगर हो और नीति पर समुचित रूप से जोर दिया जा सके। इस नीति संबंधी विवरण के बारे में मेरा दावा है कि यह इस देश के आर्थिक जीवन के इतिहास में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कदम है। मैं यहां उपस्थित अपने समाजवादी मित्रों से सहमत नहीं हूं। मैं आन्तरिक रूप से, तहेदिल से अपने समाजवादी दोस्तों जैसा ही एक समाजवादी हूं। मैं स्वयं एक गरीब परिवार में पैदा हुआ और आज भी मैं इस देश के निर्धनतम व्यक्ति का प्रतिनिधित्व करता हूं। मेरे माननीय मित्र प्रो॰ शाह और अन्य व्यक्तियों को अभी भी यह सन्देह है कि इसमें एक समाजवादी अर्थव्यवस्था के अनिवार्य तत्व हैं या नहीं, लेकिन इस सदन के सभी वर्गों के सहयोग से यह एक विस्तृत बटवृक्ष की तरह विकसित होगा और सारे देश में समस्त आर्थिक ढांचे को व्याप्त कर लेगा। अभी तक हमने अपने अस्तित्व के मूल तत्व के रूप में गैर सरकारी उद्यम आरंभ किये हैं। सहकारी अथवा सामूहिक उद्यमों की बात करने वाले किसी भी व्यक्ति का उपहास किया गया है। पश्चिमी देशों में पूंजीवाद का युग समाप्त हो चुका है लेकिन इस देश में वह अभी तक विद्यमान है। आज

---

* भारत सरकार की औद्योगिक नीति पर डा॰ श्यामा प्रसाद मुकर्जी द्वारा लाये गये प्रस्ताव पर बोलते हुए संविधान सभा (विधायी), वाद विवाद, 7 अप्रैल, 1948, खण्ड पांच, पृष्ठ 3423-3426

पहली बार हमने यह प्रतिपादित किया है कि रक्षा संबंधी उद्योगों और प्रमुख उद्योगों का स्वामित्व और व्यवस्था राज्य द्वारा की जायेगी। गैर सरकारी उद्यमों का क्षेत्र संकुचित और सीमित कर दिया गया है। यह विभाजक रेखा खींच दी गयी है, प्रथम दृष्ट्या उन सभी उद्योगों का स्वामित्व और व्यवस्था राज्य की होनी चाहिये। अन्य के सम्बन्ध में कुछ क्षेत्र सरकारी उद्यमों के लिये छोड़ दिया गया है। जब तक मेरे मित्र कुछ अधिक ही उतावले हो उठते हैं। क्या हम इस समय ऐसी स्थिति में हैं कि इन सभी उद्योगों को तत्काल अपने स्वामित्व में ले लें? मैं भी चाहता हूं कि इन का तत्काल अधिग्रहण कर लिया जाना चाहिये लेकिन इन दोनों में से कौन अधिक महत्वपूर्ण है। तकनीकी रूप से हम उद्योगों का अधिग्रहण कर रहे हैं जो राज्य के हैं और उन में वह सामान तैयार कर रहे हैं जिस की हमारे पास कमी है। उन्हें हम दूसरे देशों से प्राप्त नहीं कर सकते और फलतः हमें उन का उत्पादन करना होता है। कुछ सामानों के बारे में सीमांकन करते हुए सरकार इसी बात को महत्व देती है। यह एक क्षेत्र है जिसमें श्रेणी 1 और 2 दोनों ही हैं और यद्यपि दोनों ही श्रेणी 2 से सम्बन्धित हैं लेकिन राज्य को इस का अधिग्रहण करके इन्हें अपने स्वामित्व और व्यवस्था में लाना चाहिये। इनमें से तीन उद्योग सीधे राज्य के स्वामित्व में हैं। रेलें एक राज्य उपक्रम हैं और आयुद्य कारखाने भी राज्य के उपक्रम हैं।

जहां तक अन्य उद्यमों का सम्बन्ध है, यह निर्धारित किया गया है कि इस्पात, पोत निर्माण, लौह, वायुयान आदि उद्योग राज्य का विषय होने चाहिये। अभी कुछ दिन पहले माननीय प्रधान मंत्री जी विशाखापत्तनम गये थे यहां उन्होंने भारत में निर्मित "जल ऊषा" नामक प्रथम जलपोत का जलावतरण किया था। जिन देशों ने अपने उद्योगों में सुधार किया है और जो संसार के सब से अग्रणी औद्योगिक देश हैं उनमें एक कार्य को छोड़ कर दूसरा करना सरल है जैसा कि ब्रिटेन के मामले में हुआ है लेकिन वहां भी यह परिवर्तन इतना अधिक नहीं हुआ है। इसलिये हमें इस परिवर्तन में समय लगेगा। हम अपने देश की अर्थव्यवस्था को अस्थिर नहीं करना चाहते। हम अपने देश में एक समाजवादी अर्थव्यवस्था लाना चाहते हैं। यहां गैर सरकारी उद्यमों का क्षेत्र धीरे-धीरे संकुचित होता जायेगा। क्या यह सच नहीं है कि इस नीति संबंधी विवरण ने श्रमिक को जिसे अन्यत्र नौकर माना गया था। यहां पूंजीपतियों का साझीदार बना दिया है? दिसम्बर में हुए उद्योग सम्मेलन में अच्छी उपस्थिति थी। सभी पक्षों ने इसमें भाग लिया और आम सहमति से निर्णय किये। मुझे घनश्याम दास बिड़ला का भाषण सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। उन्होंने कहा कि बम्बई में उन्होंने कारखानों और श्रमिकों से संबंधित सभी अधिनियमों के बारे में अपने सलाहकार से विचार विमर्श किया था और संक्षेप में इस निष्कर्ष पर पहुंचे थे कि श्रमिक को, पूंजीपति की बेटी का हाथ मांगने के दावे मात्र को छोड़कर अन्य सभी विशेषाधिकार प्रदान कर दिये गये हैं। सौभाग्य से मैं वहां उपस्थित

नहीं था। मुझे जवाब देने का अवसर नहीं मिला। यह सच है कि श्रमिक कानून का उद्देश्य श्रमिक को पूंजीपति का बेटा बना देना है। वास्तव में तो वह उसका जमाई है। लेकिन कानून उसे पूंजीपति का बेटा बना देता है। अभी तक ऐसा ही हुआ है। क्योंकि वह और उसका जमाई इस बात को लेकर लड़ते रहे हैं कि बेटे का दिवाला निकल गया है और देश नुकसान उठा रहा है। यह दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है लेकिन मैंने उन महान व्यक्तियों के बहुत से लेख देखे हैं जो सभी उद्योग के कर्णधार हैं। यह स्थिति क्षोभकारी एवं नागवार है।

दूसरी ओर मैंने हिन्दुस्तान टाइम्स में बिड़ला का लिखा हुआ एक लेख पढ़ा था जिसमें उन्होंने कहा था कि लाभ ही औद्योगिक उत्पादन का एक मात्र उद्देश्य है। महात्मा गांधी के बारे में उनके लेखों से मुझे पता चला कि वह हमारे देश का एक सज्जन और धर्मात्मा व्यक्ति है। मैं उनके इस कथन से आश्चर्य चकित हूं। पुरानी उक्ति है "त्यागाय सम्भृतार्थानाम्।" मुझे यकीन है कि उन्होंने यह उक्ति पढ़ी होगी और इससे यह शिक्षा ली होगी कि जो भी सम्पत्ति अर्जित की जाती है, वह दूसरों को देने के प्रयोजन के लिये होती है। संग्रह व्यक्ति का धर्म नहीं है। इस देश में वह व्यक्ति महान नहीं समझा जाता जिसने अपने हाथ में मूल्यवान पदार्थ संग्रह कर लिये हैं, वह कितना आयकर देता है या वह कितना लगान वसूलता है, इस बात से भी बड़ा नहीं माना जाता। उसे यहां तीसरी श्रेणी में रखा जाता है। लेकिन श्रेष्ठतम वही है जो देता है। यदि वह निश्चय कर ले तो वह इस देश में उद्योग का अधिपति हो सकता है। यह कहना गलत है कि यदि पिता अपने बच्चों का पालन पोषण करता है या पत्नी अपने पति के कल्याण का ध्यान रखती है तो उस के पीछे उसका लाभ कमाने का उद्देश्य होता है।

जो बड़े-बड़े मंदिर बनाये गये थे वे लाभ के लिये नहीं बनाये गये। यह कहना मानव बुद्धि का निरादर होगा कि सभी कार्य लाभ के लिये किये जाते हैं। दूसरी ओर मैं अपने मित्रों को यह विश्वास दिलाता हूं कि इस देश में किये गये महान आविष्कार और ज्ञानकोष में दिये गये महान योगदान लाभ के प्रयोजन से नहीं किये गये। सारे कवि एवं महान वैज्ञानिक गरीब ही रहे। चूंकि वे गरीब पैदा हुए इसलिये उन्होंने ज्ञान कोश को इतना अधिक समृद्ध किया। मैं देखता हूं कि ये उद्योगपति इस देश में केवल पूंजी निवेश करने वाले ही हैं। लेकिन उद्योग में प्रत्येक व्यक्ति के लिये पर्याप्त विस्तृत क्षेत्र है। उसमें छीना झपटी करने की कोई जरूरत नहीं है। ऐसा नहीं है कि सारे अवसर उद्योगपतियों के हाथ में चले गये हैं। इस बारे में हमें लड़ना नहीं चाहिये। हमारी संस्कृति, हमारा धर्म अनिवार्यतः शांति का है। हमने सरकार द्वारा निर्धारित नीति संबंधी विवरण सुन लिया है। इसमें श्रमिकों को संतुष्ट किया गया है और यदि नहीं भी किया गया है तो उन्हें संतुष्ट हो जाना चाहिये क्योंकि उन्हें उद्योग में साझीदार बना दिया गया है। उनसे यही अपेक्षा की

जाती है कि कम से कम भगवान के लिये वे कुछ समय तक झगड़ा न करें। कोई द्विपक्षीय या त्रिकोणीय संघर्ष नहीं होना चाहिये। जहां तक उद्योगों का सम्बन्ध है उन्हें दस वर्ष का समय दिया गया है लेकिन आपको इस बारे में अन्तिम तिथि निर्धारित करनी चाहिये जबकि आर्थिक समिति ने ऐसा नहीं किया है। अभी तक कोई अन्तिम तारीख निश्चित नहीं की गयी है। सभी उद्योगों के लिए एक जैसा मानदण्ड रखना उद्योग के विकास के हित में नहीं होगा जबकि उद्योग मंत्री ने यह निर्धारित किया है कि एक तदर्थ समिति नियुक्त की जायेगी जो यह बतायेगी कि सामान्य रूप से पूंजी पर कितना लाभ मिलना चाहिये।

मैंने पाया है कि नीति सम्बन्धी विवरण पूंजीपति तथा श्रमिक दोनों के ही लिये उचित है और यह इस बात का आमंत्रण है कि अब और लड़ाई न की जाये और उस युद्ध विराम का पालन किया जाये। वास्तव में पीछे दिसम्बर में उन्होंने यह समझौता स्वीकार कर लिया था। दुर्भाग्य से दिसम्बर के बाद हमारे अपने मंत्री इधर-उधर यह कहते रहे कि इस तरह का कुछ अभिप्रेत नहीं है। मैं अपने सभी मंत्रियों तथा प्रभारी व्यक्तियों से अपील करता हूं कि वे अपने शब्दों या कामों से श्रमिकों या पूंजीपतियों के मन में यह शंका उत्पन्न न होने दें कि वे उस नीति पर कायम नहीं है या उन्होंने उस नीति का महत्व कम कर दिया है जो कि प्रतिपादित की गयी है। इसका एक परिणाम यह होता है कि बाजार में मन्दी आ जाती है। ऐसा नहीं है कि केवल इसी कारण से बाजार में मन्दी आ जाती है।

मैं एक और बात कह कर समाप्त करुंगा। श्रीमान्, जांच पड़ताल करने के बाद मुझे पता चला है कि इनमें कुछ पूंजीपति स्वयं ही इन पड़तालों के लिये जिम्मेदार हैं। एक पूंजीपति दूसरे पूंजीपति का गला काटने की कोशिश करता है। मद्रास में बिन्नी मिल्स में हुई हड़ताल, लखनऊ के कुछ व्यापारियों की गतिविधियों के कारण हुई। वास्तव में मैं इसके लिये श्री जे० पी० श्रीवास्तव को जिम्मेदार नहीं ठहराता। तथ्य यह है कि एक कपड़ा मिल दूसरी कपड़ा मिल में हड़ताल कराने के लिये व्यग्र रहती है। श्रमिकों के साथ झगड़ने का क्या लाभ?

अन्त में मैं यहां उपस्थित सदस्यों से अपील करता हूं। हमने इस सदन में दो प्रख्यात व्यक्तियों को जिनमें एक प्रख्यात पूंजीपति श्री जे० पी० श्रीवास्तव है तथा दूसरे एक समाजवादी श्री मसानी को सुना है। वे दोनों जनता के समक्ष अपने विचार व्यक्त कर सकते हैं और उसके बाद वे एक ही परिवार में ससुर और जमाई के रूप में रह सकते हैं। अब प्रो० शाह यह कह सकते हैं कि इस देश में पूर्ण समाजवाद होना चाहिए। मैं उन से सहमत हूं। लेकिन श्रीवास्तव यह कह सकते हैं कि समाजवाद होना ही नहीं चाहिये।

ये सब कहने की बातें हैं। आइये फिर पूंजीवाद की तरफ लौटें। लेकिन फिर भी हम सभी एक ही परिवार के सदस्यों की तरह ससुर तथा जमाई अर्थात् श्रीवास्तव और मसानी की तरह साथ-साथ रह सकते हैं। वास्तव में इस प्रस्ताव का यही उद्देश्य है।

मैं आशा करता हूं कि ब्रिटेन ने ऐसा कर लिया है। ब्रिटेन में वे इस बारे में पुस्तकें लिख सकते हैं लेकिन जब राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था, श्रमिकों तथा पूंजीपतियों की रक्षा करने की बात आती है, वे एक जुट हो जाते हैं और सरकार के साथ इस बात पर सहमत होते हैं कि वे अमुक परिमाण में उत्पादन करेंगे, चाहे वे अधिक मजदूरी दिये जाने के प्रश्न पर सहमत न हों। उनमें एक फेरी समझौता हो जाता है।

इसलिये आओ हम सब भी इस देश की प्रत्येक महान और शानदार वस्तु के नाम पर इस नवोदित राष्ट्र को ठोस आर्थिक आधार प्रदान करने की कोशिश करें। हम केवल आर्थिक लोकतंत्र ही नहीं बल्कि राजनैतिक लोकतंत्र भी चाहते हैं। रूस का उदाहरण देना बहुत आसान है लेकिन वहां अधिनायक तंत्र हैं। श्री जे० पी० श्रीवास्तव तथा उनके जैसे अन्य लोग रेलों तथा इस प्रकार के अन्य उद्यमों की व्यवस्था, राज्य द्वारा किये जाने की भर्त्सना करते हैं और यदि वे यही कहते रहें कि इस प्रकार की प्रबन्ध व्यवस्था में कार्यकुशलता नहीं होती तो मैं यह कहूंगा कि वे लोकतंत्र को पृष्ठभूमि में ले जा रहे हैं तथा दूसरी ओर अधिनायक वाली व्यवस्था ले आयेंगे क्योंकि अधिनायक गुलामों पर हुक्म चलाने वाला हो सकता है।

इन परिस्थितियों में हमें इसे एक अस्थायी संधि मानना चाहिये। हो सकता है कि इस से सभी तरह के मतों का पूरी तरह एवं समग्र रूप में समाधान न होता हो। तथापि इस समस्या का यही सर्वोत्तम हल है। हम सब को मिलकर काम करना चाहिये और समाज के सभी वर्गों को इस देश के विकास व समृद्धि में योगदान करना चाहिये। मैं तहेदिल से सिफारिश करता हूं कि यह सदन इस नीति संबंधी विवरण का अनुमोदन करें।

* * * *

*हम सभी ने माननीय वित्त मंत्री का भाषण बड़े ध्यान से सुना। मूल्यों को कम करने तथा देश मद्रास्फीति की दर को कम करने के बारे में इस वर्ष विद्यमान स्थिति और आगामी वर्ष में होने वाली संभावनाओं की पुनरीक्षा करने के बाद, उन्होंने इन सभी बुराइयों को समाप्त करने के लिये जिस रामबाण औषधि का सुझाव दिया है, वह यह है कि अधिक उत्पादन किया जाये। मैं उनसे पूरी तरह सहमत हूं। यह बात केवल कृषि क्षेत्र

---

* उद्योग तथा पूर्ति मंत्रालय की अनुदानों की मांगों पर चर्चा में भाग लेते हुए संसदीय वाद-विवाद, दिनांक 16 मार्च, 1950, खण्ड तीन, भाग दो, 1950, कालम 1642-1646।

के बारे में ही नहीं बल्कि उद्योग क्षेत्र के बारे में भी सच है। यदि देश में प्राथमिक वस्तुओं का ही उत्पादन विपुल परिमाण में कर लिया जाये तो इतना करने मात्र से ही मूल्य कम हो जायेंगें और मुद्रा स्फीतिकारी प्रवृत्तियों का ह्रास होने लगेगा। अभी कुछ ही दिन पहले हमने कृषि पर चर्चा की थी। निःसंदेह कृषि को बढ़ावा दिया गया है और सरकार आवश्यक कदम उठा रही है। जहां तक उद्योगों का सम्बन्ध है, हम जानते हैं कि सरकार द्वारा प्रतिपादित और इस सदन द्वारा 6 अप्रैल, 1948 को अनुमोदित नीति ने, समस्त उद्योग क्षेत्र को दो भागों में बांट दिया है जिसमें एक क्षेत्र सरकारी उद्यमों के लिये तथा दूसरा गैर सरकारी उद्यमों के लिये आरक्षित है। इससे पहले कि मैं यह बताना आरम्भ करूं कि पुनरीक्षाधीन वर्ष के दौरान उद्योग तथा पूर्ति मंत्रालय ने पहले क्षेत्र में कितनी प्रगति की है या दूसरे क्षेत्र में उत्पादन बढ़ाने के लिये क्या परिवर्तन किये हैं और आगामी वर्ष में उत्पादन में कितनी वृद्धि होने की संभावना है, मैं उक्त मंत्रालय की स्वीकृति के लिये या उसके द्वारा अपनाये जाने के लिये एक सामान्य प्रस्ताव रखना चाहूंगा। बहुत से उद्योग हैं लेकिन मंत्रालय को इस क्षेत्र में नकारात्मक ढंग से काम नहीं करना चाहिये। सरकारी उद्यमों के लिये आरक्षित क्षेत्र में यह स्वयं मंत्रालय का कर्तव्य एवं दायित्व है कि वह इन उद्योगों का कार्यभार अपने हाथ में लेकर उन्हें यथासम्भव प्रोत्साहन दे। गैर सरकारी उद्यमों के क्षेत्र में भी मैं माननीय उद्योग मंत्री जी से आग्रह करुंगा कि वह सर्वप्रथम समाज की आवश्यकता पूर्ति की जिम्मेदारी अपने ऊपर लेकर एक-एक करके सभी उद्योगों में यह देखें कि विभिन्न स्त्रोतों से इस देश में किस-किस वस्तु का आयात किया जा रहा है और उसे गैर सरकारी उद्यमों को यदि वे तैयार न हों तो विभिन्न तरीकों से इस बात के लिये तैयार करने का प्रयास करना चाहिये कि वे उन वस्तुओं का बड़े पैमाने पर उत्पादन करें जिनका इस देश में विभिन्न देशों से आयात किया जाता है। श्रीमन, उद्योग मंत्रालय को यह बताने की स्थिति में होना चाहिये कि अमुक नया उद्योग इस वर्ष आरम्भ किया गया है अथवा इससे इस उद्योग विशेष के विकास में सहायता मिली और अपने देश में ही उन वस्तुओं का उत्पादन करने में मदद मिली जिनका कि अब तक आयात किया जा रहा है, मैं नहीं कह रहा हूं कि इस देश में जिन-जिन वस्तुओं का आयात किया जा रहा है, उनमें से प्रत्येक वस्तु का उत्पादन इसी देश में आरम्भ कर दिया जाये, चाहे उस पर कितनी भी उत्पादन लागत क्यों न आये। लेकिन अधिकतर मंत्रालय का यही रुख होना चाहिये और मैं देख रहा हूं कि उद्योग मंत्रालय अपने इस दायित्व को एक सीमा तक पूरा भी कर रहा है। लेकिन इस क्षेत्र में और अधिक पहल और प्रयास किये जाने की आवश्यकता है। आइये, अब हम संक्षेप में इस बात की भी पुनरीक्षा करें कि सरकारी उद्यमों के लिये आरक्षित क्षेत्र में पिछले वर्ष के दौरान अब तक क्या कार्य किया गया है। कार्य की गति बढ़ी है, यह बताने के लिये मैं

कुछ टिप्पणी करना चाहूंगा। श्रीमन् सामान्य रूप से देखा जाये तो सरकारी क्षेत्र में उत्पादित वस्तुओं से न तो मूल्य कम होते हैं और न ही उनसे मुद्रा स्फीति की प्रवृत्ति पर अंकुश लगता है क्योंकि उनके द्वारा उत्पादित वस्तुयें आम उपभोक्ता के उपयोग की वस्तुयें नहीं होती। वे अप्रत्यक्ष रूप से मुद्रास्फीति पर कुछ असर डालती हैं। आइये, सब से पहले सिंदरी कारखाने पर ही विचार करें। यह एक अच्छा उद्यम है। लेकिन इसके द्वारा अब तक किये गये कार्य का मूल्यांकन करने के लिये कुछ आंकड़े दिये गये हैं। तथापि मैं माननीय उद्योग मंत्री जी तथा माननीय वित्त मंत्री जी से भी यह अनुरोध करुंगा कि वे बजट प्रस्तावों के अलावा कुछ ऐसी व्यवस्था भी करें या ऐसी पुस्तक प्रकाशित करें जिससे यह पता चल सके कि गैर सरकारी, सरकारी अथवा राज्य उद्यम किस ढंग से या किस प्रकार आरम्भ किये गये हैं, उनके आरम्भ करने का समय क्या है, उनका मूल अनुमान कितना है, प्रत्येक वर्ष कितनी राशि व्यय की गयी, वर्ष के दौरान कितनी प्रगति हुई और उस उद्यम को पूरा करने के लिये अभी और कितनी राशि की आवश्यकता है। अभी तक ऐसी जानकारी का अभाव है, हालांकि एक हद तक इस बात की जानकारी हमें उद्योग मंत्रालय द्वारा परिचालित परिपत्र से मिल जाती है। मैं कहता हूं कि यह काम नियमित रूप से होना चाहिए क्योंकि हमने रेलवे जैसे महत्वपूर्ण विषय पर एक पृथक बजट प्रस्तुत कर उसे संसद् के समक्ष प्रस्तुत किया है। ऐसी सम्भावना है कि रेलवे के समान विभिन्न राज्यों में उद्यम एक के बाद दूसरे महत्वपूर्ण सिद्ध होंगे और इसलिए बजटीय आंकड़ों को विस्तृत रूप से देखना आवश्यक है।

योजना आयोग योजनाएं बना सकता है। परन्तु किसी विशिष्ट राज्य उद्यम द्वारा पूरे वर्ष में की गई प्रगति का लेखा संसद् के समक्ष प्रस्तुत करना आवश्यक है। इसके बजाय, यदि हमें केवल किसी विशिष्ट उद्यम में वर्ष भर में किये गये व्यय का हिसाब दिया जायेगा तो हमारे पास मूल प्राक्कलनों के साथ तुलना करने अथवा पूर्व में खर्च की गई राशियों के कोई आंकड़े नहीं रहेंगे। यह सच है कि सिन्दरी के कारखाने के बारे में हमें कुछ आंकड़े प्राप्त हुए कि इसमें कुल खर्च 22 करोड़ रुपये के बराबर होगा। मुझे यह ज्ञात नहीं कि मूल प्राक्कलन क्या था। यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण कारखाना है और यह जितना शीघ्र आरंभ हो जाये, उतना ही अच्छा होगा।

इसमें कोई सन्देह नहीं है कि विभिन्न परिस्थितियों के कारण हम निर्माण पूरा कर उत्पादन आरम्भ नहीं कर पाये। हमें यह बताया गया है कि इस वर्ष के अगस्त में कारखाना पूरा हो जायेगा और तदुपरान्त उसमें उत्पादन आरम्भ करने में पूरा एक वर्ष लगेगा। मैं माननीय मंत्री महोदय से निवेदन करुंगा कि कार्य की गति तेज हो

जाये। साथ ही इस बात का ध्यान रखा जाये कि खर्च कम हो। यह सच है कि जो भी धन खर्च किया जायेगा वह व्यर्थ नहीं जायेगा। क्योंकि इस कारखाने के उत्पादों से देश में कृषि के क्षेत्र में उत्पादन की मात्रा में वृद्धि होगी।

इस संबंध में मैं अलवे के कृषि उर्वरक कारखाने का उल्लेख करना चाहता हूं। इस उद्योग में जहां कहीं भी गैर-सरकारी उद्यम है, राज्य को उसमें अवश्य सहायता करनी होगी। मुझे इस बात का खेद है कि यह उद्योग जो ट्रावणकोर सरकार के संरक्षण में प्रारम्भ हुआ और मद्रास सरकार की सहायता से आगे बढ़ा, भारत सरकार की ओर से उपेक्षित रहा है। मुझे पता चला है कि इस संस्था की ओर से सरकार के पास 50 लाख रुपये के अंश खरीदने के लिए जो प्रार्थना पत्र भेजा गया था, उसका समर्थन सरकार ने बड़ी ही अनिच्छा से किया है। इस बात को ध्यान में रखते हुए कि ट्रावणकोर सरकार, मद्रास सरकार और इस संस्था के अन्य तीन भागीदार हैं, मैं इस कारखाने के पूंजी-निर्माण को इन सभी तीन सरकारों का संयुक्त उद्यम बनाने पर सहमत हूं। मुझे मालूम नहीं कि उन्होंने ऐसा क्यों नहीं किया और उन्होंने उन्हें ऋण देना क्यों स्वीकार नहीं किया। क्योंकि उनकी ऋण प्राप्त करने की स्थिति अनिच्छित है, उन्होंने अपना वित्तपोषण करने के लिए एक विदेशी बैंक से सहायता ली। मैं कहना चाहता हूं कि वह कारखाना बहुत अच्छा काम कर रहा है, और उसका उत्पादन उसी समय वहीं बिक जाता है। इसकी उत्पादन क्षमता बहुत अधिक है और अब वह अपनी क्षमता का आधा ही उत्पादन करता है। मुझे विश्वास है कि माननीय मंत्री इस मामले में अधिक रुचि लेंगे और वित्त मंत्री महोदय अधिक उत्पादन के लिए आवश्यकतानुसार ऋण या राज सहायता शीघ्र प्रदान करेंगे।

इसके आगे मैं इस देश में उन दो इस्पात कारखानों के बारे में दो शब्द कहना चाहूंगा जिनका सर्वेक्षण तीन या चार पश्चिमी और योग्य इंजीनियरों द्वारा किया गया है। एक कारखाना मध्यप्रदेश में और दूसरा उड़ीसा में खोला जाने वाला है। मैं इन दो कारखानों के शीघ्र चालू होने का स्वागत करता हूं। संसद को याद होगा कि यह उद्योग राज्य उपक्रम के लिए रक्षित है और केन्द्रीय सरकार को यह अधिकार दिया गया है कि वह जमशेदपुर के टाटा को यह अनुमति दे सकती है कि यदि उनकी इच्छा हो, तो वे दस वर्ष के भीतर अपने कारखाने को बढ़ा सकते हैं। मेरी समझ में नहीं आता कि टाटा को प्रोत्साहन क्यों नहीं दिया जा रहा है और अन्य गैर-सरकारी संस्थाओं को प्रोत्साहित करने के लिए भी कुछ नहीं किया गया है। मुझे ज्ञात है कि बंगाल इस्पात निगम को 5 करोड़ रुपये स्वीकार किये गये हैं। टाटा ने इस्पात का उत्पादन बढ़ाने के लिए 15 या 20 करोड़ रुपये की मांग पेश की थी जिस पर सरकार ने 87.5 करोड़ रुपये की लागत पर एक कारखाना स्थापित करने का विचार किया है। यदि टाटा को 20 करोड़ रुपये की यह धनराशि स्वीकृत की जायेगी तो वे दस लाख टन इस्पात का अधिक उत्पादन कर सकेंगे। मैं

चाहता हूं कि हम इस बारे में कोई औपचारिकता न अपनायें। हमारे पास बहुत कम समय है। इसलिए हमें किसी न किसी रूप में उत्पादन बढ़ाने का प्रयत्न करना चाहिये। हमें सुस्थापित गैर-सरकारी उद्योगों को अपना समझ कर उनकी सहायता करनी होगी। हमें किसी भी समय उन पर अंकुश रखने का पूरा अधिकार होगा। इसलिए मैं मंत्री महोदय से निवेदन करूंगा कि अधिक मात्रा में इस्पात का उत्पादन करने में टाटा की सहायता की जाये।

इस संबंध में मैं कहना चाहता हूं कि इस्पात कारखानों के उत्पादों का आवंटन इस दृष्टि से नहीं किया गया जिससे कृषि का उत्पादन बढ़े। मुझे खेद है कि माननीय मंत्री उद्योगों के लिए अधिक उत्सुक हैं और उन्होंने कृषि की बिल्कुल उपेक्षा कर दी है। उन्होंने इस्पात उत्पादन का बहुत कम अंश ही कृषि के लिए आवंटित किया है। इस देश में निर्मित नौ लाख टन और आयातित चार लाख टन इस्पात में से मात्र एक लाख टन ही कृषि उपकरणों के निर्माण के लिए आवंटित किया गया है। उत्पादन के आकड़ों और कृषि के लिए उपलब्ध मात्रा के बीच के भारी अन्तर पर जरा ध्यान दीजिये। मैं विवरणिका के पृष्ठ 7 में दिये गये आंकड़ों को उद्धृत करूंगा। यदि मेरे आंकड़ों में कोई गलती हो, तो मंत्री महोदय उन्हें ठीक कर दें।

> वर्ष 1949-50 की तीसरी तिमाही में आवंटन में 14,367 टनों से 39,412 टनों तक की वृद्धि हुई। वर्ष का कुल आवंटन 94,515 टन था।

महोदय, सदन को ज्ञात है कि केन्द्रीय सरकार 1000 कुएं खुदवाने के लिए 500 रुपये प्रति कुएं के हिसाब से सहायता देती रही है। परन्तु इन कुओं को खोदने के लिए सब्बल केवल 25 दिये गये हैं। 1000 कुएं खुदवाने के लिए मात्र 25 सब्बल से कैसे होगा जबकि केवल एक ही कुआं खुदवाने के लिए 25 सब्बल चाहिये। इस प्रकार समन्वय के अभाव में सरकार जो एक हाथ से देती है दूसरे हाथ से ले लेती है। इसलिए मैं माननीय मंत्री से अनुरोध करूंगा कि वे इस बात की ओर ध्यान दें कि कृषि कार्य के लिए उपकरण बनाने के लिए अधिक लोहा और इस्पात दिया जाये। मुझे बताया गया है कि कृषि कार्य के लिए उत्पादन का 50 प्रतिशत आवंटित किया गया है। परन्तु आज मैं देखता हूं कि इस कार्य के लिए 50 प्रतिशत के बजाय मात्र 10 प्रतिशत ही वितरित किया जाता है।

मैं पुनः एक बार सिन्दरी कारखाने का उल्लेख करूंगा। इस संबंध में मेरा सुझाव यह है कि इसका प्रबंध सीधे उद्योग मंत्रालय द्वारा न होकर किसी निगम को सौंप दिया जाये। यदि ऐसा नहीं किया जाता है तो निर्धारित कार्यक्रम को पूरा करने के लिए विभिन्न मंत्रालयों में अत्यधिक विलंब हो जायेगा। परन्तु वह निगम दामोदर घाटी निगम के समान

न हो। हमें अनुभव से सीख लेना चाहिये। जब कोई निगम स्थापित कर दिया जाता है वह संसद् के अधिकार की उपेक्षा करके स्वयं को स्वायत्त होने का दावा करता है। इससे जो लोग कल तक हमसे निर्देश प्राप्त करते थे, सत्ता पर आ जाते हैं और स्वतंत्र रूप से अमरीका और अन्य देशों से बातचीत करने लगते हैं। ऐसी बातें नहीं होनी चाहियें। हम सिन्दरी कारखाने के लिए एक निगम स्थापित तो कर सकते हैं, परन्तु उसका वार्षिक विवरण हमारी जांच के लिये उतना ही खुला हुआ होना चाहिये जिस प्रकार से हम दूसरे उपक्रमों का प्रबंध करते हैं। इन शर्तों पर हम सिन्दरी कारखानों के लिए एक निगम की स्थापना कर सकते हैं।

अब मैं मैसूर में स्थापित किये जाने वाले मशीनी औजार कारखाने के बारे में कुछ कहना चाहता हूं। अपने हाल के कलकत्ता दौरे के दौरान मैंने देखा कि वहां ऐसे अनेक मशीनी औजार कारखाने बढ़ रहे हैं। इंजीनियर्स एसोसिएशन ने हमें इस संबंध में एक अभ्यावेदन दिया है। उन्होंने कहा कि मशीनी औजार बनाने वाला एक कारखाना देश की सब प्रकार की मशीनों के लिए उपयुक्त औजार तैयार नहीं कर सकता। उसके द्वारा कुछ तरह की मशीनों के लिए औजार बनाने में विशेषता प्राप्त की जा सकती है। यदि ये औजार रक्षा कार्यों के लिए हो तो बात और है। परन्तु यदि मकसद यह है कि इन कारखानों में सब प्रकार की मशीनों के लिए औजारों का निर्माण किया जाये, तो जैसा कि इंजीनियर्स एसोसिएशन ने हमें बताया है कि इस उद्योग पर अधिक धनराशि खर्च करने से पहले मंत्रालय इस बात पर और विचार करे।

दो महत्वपूर्ण बातें और हैं जिनका राज्य से सीधे संबंध है। ये मामले हिन्दुस्तान एअर क्राफ्ट्स फैक्टरी तथा विशाखापत्तनम शिपबिल्डिंग यार्ड से संबंधित हैं। हिन्दुस्तान एअर क्राफ्ट्स फैक्टरी के पास अनेक साधन हैं। एक दिन मैं वहां गया और मैंने वहां देखा कि नमूनों की कमी के कारण इसमें पूरी क्षमता से काम नहीं हो रहा था। रक्षा मंत्रालय से नमूनों के आने में विलंब होने के कारण वे अपना काम आरंभ करने में असमर्थ थे।

मैं यह भी बता दूं कि इस कारखाने में रेल के डिब्बे बड़ी आसानी से तैयार हो सकते हैं। परन्तु यह कारखाना ऐसी स्थिति में ला दिया गया है कि इसको आदेश प्राप्त करने के लिये एक विभाग से दूसरे विभाग में दौड़ना पड़ता है ताकि वह अपने श्रमिकों को काम में लगाये रख सके। मेरी समझ में नहीं आता कि माननीय रेल मंत्री हिन्दुस्तान एअरक्राफ्ट्स फैक्टरी के बजाय किसी दूसरी फर्म को यह काम क्यों देते हैं। मुझे बताया गया है इसी परिसर में किसी स्विस फर्म को यह काम दिया गया है यह कोई बात नहीं कि उसे उसी परिसर में या कहीं बाहर इस काम में लगाया गया है। परन्तु किसी स्विस फर्म को अस्तित्व में क्यों लाया जाये? मैंने हिन्दुस्तान एअरक्राफ्टस फैक्टरी में निर्मित

डिब्बों को देखा और पाया कि वे बहुत अच्छे हैं। इसका नमूना स्वीकृत हुआ था और उसे अनेक स्थानों पर प्रदर्शित किया गया है। मैं नहीं समझ पाता हूं कि हम उसी छत के नीचे किसी स्विस फर्म को रखने में क्यों उत्सुक हैं? वे काम करने लगेंगे और अन्ततोगत्वा अपने काम के लिये लाभ का बहुत बड़ा भाग ले जायेंगे। मैं इस मामले में और अधिक जानना चाहता हूं।

मुझे आवंटित समय पूरा होने को आ गया है। मुझे विश्वास है कि अनेक माननीय सदस्य कपड़ा नियंत्रण और अन्य मामलों का उल्लेख करेंगे। अतः मैं स्वयं को विशाखापत्तनम में कार्यरत शिप बिल्डिंग यार्ड तक ही सीमित रखूंगा।

मैं सिन्धिया स्टीम नेवीगेशन कंपनी को बधाई देता हूं। यह कंपनी इस उद्योग के क्षेत्र में सब से आगे रही है। यह बहुत ही कठिन और राष्ट्रीय महत्व का उद्योग है। उस उद्योग को चालू रखने के लिए कंपनी के पास वित्त की कमी है। इस वर्ष उसने तीन जलयान बनाने के लिए सरकार से 1.5 करोड़ रु० की मांग की थी। अगले वर्ष भी वही कठिनाई आने वाली है और उसे राज सहायता के रूप में और 11 करोड़ रु० देने होंगे। मेरा सुझाव है कि एक निगम की स्थापना होनी चाहिये जिसके द्वारा कंपनी की वर्तमान पूंजी तथा आस्तियों उसकी अंश पूंजी के रूप में और सरकार के 1.5 करोड़ रु० उसकी अंशपूंजी के रूप में लिया जाये। इस प्रकार हम इसका काम सीधे अपने हाथों में ले सकेंगे, नौवहन गोदियों की संख्या बढा सकेंगे और साथ ही उद्योग का संचालन अधिक मितव्ययिता से कर सकेंगे। यह बताया गया है कि इसके बाद इस मामले पर विचार किया जायेगा। मुझे इस बात पर आपत्ति है कि 1.5 करोड़ रुपये का अंशदान करने से पहले उन्होंने ऐसा नहीं किया है। उस समय उन्हें निगम को अस्तित्व में ले आना चाहिये था जिससे वे 1.5 करोड़ रु० मूल्य के अंशों को पूंजी में अपने अंशदान के रूप में ले सकते थे। ये मेरे सुझाव हैं।

मंत्रालय जिस रूप में काम कर रहा है उससे मैं बहुत सीमा तक संतुष्ट हूं। मंत्रालय की स्थायी समिति का सदस्य होने के नाते मैं माननीय मंत्री को बधाई देता हूं कि उन्होंने समिति की काफी बैठकें बुलाई हैं। उन्होंने सभी महत्वपूर्ण विषयों में हमारा परामर्श लिया यद्यपि कई अवसरों पर वे हमारे परामर्श से सहमत नहीं हुए। मैं आशा नहीं रखता हूं कि चाहते हुए या न चाहते हुए भी सरकार परामर्शदात्री परिषद का निर्णय सदैव स्वीकार करे। मैं कुल मिलाकर मंत्री को बधाई देना चाहता हूं यद्यपि कुछ बातों में मेरे विचार उनसे भिन्न थे।

मैं एक और सुझाव देना चाहूंगा जो पूंजीगत व्यय से संबंधित है। आपने जो मांगें रखी हैं उनका संबंध केवल उद्योग और आपूर्ति मंत्रालय से है। पूंजीगत व्यय छः या

सात करोड़ रुपये के आसपास है। मैं नहीं समझ पाता हूं कि उसे भी सीधे मांग के रूप में रखकर उस पर विचार क्यों नहीं किया जा सकता। इससे आगे इसे भी एक मांग के रूप में लेना चाहिये। इसका ब्यौरा व्याख्यात्मक ज्ञापन में दिया गया है परन्तु मूल मांग को पृथक रूप से सभा के विचारार्थ नहीं रखा गया है।

औद्योगिक वित्त निगम की स्थापना*

महोदय, मैं अपने माननीय मित्र, पूर्व वक्ता तथा श्री खांडूभाई देसाई की इस बात से सहमत नहीं हूं कि इस विधेयक को रद्द करके नया विधेयक पेश किया जाना चाहिए। मुझे खेद है कि मेरे माननीय मित्रों ने इस बात को नजरअंदाज कर दिया है कि अंग्रेजों के आगमन से पूर्व भारत औद्योगिक क्षेत्र में विश्व के अग्रणीय देशों में एक था लेकिन बाद में हमारा देश मात्र कच्चा माल उत्पादित करने वाला तथा विदेशों में मशीनें आयात करने वाला बन कर रह गया। हमारी अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान बन गई और यही कारण है कि हमारा जीवन स्तर भी नीचे रहा। हमारी राष्ट्रीय आय 100 रुपये प्रतिवर्ष प्रति व्यक्ति से अधिक नहीं है। क्या अब हम नई योजना बनाए जाने का इन्तजार कर रहे हैं? शायद मेरे माननीय मित्र यह नहीं जानते कि योजनाएं बन चुकी हैं और हाल ही में एक समिति नियुक्त की गई है जिसकी अध्यक्षता श्री नियोगी ने की। श्री नियोगी ने इन सभी योजनाओं को समन्वित करके एक योजना तैयार की है। मुझे यकीन है कि सरकार देश में औद्योगिकीकरण हेतु इसी योजना पर अमल करेगी। माननीय वित्त मंत्री ने नीति संबंधी समिति की रिपोर्ट का हवाला दिया जो 25 नवंबर, 1945 को प्रस्तुत की गई थी। इसमें कुछ खास परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है। अगर मेरे माननीय मित्रों ने यह कहा है कि पूरे यूनाईटेड किंगडम का झुकाव वामपंथ की ओर है और इसीलिए वह उद्योगों का राष्ट्रीयकरण कर रहे हैं, तो यह सही है, अगर यही उनकी मंशा है तो मैं उनसे सहमत हूं लेकिन कौन से उद्योगों का राष्ट्रीयकरण किया जाना चाहिए। नीति संबंधी समिति के प्रतिवेदन में कहा गया है कि रक्षा उद्योगों का राष्ट्रीयकरण किया जाना चाहिए। मुझे विश्वास है कि देश के सभी रक्षा उद्योग केन्द्रीय सरकार के हाथ में हैं। अन्य उद्योगों पर प्रान्तीय सरकारों का नियंत्रण है। नीति संबंधी समिति ने यह व्यवस्था की है कि कुछ उद्योगों को अपने स्वरूप तथा राष्ट्रीय महत्व का होने के कारण केन्द्रीय सरकार के हाथ में ही रखना उचित है। विभिन्न प्रान्तों के लिए भी वह उपयोगी है एक अकेले प्रान्त के लिए किसी विशिष्ट उद्योग को थामे रखना संभव नहीं होता यद्यपि उसकी शाखाएं विभिन्न भागों

---

* औद्योगिक वित्त निगम विधेयक संबंधी वाद-विवाद में भाग लेते हुये। संविधान सभा (विधायी) वाद-विवाद, 21 नवम्बर, 1947, पृष्ठ 474-479.

में ही क्यों न हों। इसीलिए उन्होंने उद्योगों को दो भागों में, यथा केन्द्रीय और प्रान्तीय, विभाजित किया। जहां तक केन्द्रीय उद्योगों का संबंध है पैराग्राफ 5 में कहा गया है कि:—

> "वे इन उद्योगों को, जो कि आधुनिक औद्योगिक जीवन की नींव है, जैसाकि लौह और इस्पात उद्योग, भारी इंजीनियरिंग उद्योग, मशीन और टूल उद्योग, भारी रसायनिक उद्योग इत्यदि को विशेष महत्व देते हैं। वह इस बात को भी नहीं भूले कि जहां तक भारी उद्योगों का संबंध है उनकी भी बड़े पैमाने पर मदद की जानी चाहिए लेकिन जहां एक ओर इन उद्योगों के विकास को उच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए वहां दूसरी ओर इसे संतुलित योजना का अंग भी बनाना चाहिए जिसमें उपभोक्ता उद्योगों को भी उचित स्थान दिया गया हो।"

अतः सरकार की नीति स्पष्ट है। जिन उद्योगों को सरकार ने अपने हाथ में लिया है वह चल रहे हैं, अन्य उद्योगों को सरकार अपनी पूंजी लगाकर तथा उसके प्रबंधन में ज्यादा से ज्यादा भागीदारी करके बढ़ावा दे सकती है लेकिन जहां तक एकल उद्योगों का संबंध है, जैसे कि नौपरिवहन उद्योग, सरकार उस उद्योग के लिए एक पृथक निगम बनाने पर विचार कर रही है क्योंकि उसके संसाधनों की व्यवस्था के लिए एक पृथक निगम बनाने की आवश्यकता है। केवल उद्योगों के क्षेत्र में ही नहीं अपितु कृषि के क्षेत्र में भी इसे अपनाया जा रहा है। उदाहरणार्थ देश में कृषि उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए कई सिंचाई परियोजनाएं बनाई गई हैं। माननीय निर्माण कार्य, खान तथा बिजली मंत्री ने चन्द दिन पहले कहा था कि सरकार दामोदर घाटी परियोजना निगम बनाने जा रही है। अतः उद्योग और कृषि दोनों ही क्षेत्रों में जहां भी किसी विशिष्ट उद्योग अथवा सिंचाई के विशिष्ट स्त्रोत को उपयोग में लाना है। यदि वह बहुत बड़ा है तो इस प्रकार के केन्द्रीकृत निगम बनाने की बजाए, जोकि कम उद्योगों की आवश्यकताओं को पूरा करेगा, उन्हें विशिष्ट वर्ग के उद्योगों के लिए विशिष्ट निगम बनाने चाहिए। यही सरकार की नीति है। इसलिए वह हवाई यातायात उद्योग के लिए—देश से विदेश में जाने के लिए एक निगम बनाने पर विचार कर रहे हैं।

इन सरकारी और सरकार द्वारा नियंत्रित उद्योगों के बाद इन उद्योगों का स्थान है जिनका संचालन प्राइवेट लोगों द्वारा किया जाएगा लेकिन जिसमें सरकार की भी रुचि होगी और उद्योग की विशालता को मद्दे नजर रखते हुए उस उद्योग के प्रबंधन हेतु वह विशिष्ट

निगम स्थापित करेंगे। देश के समग्र विकास के लिए आवश्यक आधारभूत उद्योग लौह और इस्पात उद्योग तथा भारी रसायन उद्योग हैं। यदि इनके लिए धन उपलब्ध नहीं है तो सरकार को धन देना होगा। जैसाकि माननीय सदस्य जानते हैं कि विद्यमान बैंक, जिनमें अनुसूचित बैंक और रिजर्व बैंक भी शामिल हैं में ऐसी व्यवस्था है कि वे केवल अल्पावधि ऋण देते हैं और वह दीर्घावधि के लिए ऋण नहीं देते। इस संबंध में एक बैंकिंग संशोधन विधेयक विधान सभा के समक्ष पेश किया जाएगा। प्रवर समिति के प्रतिवेदन के बाद बजट सत्र में इसे लिया जाएगा। इस विधेयक का एक महत्वपूर्ण खंड यह है कि कोई भी बैंक प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से किसी व्यापार में भाग नहीं लेगा और केवल अल्पावधि ऋण देगा। उदाहरण के लिए कमर्शियल बैंक को ले लीजिए केवल ऐसे संस्थानों को बैंक की परिधि में माना जाएगा जोकि मांग देयता को स्वीकार करेंगे। अतः बैंकिंग अधिनियम के अनुसार नकदी ही बैंक का आधार है। अतः उधार देने के तरीके पर विभिन्न प्रतिबंध लगाए गए हैं। ऐसा सोचा भी नहीं जा सकता कि उधार तीन अथवा पांच वर्ष से अधिक अवधि के लिए दिया जा सकता है और यदि अचल सम्पत्ति खरीदी जाती है तो एक साधारण बैंक उसका स्वामी नहीं हो सकता। अतः वाणिज्यिक बैंक पश्चिमी बैंकों की रूपरेखा के आधार पर गठित किए गए है जिनका आधार नकदी है और जो मुख्यतः मांग देयता और वर्तमान देयता पर निर्भर है। ऐसे बैंक औद्योगिक निकायों के लिए दीर्घावधि ऋण नहीं देते। इसी कमी को दूर करने के लिए इस औद्योगिक निगम की स्थापना की जा रही है। इस दिशा में कृषि बैंकों तथा इनमें कुछ सादृश्यता है। देश में कृषि में सुधार तथा कृषि उद्योगों के वित्त पोषण के लिए केन्द्रीय सहकारी समिति अधिनियम तथा प्रान्तीय सहकारी समिति अधिनियमों के अंतर्गत सहकारी समितियां स्थापित की गई हैं। सहकारी साख समितियां कार्यरत हैं, प्रान्तीय सहकारी केन्द्रीय बैंक भी हैं। रिजर्व बैंक का एक विशेष विभाग इस संबंध में समय-समय पर परामर्श देने के साथ-साथ वित्तीय सहायता भी दे रहा है। चूंकि यह राशि सामान्यतः अधिक नहीं होती है। इसीलिए सरकार ने इस औद्योगिक वित्त निगम को रिजर्व बैंक की मात्र एक शाखा बनाने के बजाए उसे एक पृथक औद्योगिक बैंक के रूप में स्थापित करना अधिक उचित समझा। निस्संदेह मैं यह जानता हूं और जैसाकि मैंने प्रो० रंगा को भी यह कहते सुना है कि रिजर्व बैंक ने कृषि के लिए वित्त पोषण में वह भूमिका नहीं अदा की जैसीकि उससे अपेक्षा की गई थी। यह तो उस भाग को अलग करके कृषि आवश्यकताओं के लिए एक शीर्ष बैंक की स्थापना के लिए तर्क था जोकि प्रस्तावित औद्योगिक निगम का अंग होगा। माननीय सदस्य जानते हैं कि कुओं की खुदाई तथा सिंचाई स्त्रोतों की मरम्मत जैसे कृषि कार्यों के लिए विभिन्न प्रान्तों में भूमि बंधक बैंक स्थापित किए गए हैं। अल्पावधि ऋणों के लिए साधारण सहकारी ऋण समितियां है और दीर्घावधि ऋणों के लिए भूमि

बंधक बैंक है जहां तक कृषि के लिए ऋण का संबंध है हमारे यह दो संस्थान हैं किन्तु राष्ट्रीय स्तर पर कोई सेंट्रल बैंक नहीं है जो कि केवल कृषि के लिए हो। आशा है कि मेरे माननीय मित्र श्री रंगा अपने प्रभाव द्वारा वित्त मंत्री को कुछ ऐसा निगम बनाने के लिए प्रेरित करेंगे। जहां तक वर्तमान निगम का संबंध है इसका काफी समय से इन्तजार था यह बहुत पहले बन जाना चाहिए था। यह विधेयक अच्छा है और प्रवर समिति में इसमें और सुधार किया जा सकता है। अतः मैं इस बात से सहमत नहीं कि इसे वापिस ले लिया जाना चाहिए और अगर एक बार इसे वापिस ले लिया गया तो न जाने यह कितने समय तक पड़ा रहेगा। एक बार हाथ से निकल गया तो इसे रद्दी की टोकरी में फैंक दिया जाएगा। यह बाधक नहीं है। वित्त मंत्री से अनुरोध है कि वह वक्तव्य दें। नीति संबंधी समिति के प्रतिवेदन में कहा गया है कि इसे काम में लाया जाएगा। अतः यह कहना कि इसका संबंध केवल बड़े व्यापार से है सही नहीं है। हम चाहते हैं कि बड़े और छोटे दोनों उद्योगों का विकास हो। मैं कोई उद्योगपति या पूंजीपति नहीं हूं। लगता है कि बड़े छोटे उद्योगों में कुछ संघर्ष है। दोनों एक दूसरे के प्रति उदासीन हैं। शेयर मार्किट पर जो इसका असर पड़ा है इसे देखकर मुझे दुख हुआ है। अतिरिक्त लाभ कर का देश के उद्योगों के विकास पर असर पड़ा है। इस संबंध में हमें फैसला कर लेना चाहिए यदि सरकार विभिन्न उद्योगों को अपने हाथ में लेती है तो बड़े उद्योगों को छोड़ देना चाहिए इसके विपरीत यदि सरकार एक विशिष्ट प्रकार के उद्योगों को अपने अधिकार में लेती है तो अन्य उद्योगों के विकास के लिए पर्याप्त गुंजाइश रखी जानी चाहिए। एक निश्चित योजना के अभाव ने इन सभी उद्योगपतियों को कठोर बना दिया है। वह इन उद्योगों को शुरु करने के लिए आगे नहीं आ रहे। मैं जानता हूं कि इस संबंध में केवल उद्योग आरंभ किए जाने के प्रस्ताव आते हैं लेकिन उनका कोई ठोस आधार नहीं होता। विभिन्न संयुक्त पूंजी कम्पनियों की मासिक विवरणियों में, विशेषकर अगस्त और सितंबर की मासिक विवरणी में, दिया गया है कि अगर 25 कम्पनियां खोली गई हैं तो 20 कम्पनियां बन्द हो गई हैं।

यह सामग्री का प्रश्न नहीं है, पैसा नहीं मिल रहा। बड़े पैमाने के उद्योगों के लिए इस प्रकार का निगम बनाया जाना चाहिए। इसलिए जब हम एक बड़े उद्योग के लिए इस प्रकार का निगम बनाने जा रहे हैं तो यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि छोटे उद्योगों को बढ़ावा दिया जाएगा। उनकी भी बारी आएगी। अब तक कुटीर उद्योगों की सहायता नहीं की गई। जिस दिन से सहायता के लिए आवेदन दिया जाता है और जब तक बजट पेश होकर उस आवेदन पर कार्रवाई होती है तब तक कुटीर उद्योग बन्द हो चुका होता है। जहां तक प्रान्तों में कुटीर उद्योग अधिनियम का संबंध है वित्त मंत्री को औद्योगिक ढांचे के विभिन्न पहलुओं पर नजर रखनी होगी। यह सही है कि हमें एक फैडेरेशन बनाना

चाहिए। श्री संथानम ने भी फैडेरेशन बनाने का सुझाव दिया है। बैंक के पास विभिन्न यूनिटों वाला एक फैडेरेशन होना चाहिए। आशा है वित्त मंत्री के जहन में यह बात होगी और वह इस फैडेरेशन के साथ और कई यूनिटों को संबद्ध करने की कोशिश करेंगे।

जहां तक इस निगम में शेयरधारियों का सम्बन्ध है, मैं इस बात से सहमत नहीं हूं कि शेयर की राशि घटा कर 100 रुपये या 15 रुपये कर दी जाये और उन्हें विभिन्न संयुक्त पूंजी कम्पनियों के शेयरों के साथ बाजार में बेच दिया जाये। इस विधेयक का उद्देश्य वहां-वहां पूंजी उपलब्ध कराना है जहां यह उपलब्ध नहीं है। रोजमर्रा के कार्य के लिए सम्बद्ध उद्योगों की सहायता करने के लिए अन्य विभाग भी है। इसके क्षेत्र को विस्तृत बनाने के लिए पूजीगत वस्तुओं और भवनों की खरीद, जिसके लिए शीघ्र भुगतान नहीं करना होता, के लिए दीर्घकालिक ऋण आवश्यक होता है। इस प्रकार के संस्थान के लिए किसी केन्द्रीय संस्थान को अंशधारी बनाया जाना चाहिए। अन्य ऋणों के लिए पर्याप्त धनराशि प्राप्त नहीं हो सकेगी। यदि प्रादेशिक सरकारें अपेक्षाकृत छोटे उद्योगों के लिये छोटे निगमों की स्थापना करना चाहे और यदि सामान्य व्यक्ति से भी पैसा लिया जाता है तो आप पैसा कहां से प्राप्त कर सकते हैं? जब प्रादेशिक ऋण जारी किये जाते हैं, तब उनका निम्नांकन करना पड़ता है। धन का चलन सुगम नहीं होता। अतः इस विधेयक का उद्देश्य इस संस्था को खुले बाजार में प्रतिस्पर्धा कराना नहीं है। इसका उद्देश्य प्रतिस्पर्धा नहीं है। वस्तुतः बीमा कम्पनियां यह नहीं जानती कि धन का उपयोग कैसे करें। अतः बीमा कम्पनियों के लिये यह एक रास्ता बनेगा। जब वे भुगतान के लिये प्रीमियम का निर्णय करते हैं तो वे अपने नीति सम्बन्धी वक्तव्य पर निर्भर करते हैं। उनका कहना है कि महत्वपूर्ण तत्व ब्याज की राशि है जो उन्हें अपने निवेशों पर मिलती है। बीमा कम्पनियों और वित्तीय संस्थानों से इस निगम के लिये शेयरधारियों के रूप में अंशदान लिया जाता है। मैं इस शेयर के मूल्य को कम करने के लिए सहमत नहीं हूं। इसका यह अर्थ नहीं कि कोई बड़ा व्यापारी अथवा उद्योगपति इस पर कब्जा कर लेगा। यह संस्थान कब्जा करेगा। इस संस्थान के सम्बन्ध में इस प्रकार की घबराहट नहीं होनी चाहिए। यह शीघ्र ही स्थापित हो जायेगा।

काम की मात्रा के सम्बन्ध में मैं श्री संथानम से सहमत हूं। मुझे पता है कि कपड़े के कुछ महत्वपूर्ण उद्योगों में 80 करोड़ रुपये की पूंजी है; लोहा और इस्पात में 40 करोड़ रुपये तथा चीनी में 20 करोड़ रुपये की पूंजी है। उनके द्वारा जारी किये गये डिबेंचरों सहित उनकी शेयर-पूंजी कुल मिला कर 700 करोड़ रुपये हैं। यदि इस उद्योग में इतनी पूंजी है तो 20 करोड़ रुपये की पूंजी कौन सी है जिसकी गणना मेरे माननीय मित्र वित्त मंत्री कर रहे हैं। यह मूल रूप से उस भद्र व्यक्ति के हाथों में थी जो स्वयं वित्तपोषक नहीं थे।

चूंकि हम अभी भी डोमिनियन में है अतः हम महसूस करते हैं कि हम अभी भी स्वतन्त्र नहीं हैं। मुझे यह देख कर प्रसन्नता हुई है कि मेरी यह धारणा सही निकली है कि वास्तव में वे मन्त्रीगण हैं। माननीय वित्त मंत्री इस कार्य के लिये बहुत उपयुक्त हैं। निस्संदेह वे समय नहीं गंवाना चाहते। वे इस कार्य के लिये बहुत उपयुक्त हैं क्योंकि वे स्वयं भी एक उद्योगपति हैं और किसी समय वे टैरिफ बोर्ड के अध्यक्ष थे और मुझे विश्वास है कि वे उसमें संशोधन करेंगे।

मैं एक-दो सुझाव देना चाहता हूं। एक औद्योगिक आयोजना आयोग शीघ्र ही बनाई जानी चाहिये अन्यथा यहां धनराशि को सौंदर्य प्रसाधनों में व्यर्थ ही व्यय किया जा सकता है। सौंदर्य प्रसाधनों अथवा तम्बाकू अथवा सिगरेटों का उद्योग लगाया जा सकता है। इस निगम के प्रभारी व्यक्तियों की उस उद्योग से जिसे पहले स्थापित किया जाता है, शीघ्र लाभ कमाने में रुचि होगी। उदाहरणार्थ, सौंदर्य प्रसाधनों और तम्बाकू की खाद्य वस्तुओं की तुलना में अधिक बिक्री होती है और उनसे अत्यधिक लाभ होता है। मेरा यह सुझाव है कि उन्हें शीघ्र ही यह योजना बनानी चाहिये। जिससे निगम को यह पता रहे कि कौन से उद्योगों की स्थापना की जानी है अन्यथा यह धनराशि उस क्षेत्र अथवा उद्योग में नहीं लगेगी जिसे उसकी वास्तव में आवश्यकता है। इसके लिये उन्हें प्राथमिकताएं निर्धारित कर देनी चाहिए।

मैं यह भी कहना चाहता हूं कि इस विधेयक का क्षेत्राधिकार कुछ सीमित प्रकार का है। इसका विस्तार किया जाना चाहिए। न केवल वित्तीय अपितु तकनीकी परामर्श भी दिया जाना चाहिये। मैं अब आपको आस्ट्रेलिया में एक इसी प्रकार के संस्थान के क्षेत्राधिकार के बारे में पढ़ कर सुनाता हूं। आस्ट्रेलिया के कामनवेल्थ बैंक अधिनियम, 1945 के अन्तर्गत, इसी प्रकार के औद्योगिक निगम निम्नलिखित हैं:-

(क) औद्योगिक उपक्रमों, विशेषतया छोटे उपक्रमों की स्थापना और विकास के लिये वित्त की व्यवस्था करना।

(ख) औद्योगिक उपक्रमों की स्थापना और विकास में सहायता करना,

(ग) औद्योगिक उपक्रमों के कुशल संगठन और संचालन के लिये उनके कार्यों के सम्बन्ध में परामर्श देना।

ऐसा प्रतीत होता है कि स्थायित्व के लिये परामर्श देने के लिए उनके पास न केवल इन्जीनियरों जैसे तकनीकी व्यक्ति अपितु ऐसे व्यक्ति भी उपलब्ध हैं जिनके पास विपुल औद्योगिक अनुभव है जो इस बात का परामर्श दे सकते हैं कि समुदाय के लिए कौन सा उद्योग लाभदायक सिद्ध होगा।

इसके अतिरिक्त सरकार की औद्योगिक नीति के वक्तव्य में एक यह सुझाव है कि एक ही स्थान विशेष में सभी उद्योगों को केन्द्रीकृत नहीं किया जाना चाहिए इसका मेरे माननीय मित्र प्रो० शाह ने भी उल्लेख किया है। मैं उनसे सहमत हूं। एक ही स्थान पर सभी प्रकार के उद्योगों के केन्द्रीयकरण को रोकने का एक उपाय है कि लाइसेंस प्रणाली लागू कर दी जाये जिसके तहत इन उद्योगों को वहीं लगाया जाये जहां कच्चा माल और श्रमिक उपलब्ध हों। औद्योगिक निगम को इस प्रकार की योजना बनानी चाहिये और स्थानों के अनुसार उद्योगों की स्थापना की जानी चाहिये। उद्योग चाहे बिरला लगाये या टाटा, उद्योग लगने चाहिए क्योंकि अभी देश में कोई उद्योग नहीं लगे हैं। आज हमें सुई से लेकर हवाई जहाज तक बाहर से मंगाने पड़ते हैं। मैं उद्योगपतियों से अनुरोध करता हूं कि वे देश में उद्योग आरम्भ करें। लगभग 98 प्रतिशत जनता मेरी तथा प्रो० रंगा की भांति गरीब ही है और अन्ततः हम ही उन्हें उनकी सम्पति से वंचित कर उसका अधिग्रहण करेंगे। अतः इन लोगों के प्रति हमें पूर्वाग्रह से प्रेरित नहीं होना चाहिये। हमें उनसे यथासंभव लाभ उठाना चाहिये।

मैं चाहता हूं कि यह संस्थान प्रशासन के लिये व्यक्तियों को प्रशिक्षण देने का कार्य भी करे। हमारे यहां एक केन्द्रीकृत सिविल सेवा है। हमें उद्योगों के लिये सर्वोत्तम व्यक्तियों का चयन करना चाहिये। युद्ध के दौरान में इस बात के लिये बहुत उत्सुक था कि इन सभी मिलों का प्रबन्ध सरकार को अपने हाथ में लेकर उन्हें चलाना चाहिये क्योंकि चाहे कपड़े की कमी है फिर भी मिलें धन कमाने के लिए लगभग 500 किस्मों के कपड़े का उत्पादन कर रही हैं। इन मिलों को चलाने के लिए कैसे व्यक्ति लगाये जायेंगे। आई.सी.एस. व्यक्ति विश्वविद्यालयों से निकला बढ़िया व्यक्ति हो सकता है और हो सकता है कि उसके पास स्नातक की दो-दो उपाधियां हों किन्तु क्या वह मिल का शीघ्र ही प्रभार संभालने के लिये सक्षम होगा। अतः यह भी जरूरी है कि हमारे पास ऐसे सक्षम व्यक्ति हो जो उद्योगों को परामर्श दे सके। हमें हमेशा यह धारणा नहीं बनानी चाहिये कि हमारे तथा उद्योपतियों के बीच एक अघोषित युद्ध चल रहा है। वे पैसा ला रहे हैं और इससे देश को अन्ततः लाभ ही होगा। प्रश्न केवल वितरण का है। अतः मैं इस विधेयक का स्वागत करता हूं और चाहता हूं कि आस्ट्रेलिया के कामनवेल्थ बैंक अधिनियम,, 1945 की तरह ही इस नियम का क्षेत्राधिकार विस्तृत किया जाना चाहिये।

मैं एक-दो और सुझाव देना चाहता हूं। मैं चाहता हूं कि निगम विभिन्न उद्योगों को ऋण देने से पहले यह सुनिश्चित कर ले कि उद्योगों को सही ढंग से चलाया जायेगा और श्रमिकों को उचित पारिश्रमिक दिया जायेगा और उससे सही सलूक किया जायेगा और उन्हें आवासी सुविधाएं आदि भी दी जायेंगी। जहां तक इन उद्योगों द्वारा निर्मित वस्तुओं

के मूल्य निर्धारण का सम्बन्ध है, इसमें उनकी भी महत्वपूर्ण भूमिका होनी चाहिये। मूल्य निर्धारण पर उनका नियंत्रण नहीं होना चाहिये परन्तु उनका प्रभाव अवश्य होना चाहिये अथवा आवाज अवश्य सुनी जानी चाहिए। उन्हें यह भी सुनिश्चित करना चाहिये कि चूंकि उद्योग सार्वजनिक रूप से चलाये जा रहे हैं तो शेयरधारियों को अत्यधिक लाभांश नहीं दिया जाये। उद्योग में वस्तुतः खतरा तो होता ही है यह कोई बचत बैंक नहीं होता। जिन उद्योगों को सहायता दी जाये, वे अपने शेयरधारियों को नौ प्रतिशत से अधिक लाभांश न दें। केवल ऐसे ही उद्योगों को सहायता प्रदान की जानी चाहिए। जब इस देश में उद्योगों का विकास होने लगे तो हमें यह भी सुनिश्चित करना होगा कि वे आम आदमी का शोषण न करें। इन उद्योगों का वित्त भार वहन करने वाला आम आदमी अन्ततः एक गरीब उपभोक्ता है। अतः इस औद्योगिक निगम को किसी उद्योग को सहायता प्रदान करने से पहले इन बातों की ओर पूरा ध्यान देना चाहिये।

जहां तक लेखा परीक्षा का सम्बन्ध है, मैं चाहता हूं कि सरकार स्वयं यह कार्य करे। इस विधेयक में एक उपबन्ध यह है कि कम्पनी विधि के अन्तर्गत नियुक्त दो लेखापरीक्षक ऐसी बड़ी कन्सर्नों का लेखा परीक्षा करे क्योंकि सरकार द्वारा की गई लेखा परीक्षा से ही जनता सन्तुष्ट होगी। इसी प्रकार की निगम में जनता की बड़ी धनराशि का निवेश होता है।

जहां तक प्रबन्ध का प्रश्न है, इस बारे में घबराहट सी है कि इसका प्रबन्ध बड़े व्यापारियों के हाथ में होगा। मैं समझता हूं कि उन्होंने संख्या की गणना नहीं की है। खंड 7 के अन्तर्गत दो निदेशकों का केन्द्र सरकार तथा तीन का रिजर्व बैंक के केन्द्रीय बोर्ड द्वारा नामांकन किया जायेगा और यह संख्या पांच हो जाती है। निदेशकों की कुल संख्या ग्यारह है। तीन निदेशकों का निर्वाचन अनुसूचित बैंकों द्वारा होगा और दो निदेशक केन्द्र सरकार, रिजर्व बैंक आदि के अलावा निगम के शेयरधारियों द्वारा चुने जायेंगे। अतः निदेशकों के सभी पद भरे होंगे। प्रबंध निदेशक की नियुक्ति केन्द्र सरकार द्वारा की जायेगी।

माननीय वित्त मंत्री के पूर्वाधिकारी, जिन्हें वित्त सदस्य कहा जाता था ने तब कहा था कि वे रिजर्व बैंक के राष्ट्रीयकरण के लिये शीघ्र ही एसेम्बेली में एक विधेयक लायेंगे। मुझे आशा है कि रिजर्व बैंक का शीघ्र ही राष्ट्रीयकरण कर दिया जायेगा। थोड़े से शेयरधारियों से शेयरधारियों के बैंक को चलाने की कोई सार्थकता नहीं है। इसी प्रकार बैंक आफ इंगलैंड का भी राष्ट्रीयकरण किया गया था। मुझे आशा है कि हमारे माननीय अनुभवी वित्त मंत्री इस दिशा में सभी प्रकार के सुधार करेंगे। महोदय, मैं इस विधेयक का स्वागत करता हूं कि प्रवर समिति में इसमें सुधार किया जा सकेगा।

सड़क परिवहन निगम*

सड़क परिवहन सेवा का राष्ट्रीयकरण करने की दिशा में उठाए जा रहे इस पहले कदम का मैं स्वागत करता हूं। संघ सरकार को रेल सेवा के रूप में परिवहन की एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण सुविधा प्राप्त है पर परिवहन सेवाओं में समन्वय और उन पर नियंत्रण भी होना आवश्यक है। इसी उद्देश्य से 1938 में कानून बनाया गया था जो आज भी देश के विभिन्न भागों में लागू है सड़क और रेल परिवहन सेवाओं में समन्वय स्थापित करने के लिए यातायात बोर्डों का गठन किया गया। माननीय सदस्य जानते हैं कि रेल लाईन के साथ-साथ सड़कें भी बनी हुई हैं और अक्सर ऐसा होता है कि आस-पास के गांवों के यात्री रेलवे स्टेशन पर आकर रेल सेवा का लाभ उठाने के बजाय उस सड़क परिवहन का लाभ उठाते हैं जो रेल लाइन के समानान्तर ही परिवहन सेवाएं प्रदान करता है। मैंने ऐसा भी देखा है कि बसें रेल गाड़ी आने से 15-20 मिनट पहले रेलवे स्टेशन के अहाते में आकर सवारियों को लेकर पास के स्थानों को चली जाती हैं। दोनों के किराए में भी बड़ा अन्तर होता है तथा रेलों को इससे होने वाली हानि से बचाया जाना चाहिए। इसी बात को ध्यान में रखते हुए यातायात बोर्डों को यह सलाह दी गई थी कि वे 50 मील से अधिक दूरी के लिए परमिट न दें। इस नियम का आज भी पालन किया जा रहा है। पर ऐसा महसूस किया जा रहा है कि इतना ही पर्याप्त नहीं है। सड़कों का रख-रखाव स्थानीय प्रशासन और केन्द्र सरकार द्वारा किया जाता है। इसके लिए मोटर कार के द्वारा धन इकट्ठा किया जाता है। राज्य और केन्द्र सरकारें सड़कों के रख-रखाव पर भारी खर्च करती हैं और इस व्यय का सारा भार इन पर भी पड़ता है। इसलिए एक प्रकार का समन्वय रखना आवश्यक समझा गया ताकि ग्रामीण क्षेत्रों में सड़कों का विस्तार किया जा सके, जिससे गांवों के सामान आदि तथा सवारियों को रेलवे स्टेशन लाकर सड़क और रेल यातायात के बीच की प्रतियोगिता को रोका जा सके। निजी बस मालिकों के पास एक या दो बसें होती हैं तथा उनका मुख्य ध्येय पैसा कमाना होता है। परिवहन सुविधा देना नहीं। माननीय सदस्यों ने यह देखा होगा कि सड़क किनारे पर बस ड्राइवर यात्रियों का

---

* श्री के० संथानम, परिवहन और रेल राज्य मंत्री द्वारा प्रस्तुत सड़क परिवहन निगम विधेयक संबंधी वाद-विवाद में भाग लेते हुए। संसदीय वाद विवाद, 25 नवम्बर, 1950, खण्ड-6, भाग-दो, पृष्ठ 619-628।

सामान पकड़ कर उन्हें बस में चढ़ने का आग्रह करते हैं और 20 मील चल कर टायर फट जाने और पास में किसी पेट्रोल पम्प आदि के न होने पर यात्रियों को किसी अन्य बस या कार के आने तक इन्तजार करना पड़ता है।

निजी उद्यम तो केवल अपने लाभ के प्रति सजग हैं जबकि सरकार का ध्येय परिवहन सुविधा प्रदान करना होता है। इस संबंध में मैंने अपना यह विचार बिना सोचे विचारे नहीं दिया है। जब तक हम स्वयं सरकार द्वारा अथवा परोक्षरूप से अपने निगमों द्वारा इसकी उचित व्यवस्था नहीं कर पाते, निजी मालिकों का बोल-बाला बना रहेगा। मैं सदन को यह बताना चाहता हूं कि निजी मालिक इस क्षेत्र में क्या भूमिका निभा सकते हैं। मैं इस बहस में हस्तक्षेप नहीं करता, परन्तु प्रत्येक समाचार पत्र द्वारा अपने सम्पादकीय में राष्ट्रीयकरण को सर्वथा गलत बताए जाने और ऐसा न करने की सिफारिश करने पर मुझे ऐसा करना पड़ा। यदि केन्द्र सरकार के सभी कार्य निजी उद्यमियों को सौंपना सम्भव हो तो वे इससे बड़े प्रसन्न होंगे। मैं निजी क्षेत्र के समर्थन में यह बात स्वीकार करने को तैयार नहीं। क्योंकि मात्र इसलिए कि समाचार पत्रों पर निजी क्षेत्र का अधिकार है उन्हें देश और समाज के व्यापक हितों को नहीं भूलना चाहिए। देश की व्यवस्था में निजी क्षेत्र का अपना एक स्थान है, परन्तु उसका यह तरीका नहीं है। हमने यह देखा है कि निजी उद्यमियों ने रेलवे के साथ गला-काट प्रतियोगिता को बढ़ावा दिया है। यदि रेलवे को घाटा होता है तो वह घाटा किसका होता है? यह घाटा समूचे समाज का होता है। रेलवे में हमने 23 अरब रुपए का निवेश कर रखा है। क्या हम यह मानते हैं कि हमारी बसों में आवश्यकता से अधिक भीड़ नहीं होती? सभी जगह बसें 20 या 21 सवारियां अधिक ले जाती हैं, जबकि इंजिन उतनी सवारी नहीं ले जा सकता। ऐसी बसों में यात्रा करना बहुत ही खतरनाक होता है। वे बसों को तेज चलाते हैं तथा दूसरी बस आदि से आगे निकलने की कोशिश करते हैं। हाल ही में रेलगाड़ी छूट जाने के बाद मुझे चित्तूर से मद्रास बस से लगभग 100 मील की यात्रा करनी पड़ी। ड्राइवर बस अत्यधिक तेज रफ्तार से चला रहा था तथा मोड़ पर भी उसकी रफ्तार 50 मील प्रति घंटा थी। मोटर गाड़ी का स्टीयरिंग हाथ में आते ही ड्राइवर स्वयं को सर्वेसर्वा मानने लगते हैं। हमें इनके साथ किसी प्रकार की सहानुभूति नहीं दिखानी चाहिए। कोई यह नहीं चाहता कि बस चालक मारे जाएं। एक और बात जो सदस्य भूल जाते हैं कि यह राष्ट्रीय उद्योग नहीं है। क्या देश में एक भी बस निर्मित की जाती है? नहीं की जाती। अब हम कारें बनाने जा रहे हैं। इस समय हम इटली, अमरीका, इंग्लैंड आदि देशों से कार खरीदने पर बड़ा गर्व

अनुभव करते हैं। ऐसा कर हम अपना शोषण करते हैं और स्वयं को एक प्रतिशत देकर विदेशियों को 99 प्रतिशत देते हैं। परिवहन सेवाओं में बहुत से लोगों को रोजगार मिला है। यदि सरकार इन सेवाओं को अपने हाथ में ले लेती है तो क्या आप यह समझते हैं कि श्री सन्थानम और इनके वरिष्ठ साथी श्री गोपालस्वामी आयंगर में से एक ड्राइवर होगा और दूसरा कन्डक्टर? यह कहा जा रहा है कि ये सभी ड्राइवर और कन्डक्टर बेरोजगार हो जाएंगे। ऐसा कैसे हो सकता है? वे ही ड्राइवर और कन्डक्टर बशर्ते वे ईमानदार हैं, काम पर लगाए जायेंगे। एकमात्र समस्या है बस मालिकों की, यहां सदस्यों को यह सोचना होगा कि क्या बस मालिक के पास केवल एक ही बस हो, जिसे वह चलाए और यदि कभी टायर फट जाए या कुछ और खराबी हो जाए तो यात्रियों को अनेक कठिनाइयां उठानी पड़ें? मद्रास में यह व्यवस्था थी कि जिस व्यक्ति के पास 20 बसें हों वह ही परिवहन सेवा शुरू कर सकता है। अब स्थिति बदल गई है। हमने इस व्यवस्था को समाप्त कर दिया है और यात्रियों को अच्छी परिवहन सेवा देने के बजाय अब ऐसे बस मालिक हैं जिनके पास केवल एक ही बस है। जब सर एडवर्ड बेन्थल परिवहन और रेल मंत्री थे उन्होंने इस प्रकार का निगम बनाने का प्रयत्न किया था। तब हम कांग्रेस के सदस्य के रूप में विपक्ष में थे। हमने तब यह सोचा कि वे कुछ लोगों का एकाधिकार स्थापित करना चाहते हैं तथा हमारी अपनी अन्य आशंकाएं भी थीं। बाद में प्रान्तीय सरकारों ने परिवहन सेवा को अपने हाथ में ले लिया। पंजाब में राष्ट्रीयकृत सेवा ने काम शुरू कर दिया। संयुक्त प्रान्त में सरकार की सेवा में 1200 मोटर गाड़ियां हैं। मद्रास शहर में सरकारी विभाग के रूप में यह सेवा चलाई जा रही है। मुझे बताया गया है कि ट्रावनकोर में यह सेवा लाभ पर चल रही है। शुरू में प्रशासनिक अधिकारियों के इस बारे में कुछ संदेह थे। हैदराबाद में भी यह लाभ का स्रोत है।

अतः मैं निम्नलिखित बातों के आधार पर परिवहन सेवाओं का राष्ट्रीयकरण किए जाने का समर्थन करता हूं। हमारे प्रान्त धन के अभाव का सामना कर रहे हैं। इससे निश्चय ही उनके पास कुछ पैसा आएगा। यह धन मालिकों का नहीं होगा, यह यात्रियों का पैसा होगा। सरकार को इस सेवा को अपने हाथ में लेकर अपने राजस्व में वृद्धि करने का अधिकार है।

इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि सरकार द्वारा इसे हाथ में लेने से बेहतर सेवा प्रदान की जाएगी और अच्छी बसें चलाई जाएंगी। वे टायर के फटने या किसी पुर्जे के खराब होने से परेशान नहीं होंगे। पुर्जे को बदल कर नया पुर्जा डाला जाएगा। जहां तक कर्मचारियों का संबंध है उनकी सेवा-शर्तें निश्चय ही बेहतर होंगी। वे भविष्य निधि का लाभ उठा सकेंगे। उनकी सेवाएं सुरक्षित होंगी, जबकि इस समय वे

पूरी तरह से मालिकों की दया पर हैं। राजमार्ग सरकार के हैं। जिन्हें राष्ट्रीयकृत परिवहन सेवाओं के लिए आरक्षित किया जा सकता है।

यदि राज्य इन सेवाओं को चलाते हैं तो मैं समझता हूं कि यह काम निगमों को सौंपना बेहतर होगा। यदि राज्य इन्हें अपने एक विभाग के रूप में चलाते हों तो उन्हें टायर-ट्यूब आदि छोटी-छोटी चीजों के लिए भी सरकार के आदेशों का इन्तजार करना होगा तथा लाल-फीताशाही के कारण इसमें विलंब होगा। इन परिस्थितियों में निगम का होना बेहतर है। हम यह निगम पहले भी बना सकते थे परन्तु उस समय की सरकार के कारण तथा उस पर हमारा कोई नियंत्रण न होने से हमने इसका विरोध किया। मैं उन सदस्यों में से था जिन्होंने निगम के गठन का विरोध किया, क्योंकि हम यह समझते थे कि सरकार की निगाह में कुछ व्यक्ति हैं तथा सरकार छोटे मालिकों के स्थान पर एक प्रकार के एकाधिकार की स्थापना करना चाहती है। हम छोटे मालिकों के समर्थक थे। अब इस संबंध में मेरे विचार बदल गए हैं। देश और छोटे मालिकों में से हमें सरकार और जनता की सेवा को अधिक महत्व देना चाहिए। इसलिए निगम का गठन स्वागत योग्य है।

इसके साथ-साथ मैं इसकी कमियों की ओर भी संकेत करना चाहता हूं। यदि कोई काम सीधा सरकार के प्रबंध के अंतर्गत हो तो हम यहां उसके कार्य के बारे में पूछताछ कर सकते हैं। जैसा कि रेलवे के बारे में होता है। रेलवे का बजट अलग से पेश किया जाता है और रेलवे के कार्य पर सात-आठ दिन तक हम संसद् में चर्चा करते हैं। निगम का गठन होते ही उसके कार्य के बारे में भगवान ही जान सकता है। इस संबंध में आप दामोदर घाटी निगम का उदाहरण ले सकते हैं। आज सवेरे मुझे पता चला है कि उसका कार्यभार एक विदेशी इंजीनियर को सौंपा गया है, जिसे पारिश्रमिक के रूप में बहुत सा पैसा दिया गया है। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि देश में इंजीनियर नहीं हैं और यहां बांधों का निर्माण नहीं किया गया है। एक इंजीनियर को बाहर से लाकर उसे कई वर्ष तक डालर में भुगतान किया जाएगा। समाचार पत्रों में मैंने देखा है कि दामोदर घाटी निगम को यह सलाह दी गई है कि भारत सरकार से परामर्श किए बिना भारी पारिश्रमिक देकर विदेशियों को न लगाया जाए। मैं नहीं जानता कि यह बात सच है या नहीं। यदि यह सच है तो निगम इस संबंध में संसद् के प्रति जवाबदेह है। जहां कहीं भी निगम बनाए गए हैं उन पर हर समय संसद का नियंत्रण रहना चाहिए पर उनके दिन प्रति दिन के कार्य में सरकार अथवा संसद द्वारा हस्तक्षेप करना ठीक नहीं है। जहां तक ज्वाइंट स्टाफ कम्पनियों का प्रश्न है, शेयरधारी वर्ष में एक बार या आवश्यक हो तो इससे अधिक बार मिलते हैं और निदेशकों की नियुक्ति कर सकते हैं और उन्हें हटा सकते हैं। सरकारी निगम के साथ ऐसा नहीं है। उसमें जितना भी रुपया लगता है वह सरकार का होता है जो अधिकारी उनमें नियुक्त होते हैं उनका उसमें एक भी पैसा नहीं लगता। वहां एक

अधिकारी होने के अतिरिक्त उनका उसमें कोई हित नहीं होता। सरकारी निगमों के संबंध में यही कमी है। अतः एक कानून बनाया जाए जिसके अंतर्गत निगम अपना प्रशासनिक प्रतिवेदन संसद को भेजे तथा उस पर संसद में कुछ समय चर्चा अवश्य की जाए। ऐसा कोई तरीका निकाला जाए जिससे इसे न तो अधिक स्वायत्तशासी बनाया जाए और न ही उसपर अधिक नियंत्रण रखा जाए। उसे सरकार के नियंत्रणाधीन भी अधिक न रखा जाए। मैं आशा करता हूं कि इस संबंध में उचित व्यवस्था की जाएगी। क्योंकि अभी ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है।

* * * *

मंत्री महोदय ने बताया है कि हम राज्य सरकारों से इन सेवाओं को अपने हाथ में लेने के लिए बाध्य नहीं कर रहे हैं तथा इस विधेयक के द्वारा उन्हें ऐसा करने के लिए केवल आवश्यक अधिकार दिए जा रहे हैं। यह केवल एक समर्थकारी उपाय है। विद्युत अधिनियम, जिसके अंतर्गत कुछ वर्षों में विद्युत प्रदाय निगमों की स्थापना करना राज्य सरकारों के लिए अनिवार्य है, के समान इस विधेयक में निगम की स्थापना करना अनिवार्य नहीं है। वे चाहें तो ऐसा करें और न चाहें तो न करें। अनिवार्यता का उपबंध किए जाने के बावजूद हमारे पास इसे लागू करने का कोई तरीका नहीं है। इसलिए मैं चाहता हूं कि इसे समर्थकारी उपाय बनाया जाए। राज्य इसे राज्य के उद्यम के रूप में चला सकता है अथवा सड़क परिवहन को निगम को सौंप सकता है।

मैं समझता हूं कि इन निगमों की अपनी कार्यशाला होगी और वह कुछ अतिरिक्त पुर्जे आदि भी बनायेंगे। किन्तु समग्र मोटर-कार उद्योग इसके अंतर्गत नहीं आयेगा। निगम के कुशल कार्यकरण के लिए यह उपबंध उचित और आवश्यक है। पर इन निगमों में एक या दो कमियां रह जाने की भी सम्भावना है। हाल ही में हमारे मित्र श्री देशबंधु गुप्ता की अध्यक्षता में दिल्ली में आयोजित एक सम्मेलन में मैंने भाग लिया और इस सम्मेलन का उद्घाटन मेरे द्वारा ही हुआ। वहां मैंने कहा कि मुझे किसी दिशा विशेष में कार्य करने के लिए न कहा जाये। सम्मेलन में विचार व्यक्त किया गया कि निगम किसी रूट विशेष पर वाहन चला सकता है और उस मार्ग विशेष के लिए यातायात बोर्ड से अनुमति प्राप्त कर सकता है। उस दशा में उस मार्ग विशेष पर जो प्राइवेट आपरेटर पहले ही चल रहे हैं, उनके पास काम नहीं रहेगा। इस स्थिति में सुझाव दिया गया कि उनके समग्र उपक्रम का अर्जन कर लिया जाये या निगम उसे खरीद ले और उसके लिए उचित मुआवजा अदा किया जाये। जहां तक मुआवजे की अदायगी का संबंध है, उसके बारे में युनाइटेड किंगडम में इसी प्रकार के अधिनियम में उपबंध है। इस अधिनियम में मुआवजे के भुगतान के सिद्धांत प्रतिपादित हैं। सम्मेलन में यह आग्रह भी किया गया कि हमारे

अधिनियम में भी इन उपबंधों को सम्मिलित किया जाए। जिन लोगों ने यह बात उठाई उन्हें बताया गया कि अपने अधिनियम में व्यापक उपबंध करने की बजाय उसमें केवल इतना कह दिया जाए कि मुआवजा दिया जायेगा, जिसका विवरण बाद में तैयार किया जायेगा। मुआवजे से तात्पर्य है उचित मुआवजा देना। इसलिए सभी प्रकार के वाहनों के लिए समान नियम निर्धारित करना संभव नहीं है। किसी भी वाहन का मूल्य इस बात पर निर्भर करेगा कि वह किस कंपनी द्वारा बनाया गया है और कितना चल चुका है। आवश्यकता इस बात की है कि एक ऐसा समझौता हो जो दोनों पक्षों के लिए अच्छा हो और उनके हित में हो। अतः मुआवजे के सिद्धांतों को स्पष्ट करने तथा उन्हें लचीला न रखने की बजाय न्यायाधिकरण को, जिसके समक्ष दोनों पक्ष उपस्थित हों, कहा जाये कि वह मामले में अपना फैसला दे। यह एक उचित सिद्धांत है और मुझे विश्वास है कि माननीय मंत्री इसे स्वीकार करेंगे—शायद वह इसे पहले ही स्वीकार कर चुके हैं—और इस प्रकार आपरेटरों को जो शंकायें हैं उनका समाधान करेंगे।

आपरेटर चाहते हैं कि उनके सारे उपक्रम को निगम खरीद ले। उनकी आशंका यह हो सकती है। मानो विभिन्न मार्गों पर 100 बसें चल रही हों और निगम केवल एक मार्ग पर अपनी बस चलाये और उस दशा में वह उस एक मार्ग के लिए सभी बसों को खरीदना उचित न समझे। इस मामले में भी न्यायाधिकरण को अधिकार दिये जायें। वह यह फैसला करे कि कौन-कौन से मार्ग प्राइवेट आपरेटरों के पास रहने दिये जायें और कितनी बसें उनसे खरीदी जायें जिससे कि प्राइवेट आपरेटरों को कोई हानि न हो। यदि उनके उपक्रम का बड़ा हिस्सा खरीद लिया जाता है और उनके पास थोड़े से मार्ग या बसें रह जाती हैं तो इन आपरेटरों को नुकसान होगा। इस मामले में आपसी समझौते की आवश्यकता है। न्यायाधिकरण को यह फैसला करने का अधिकार दिया जाये कि क्या समग्र उपक्रम को खरीदा जाए या उसके एक भाग को खरीदा जाए।

तीसरा सवाल यह है कि प्राइवेट उपक्रमों को खरीदने के बाद उनके जो कर्मचारी हैं उन्हें भी नई सेवा में खपाया जाए। मुझे विश्वास है कि इन कर्मचारियों को निश्चित रूप से निगम में खपाया जाएगा और यदि उनकी सेवा का रिकार्ड ठीक है तो उन्हें निगम में ड्राइवर, कंडक्टर आदि के रूप में नियोजित किया जाएगा। कठिनाई केवल मालिकों के संबंध में होगी। इसलिए उनके विषय में भी कुछ उपबंध करने की बात कही गई है। कुछ लोगों के पास बड़ी संख्या में बसें होंगी। लेकिन मध्यवर्गीय कुछ लोग, जिन्होंने स्वतंत्रता संग्राम में हमारे साथ सहयोग किया है, ऐसे भी होंगे जिनके पास एक या दो बसें हैं। ऐसी परिस्थिति में उनकी रोजी-रोटी छीनना उनके साथ अन्याय होगा। इसलिए उन लोगों के लिए भी आजीविका का उचित उपबंध किया जाना चाहिए। हमारा सुझाव है ऐसी बसों के मालिकों को इस निगम के शेयर खरीद लेने चाहिएं और उन्हें निगम का

निदेशक बनाया जाए या कोई अन्य दायित्व सौंपा जाए। निरीक्षक और प्रबंधक रखना भी जरूरी होगा। इन कामों के लिए इन बस मालिकों की सेवाओं का इस्तेमाल किया जा सकता है। वस्तुतः निगम एक प्राणी नहीं है, इसका कार्य उन लोगों द्वारा चलाया जायेगा जिन्हें इस कार्य का ज्ञान और अनुभव है जिससे निगम की सेवायें बड़ी कार्यकुशलता से निष्पादित की जा सकें। मुझे आशा है कि निगम आयु आदि के बारे में सेवा की कड़ी शर्तें निर्धारित नहीं करेगा और अपने कर्मचारियों को 55 वर्ष के होते ही सेवा से निवृत्त नहीं करेगा। यदि कोई कर्मचारी स्वस्थ है और कार्यकुशल है तो उसे 60 वर्ष की आयु तक सेवा में रखना निगम के हित में होगा। इस विषय में नियमों में छूट दी जानी चाहिए। इसी प्रकार शैक्षिक योग्यता आदि के विषय में शिथिलता बरती जानी चाहिये। कोई भी व्यक्ति विशेष शैक्षिक न होते हुए भी अपने कार्य में कुशल हो सकता है। विश्वविद्यालय डिग्री या बी०काम० या वाणिज्यिक कानून आदि की योग्यता पर आग्रह न किया जाए। मैंने इन बातों का उल्लेख इसलिए किया है कि हम कभी-कभी महाविद्यालयों आदि से हासिल की गई उपाधियों के प्रति अधिक रुझान रखने लगते हैं और इस बात को भूल जाते हैं कि किसी कार्य विशेष में प्राप्त अनुभव इन शैक्षणिक योग्यताओं से कहीं अधिक मूल्यवान होता है। यह सरकार का दायित्व है कि देश का कोई भी सशक्त व्यक्ति बेरोजगार न रहे। इसलिए इन उपक्रमों के राष्ट्रीयकरण करने के हमारे उत्साह से ये अनुभवी लोग बेरोजगार नहीं होने चाहिएं। हमें उन्हें रोजगार के अन्य अवसर भी उपलब्ध कराने चाहिएं। हम नहीं चाहते कि कोई भी व्यक्ति बेरोजगार हो। इस विधान में इस तरह की आशा और वचन का उपबंध होना चाहिए। जिन बस मालिकों से बस रूट ले लिये गये हैं उनके साथ बातचीत करके इस संभावना का पता लगाया जाए कि ये लोग गांव से होकर निकटतम रेलवे स्टेशन तक अपनी बसें चला सकते हैं या नहीं। उन्हें वैकल्पिक मार्ग भी दिये जा सकते हैं। वस्तुतः इनकी सेवाओं का कई प्रकार से उपयोग किया जा सकता है और मुझे आशा है कि निगम इनकी सेवाओं का समुचित उपयोग करेंगे और देश सेवा की भावना से कार्य करेंगे और उन लोगों की मदद करेंगे जो पहले ही इस काम में लगे हुए हैं तथा जिन्होंने देश में यातायात के विकास में भारी योगदान किया है। जब कोई सेवा आरंभ की जाती है तो उसके प्रारंभिक वर्षों में काफी कठिनाइयां आती हैं। इस काम में लगे हुए लोगों ने काफी परिश्रम किया है और यात्रियों का विश्वास जीता है। इसलिए मैं चाहता हूं कि इन लोगों का सहयोग लिया जाए। फिर भी इन बातों पर विस्तार से विचार करने की जरूरत है और मुझे उम्मीद है कि जो निगम बनाये जा रहे हैं वे इन बातों को ध्यान में रखेंगे।

मैं इन निगमों का स्वागत करता हूं, किन्तु साथ ही एक चेतावनी भी देना चाहूंगा। ये निगम सेवा पहलू पर अधिक बल देंगे और आर्थिक पहलू की उपेक्षा भी कर सकते हैं।

प्राइवेट मालिक वाणिज्यिक पहलू की ओर अधिक ध्यान देता है जबकि निगम में सेवा पहलू पर अधिक बल देने की प्रवृत्ति होती है। मैं समझता हूं कि हमें मध्य मार्ग अपनाना चाहिए। इन निगमों को वाणिज्यिक उपक्रमों की भांति काम करना चाहिए साथ ही लोगों को कुशल और अच्छी सेवा प्रदान करनी चाहिए। कभी-कभी यदि घोड़े की नाल से टायर पंक्चर हो जाता है तो निगम के लोग इस टायर की जगह नये टायर की मांग कर सकते हैं, जबकि प्राइवेट मालिक इसी टायर की मरम्मत करके इसे पुनः इस्तेमाल में लाता है। निगम तथा इसमें काम करने वाले सभी लोगों को इस दिशा में सावधानी बरतनी होगी क्योंकि यह सार्वजनिक सम्पत्ति है और इसका अधिकतम उपयोग होना चाहिए।

किसी को भी इस विधान से भयभीत नहीं होना चाहिए या इसे क्रान्तिकारी विधेयक नहीं समझना चाहिए। इस विधान से प्राइवेट आपरेटर बेरोजगार नहीं होंगे। उनके हित की रक्षा के लिए इसमें पर्याप्त उपबन्ध किये गये हैं और मुझे खुशी है कि मंत्री ने काफी सहानुभूतिपूर्वक रुख अपनाया है तथा अधिकांश संशोधन मान लिये हैं। सभी संशोधन बिना वाद-विवाद के किन्तु आपसी समझौते और सहमति से पारित हो जायेंगे।

मैं विधेयक पर विचार किये जाने के प्रस्ताव का समर्थन करता हूं।

4

श्रम और रोजगार

मजदूर संघ*

श्रमिक तथा पूंजीवादी दोनों ही अपनी-अपनी बात कह चुके हैं। अब बारी है एक आम आदमी की। यदि श्रमिकों और पूंजीवादियों के बीच कोई स्थायी संघर्ष छिड़ता है, तो देश के अन्य लोगों के साथ-साथ मुझे भी मुसीबतों का सामना करना पड़ता है। इसको दुर्भाग्य ही कहा जायेगा कि पिछले कुछ सालों बल्कि पिछले दो-तीन सालों में तो हड़तालों का ऐसा सिलसिला चला जिसका कोई अन्त ही नजर नहीं आता था और तो और मद्रास में राजपत्रित अधिकारियों ने भी सरकार के विरुद्ध हड़ताल कर दी, जबकि सरकार बने कोई ज्यादा दिन नहीं हुए थे। मेरा विचार है कि जनता का हित इसी में है कि श्रमिक वर्ग संगठित और संतुष्ट हो। यह चीज बहुत जरूरी है। इससे देश तथा उद्योग दोनों का ही भला होगा। इसलिए मजदूर संघों को प्रोत्साहित करना और बाद में उनके संगठित होने पर उनको मान्यता प्रदान करने की जो कार्यवाही ऊपरी मन से की जाती है, वह पर्याप्त नहीं है। मैं चाहता हूं कि सारे देश की श्रम शक्ति सब प्रकार से संगठित हो। मैं अपनी बात को इस प्रकार स्पष्ट करता हूं। यदि किसी कारखाने में 20 मजदूर कार्यरत हों तो वह कारखाना अधिनियम के अन्तर्गत आ जाता है। जहां कहीं भी 20 मजदूरों के समूह कार्यरत हों, श्रम विभाग को चाहिए कि वह वहां जाकर उनको मान्यता प्रदान करे और उनसे एक मजदूर संघ बनाने को कहे। ऐसा कोई भी कारखाना नहीं होना चाहिये जहां मजदूर संघ न हो। इस प्रकार का मजदूर संघ बनते ही हर उद्योग अपने आप कारखाना अधिनियम के अंतर्गत आ जायेगा और एक मजदूर संघ उससे संबद्ध हो जायेगा। कारखाने विशेष में नियोजित सभी व्यक्ति मजदूर संघ के सदस्य होंगे। उद्योग के हितों की रक्षा करने हेतु वर्तमान कारखाना अधिनियम तथा भविष्य में बनने वाले अधिनियमों, दोनों में ही इस तरह के हितकर उपबंध होने चाहियें जिससे कि चन्द-एक मजदूरों द्वारा तोड़फोड़ की कार्यवाही की स्थिति से बचा जा सके। ऐसा संभव है कि चन्द-एक मजदूर जिनको

---

* श्री जगजीवन राम द्वारा प्रस्तुत भारतीय मजदूर संघ संशोधन विधेयक, 1946 में भाग लेते हुए, लेजिस्लेटिव एसेम्बली वाद विवाद, खण्ड-सात, 31 अक्तूबर, 1946, पृ॰ 331-334

किसी मशीन के महत्वपूर्ण हिस्से पर लगाया जाये, उद्योग के हित की उपेक्षा करें। सामूहिक रूप में वे उद्योग के हित को चाहेंगे। नियोक्ता को चाहिये कि वह खुद सुनिश्चित करे कि कारखाने का ठीक प्रकार ध्यान रखने तथा किसी एक व्यक्ति की मर्जी तथा उसकी खुशी के लिए कारखाने में तोड़फोड़ की कार्यवाही की किसी संभावना को रोकने हेतु, कारखाने में श्रमिक संगठित हों। ऐसा उसके अपने हित में है। किसी स्थान विशेष में प्रत्येक उद्योग में एक मजदूर संघ होना आवश्यक है। सभी मजदूर संघों को भले ही उनका किसी भी दल विशेष से संबंध क्यों न हो, मिलकर अपना एक महासंघ बनाना चाहिये। ग्रामों, तालुकों तथा जिलों में इसकी शाखायें होनी चाहियें और केन्द्र में प्रत्येक उद्योग की सारे देश की एक केन्द्रीय संस्था होनी चाहिए। सभी मजदूर संघों की एक संस्था बने जिसमें यथासंभव सभी श्रमिकों को शामिल किया जाये।

महोदय, मैं सभा में निवेदन कर रहा था कि श्रमिक वर्ग को हर प्रकार से संगठित किया जाना चाहिए और मैंने यह सुझाव भी दिया कि इस कार्य को किस प्रकार किया जाना चाहिए। हो सकता है, इसमें काफी कुछ जोर-जबरदस्ती अर्थात अनिवार्य रूप से करना पड़े, लेकिन मेरे दायें को बैठे मेरे सम्माननीय मित्र से, जो कि बंबई के सामन्त हैं, मैं सहमत नहीं हूं। उनका कहना है कि श्रमिकों को खुद संगठित होना चाहिये। संगठित होने का काम उनका अपना है। आखिर इस कार्य में अनिवार्यता बरतने से वह इतना डरते क्यों हैं? क्या हमारे सामाजिक कार्यकलापों के विभिन्न पहलुओं में काम अनिवार्य रूप से नहीं करने पड़ते? आज सभी लोग यह कह रहे हैं कि शिक्षा निःशुल्क तथा अनिवार्य की जानी चाहिये। क्या हममें से अधिकांश लोग अशिक्षित नहीं हैं? अपने बच्चों को यदि हम सभ्य बनाना चाहते हैं तो उनका शिक्षित होना जरूरी है। इस सब के बावजूद, हम सभी जानते हैं कि हममें से कितने लोग अपने बच्चों को स्कूलों में भेज रहे हैं। कुछ अंश में यह अनिवार्यता स्वास्थ्य विभाग में भी देखने को मिलती है जहां कुछ टीके आदि लगवाना हमारे लिए जरूरी होता है। जहां तक श्रमिकों का संबंध है, मैं समझता हूं यह आवश्यक है और उनके मामले में संगठित होना अनिवार्य होना चाहिये। सवाल उठता है कि क्या वे अपने आपको ठीक प्रकार से संगठित नहीं कर पाये हैं? कुछ मामलों में उन्होंने अपने आपको संगाठित किया है, लेकिन कुछ मामले ऐसे भी हैं जहां वे अपने आपको संगठित नहीं कर पाये हैं। हमें अनिवार्यता को लेकर इतना डरना नहीं चाहिये मैं अपने मित्र श्री गुरुस्वामी की इस बात से सहमत हूं कि किसी भी मजदूर को इस संस्था या संगठन से बाहर रहने की स्वतंत्रता नहीं दी जानी चाहिये इस संगठन से बाहर रहने वाला कोई भी व्यक्ति सारे संगठन के लिए खतरा बना सकता है। इन

संगठनों में फूट डालकर ही नियोक्ता वर्ग आज तक श्रमिक वर्ग के साथ मनमानी करता आया है। अतः यह जरूरी है कि प्रत्येक श्रमिक के लिए इस संस्था/संगठन का सदस्य होना अनिवार्य होना चाहिये। जहां तक श्रमिक विवादों का संबंध है, मैं यह कहना चाहूंगा कि विधेयक में इस संबंध में जो व्यवस्था की गई है वह अच्छी है और मैं उसका स्वागत करता हूं।

महोदय, इस विधेयक में दो उपबंध ऐसे हैं जिनकी वजह से इस सभा को इस विधेयक को स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। पहला उपबंध औद्योगिक न्यायालय के संबंध में है तथा दूसरा नियोक्ताओं द्वारा उत्पीड़न के संबंध में। कम से कम ये दो उपबंध तो ऐसे हैं केवल जिनके आधार पर विधेयक को तत्काल स्वीकृत कर लिया जाना चाहिए। हमें जनवरी या उससे आगे प्रतीक्षा की कोई जरूरत नहीं है। इस विधेयक को प्रवर समिति के माध्यम से पारित कराया जा सकता है और बाद में इसको अधिनियम का रूप दिया जा सकता है। जब-जब परिस्थितियां इजाजत दें, अन्य विभिन्न मामलों को इसमें सम्मिलित किया जा सकता है, लेकिन फिलहाल इस विधेयक को विधान मण्डल में पारित कर दिया जाये। इस विषय पर आवश्यक सभी विधान पारित हो जाने पर कोई संहिता बनाई जा सकती है। जब तक अलग-अलग मामलों पर विचार किया जाये और उनको इस विधेयक की राह की रुकावट नहीं बनना चाहिये।

इसके अतिरिक्त मैं चाहता हूं कि एक-दो विषय और इस विधेयक में सम्मिलित किये जायें। इसको देखते हुए कि ऐसे व्यक्तियों द्वारा हड़तालें कराई गईं जो खुद कार्मिक नहीं होते और जिनकी रुचि अन्य चीजों में ही होती है। ऐसे व्यक्तियों ने मजदूर संघों पर अपना अधिपत्य कायम कर लिया है। इस चीज से बचने के लिए कोई स्वस्थ उपबंध होना आवश्यक है। मैं चाहता हूं कि कार्मिकों अथवा श्रमिकों द्वारा हड़ताल उसी स्थिति में की जाये जबकि जो कुछ भी वह नियोजकों से चाहते हों वह बिना हड़ताल मिलना असम्भव हो।

मैं यह अवश्य चाहता हूं कि औद्योगिक न्यायालय श्रमिक विवादों के विषय में निर्णय दे या फिर उसके लिए कोई मध्यस्थ निर्णय होना चाहिये, जो अनिवार्य हो। यह चीज कार्मिक अथवा नियोजक की मर्जी पर निर्भर नहीं होनी चाहिए कि वे संयुक्त रूप से मध्यस्थ निर्णय के लिए सहमत हों। किसी भी पक्ष के कहने पर श्रमिक विवाद को मध्यस्थ निर्णय को सौंप दिया जाना चाहिए और इससे पूर्व कि कोई हड़ताल हो, विवाद को हल करने के सारे रास्तों पर विचार कर लिया जाना चाहिये। विधेयक में एक उपबंध

है जिसमें बताया गया है कि हड़ताल किस तरह से की जाये तथा किस ढंग से उसके बारे में सूचना दी जानी चाहिए। इस सब के बारे में व्यवस्था होनी चाहिये। इस विधेयक में यह व्यवस्था की गई है कि प्रत्येक मजदूर संघ हड़ताल के तरीके के संबंध में उपबंध करेगा। अतः यह कहना उपयुक्त ही होगा कि किसी भी हड़ताल होने से पूर्व विवाद के सौहार्दपूर्ण निपटारे के विषय में सारे रास्तों पर विचार कर लिया जाना चाहिये। उसको मध्यस्थ निर्णय के लिए सौंपे जाने के प्रश्न पर भी विचार कर लिया जाना चाहिए। यह बात न्यायालय या मध्यस्थ पर छोड़ी जानी चाहिए कि वे यह कहें कि नियोजक श्रमिकों को संतुष्ट करने में असफल रहा है और इसलिए वे चाहें तो हड़ताल कर सकते हैं। जब तक यह फैसला न हो, कोई हड़ताल नहीं होनी चाहिये। मैं इस बात का आग्रह सम्पूर्ण समुदाय के हितों को दृष्टि में रखकर कर रहा हूं। उदाहरण के लिए रेलों का ही मामला लीजिये। रेलों में कर्मचारियों की संख्या तीन या चार लाख है। युद्ध के कारण अब उनकी संख्या और भी बढ़ गई होगी। यदि रेल कर्मचारी हड़ताल पर चले जायें तो उससे बाकी लोगों को केवल इस वजह से मुसीबतों का सामना करना पड़ेगा कि एक ओर तो सरकार कर्मचारियों की मांगें पूरी नहीं करती और दूसरी ओर कर्मचारी बढ़ा-चढ़ाकर मांगें करते हैं। ऐसा आभास नहीं होना चाहिये कि ये दोनों पक्ष हमेशा कुत्ता-बिल्ली की तरह लड़ते ही रहेंगे। हम सभ्य लोग हैं और हम कोई नई राह निकालकर यह दिखा सकते हैं कि ये लोग मिलजुल कर रह सकते हैं और सौहार्दपूर्ण ढंग से अपने विवादों को निपटा सकते हैं। इसलिए औद्योगिक न्यायालय में न केवल शिकायतों के अलग-अलग मामलों का फैसला करने का अधिकार दिया जाना चाहिये, अपितु कार्मिकों और नियोक्ताओं के बीच बड़े मसलों जैसे वेतन बढ़ाया जाये या नहीं, के बारे में फैसला करने का भी अधिकार दिया जाना चाहिये। कुल उद्योग के हितों को ध्यान में रखते हुए किए गए निर्णय को नियोक्ता द्वारा अस्वीकार किए जाने की स्थिति में हड़ताल की जा सकती है।

विधेयक में एक कमी है, जो प्रवर समिति में दूर की जा सकती है। विधेयक में कहा गया है कि औद्योगिक न्यायालय के क्षेत्राधिकार में केवल अध्याय तीन-क में दिये गये मामले ही आयेंगे। इसमें कहा गया है:

> इस अध्याय के प्रयोजनार्थ, उपयुक्त सरकार उतने औद्योगिक न्यायालयों की नियुक्ति करेगी जिसको वह आवश्यक समझे।

इस अध्याय में केवल मजदूर संघों को मान्यता देने का उल्लेख है। अध्याय तीन-ख अनुचित कार्यों के बारे में है और खण्ड 7 में अनुचित कार्यों के लिए दण्ड का उल्लेख है। अतः जब कभी कोई नियोक्ता किसी अनुचित कार्य का दोषी पाया जायेगा उसको दण्डस्वरूप एक हजार रुपये का जुर्माना भरना पड़ेगा। ऐसा पक्का लगता है कि वह

औद्योगिक न्यायालय के क्षेत्राधिकार में आता है क्योंकि यह एक अलग अध्याय में है। औद्योगिक न्यायालय के क्षेत्राधिकार को केवल मजदूर संघों की मान्यता तक ही क्यों सीमित रखा जाये अनुचित कार्यों संबंधी विवाद क्यों नहीं उसके दायरे में लाये जायें। यदि न्यायलय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि नियोक्ता किसी अनुचित कार्य का दोषी है, तो उसको दण्ड क्यों न दिया जाये। आखिर यह मामला न्यायालय के क्षेत्राधिकार में क्यों न हो? अतः खुद व्यापार के ही हित में श्रम का संगठित होना जरूरी है।

अब मैं जनता की राय जानने के लिए इसको परिचालित करने संबंधी प्रस्ताव पर चर्चा करूंगा। महोदय, मेरे आदरणीय मित्र जो अब विपक्ष में बैठे हैं, ने खुद यह माना है तथा देश का हित चाहने वाले अन्य लोगों को भी यह बात माननी चाहिए कि अब वह जमाना नहीं रहा है जबकि धर्म का राजनीति में कोई स्थान हो सकता है। उन सभी के पैगम्बरों के प्रति हम पूरा आदरभाव रखते हैं जो उस समय आये जबकि देश विभिन्न फिरकों में बंटा था और वे उन सबको इकट्ठा करके एक झंडे तले लाये। शुरू-शुरू में धर्म का कार्य केवल मनुष्यों के बीच आपसी फर्क को मिटाकर उनमें भाई-चारे की भावना पैदा करना था। उनको एक ईश्वरीय व्यक्तित्व प्राप्त कराने तक केन्द्रित था। लेकिन आज दुर्भाग्यवश वे ही धर्म एक दूसरा ही रूप प्रस्तुत करते हैं। उनकी अन्तरभावना लुप्त हो गई है और वे समाज में विघटनकारी शक्तियों के रूप में उभर कर सामने आ रहे हैं। अतः अब हमें मानव के शाश्वत तथा चिरस्थायी लाभ के लिए नयी दिशाओं की खोज करनी होगी। धर्म में रूचि रखने वालों को आज राष्ट्रीयता, अन्तर्राष्ट्रीयता आदि की बात न करके, मानवता की बात करनी चाहिये। धर्मवेत्ताओं को राष्ट्रवाद या अन्तर्राष्ट्रवाद आदि की बात नहीं करनी चाहिए अपितु समूची मानवता की बात करनी चाहिए और ऐसी बात करनी चाहिए जो किसी धर्म विशेष अथवा परस्पर विरोधी धर्मों में से किसी एक धर्म के पक्ष में न हो अपितु समूची मानवता के कल्याण के लिए हो। मैं आशा करता हूं कि सभी व्यक्ति जो अपने धर्म—इस्लाम, ईसाई धर्म अथवा हिन्दू धर्म में सच्ची निष्ठा रखते हैं उन्हें इस्लाम, ईसाई धर्म या हिन्दू धर्म की वास्तविक शिक्षाओं को आत्मसात करना चाहिए। धर्म के पैगम्बरों ने भी अपने अनुयायियों को सलाह दी है कि वे विश्व में शांति और खुशहाली का वातावरण पैदा करें और दुर्भाव पैदा न करें जो कि ईश्वर के सिद्धांतों और निदेशों के विरुद्ध है। अतः मैं अपने माननीय मित्रों से अनुरोध करूँगा कि कार्मिक संघ के इस सांझे मंच पर सभी समुदाय समान हैं। यदि किन्हीं कार्मिक संघों को साम्प्रदायिक भावना से आरंभ किया गया है, तो हमें इस भूल को स्वीकार कर लेना चाहिए। अब समय आ गया है कि हमें इस भूल को दूर करना चाहिए। आज हर समुदाय को अपने धर्म पर गर्व हो सकता है, परन्तु उसे आगे आने वाला खतरा दिखाई नहीं देता । साम्यवाद सिर उठा रहा है और वह किसी धर्म को नहीं मानता। साम्यवादी

एक समुदाय को दूसरे समुदाय से लड़ाने पर तुले हैं और वे सभी धर्मों को नष्ट करना चाहते हैं। विश्व के एक छोर से दूसरे तक साम्यवाद होगा। तब ईश्वर में किसी का विश्वास नहीं रहेगा। हमें इस दुखद स्थिति से बचने का प्रयास करना चाहिए। मैं ईश्वर में विश्वास रखने वाले अपने सभी साथियों, चाहे वे ईश्वर को किसी भी नाम से पुकारते हों तथा अपने माननीय मित्र हाजी अब्दुस सत्तार हाजी इस्हाक से प्रार्थना करता हूँ कि वह इस विधेयक को परिचालित करने के अपने प्रस्ताव को वापस ले लें अथवा इस पर मतदान के लिए जोर न डालें। उद्योगपतियों अथवा नियोजकों में इसे परिचालित करने का कोई लाभ नहीं होगा। उद्योगपति तो यही कहेंगे कि यह जरूरी नहीं है। इस सभा में उद्योगपतियों के प्रवक्ता मौजूद हैं, जैसा कि मेरी दाहिनी ओर श्री कोबासजी जहांगीर और बाईं ओर श्री वाडीलाल लालूभाई विराजमान हैं। वे इस बात के पक्षधर हैं कि जहां तक मजदूर संघों का संबंध है, इनमें पुरुष तथा महिलाएं दोनों ही शामिल हैं। कुमारी माणिबेन कारा वर्ग संघर्ष तथा वर्ग घृणा में विश्वास रखती हैं। इसलिए मेरा निवेदन है कि यदि इस विधेयक को जनमत जानने के लिए परिचालित किया जाता है तो हमें ज्ञात है कि हमें किस प्रकार की राय मिलेगी। उद्योगपति कहेंगे कि कोई जरूरत नहीं और श्रमिक अधिक से अधिक सुविधाओं की मांग करेंगे। इस तरह से इसे परिचालित करने से कोई लाभ नहीं होगा। मेरा अनुरोध है कि इसे परिचालित करने के प्रस्ताव पर जोर न दिया जाए और इसे प्रवर समिति को सौंप दिया जाए ताकि प्रवर समिति में और अधिक लाभप्रद उपबंध अपनाए जा सकें और मैं आशा करता हूँ कि प्रवर समिति से जब यह विधेयक आएगा तो बहुत बेहतर विधेयक होगा जिससे देश के उद्योगों को सुचारू रूप से व्यवस्थित किया जा सकेगा।

5

विधिक, संवैधानिक और राजनीतिक मामले

निवारक निरोध*

सदन ने बड़े धैर्यपूर्वक उन आरोपों और प्रत्यारोपों को सुना जो कि हमारे शरीर में बहते लहू को ठंडा कर देने वाली घटनाओं से संबंधित थे। प्रवर समिति ने इस तथाकथित "काले कानून" की स्याही को मिटाने का तीन बार प्रयत्न किया और अब जो कालिमा शेष बची है, वह बाहर किये जाने वाले अपराध कृत्यों की तुलना में छायामात्र हैं। मैं यह नहीं कह सकता कि इस तथाकथित "काले कानून" में कतिपय अंतर्निहित कालिमा विद्यमान है। मैं अपने आपको यह विश्वास दिलाना चाहता था, और काफी हद तक अपने इस उदेश्य में सफल भी हो गया था कि इस तथाकथित "काले कानून" की अब कोई आवश्यकता नहीं है।

अब मैं साम्यवादी दल के नेता के इस विषय के प्रति दृष्टिकोण को समझने का प्रयास करूंगा। निश्चय ही, मैं यह जानना चाहूंगा कि इस नवीन वातावरण में, स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत उत्पन्न नये दायित्व का निर्वाह करने में सक्षम बनाने हेतु मुझे अपने बच्चों को किस प्रकार बड़ा करना चाहिए। भले ही इस बात को माना जाये अथवा नहीं, परंतु अपने समय में हमने अंग्रेजों को अपने देश से बाहर भगाने और मातृभूमि को स्वतंत्र कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।

अपनी इसी विरासत को हम अब युवापीढ़ी को सौंपना चाहते हैं। यदि वे इसकी रक्षा करना चाहें और यदि वे इसमें सफल हो पाते हैं, तो उनके परिश्रम और साधना का मूल परिणाम क्या होगा? क्या आम जनता की भलाई और उत्थान की योजनाएं इन युवाओं द्वारा जन-मानस में उत्पन्न किये गये भय के बोझ तले दब कर दम तोड़ देंगी? मेरे मस्तिष्क में यह एक ईमानदार आशंका उत्पन्न हुई है और मैं इस आशंका को मिटाने का और स्वयं को यह विश्वास दिलाने का यथासंभव प्रयास कर रहा हूं कि इस देश की

---

* निवारक निरोध अधिनियम, 1950 को संशोधन करने वाले विधेयक पर वाद विवाद में हस्तक्षेप करते हुए; संसदीय वाद-विवाद, 4 अगस्त, 1952 खण्ड-4, 1952 का॰ 5322-5366

बागडोर को अपने हाथों में संभालने जा रहे मेरे युवा मित्र आम जनता की स्थिति को सुधारने का प्रयत्न करने हेतु कटिबद्ध रहेंगे। मैं उनके इस मत से सहमत हूं कि अभी तक इस दिशा में जो भी कदम उठाये गये हैं वे पर्याप्त नहीं हैं और जहां तक देश की आर्थिक स्थिति का संबंध है, अभी भी बहुत कुछ किया जाना बाकी है। हमने अपनी यात्रा अभी आरंभ की है। लक्ष्य-सिद्धि हेतु अपनाये जाने वाले मार्ग के विषय में आपसे मतभेद है। कतिपय देशों में, व्यष्टिक निजी उद्यमों को पनपने का अवसर प्रदान किया जाता है और उनके द्वारा अर्जित लाभ के अधिकांश को शेष जन-समुदाय हेतु सामाजिक सुविधाएं उपलब्ध कराने में लगा दिया जाता है। पृथ्वी के दो बहुत बड़े भागों में एक और प्रयोग जारी है—जहां राज्य उत्पादन के साधनों को अपने नियंत्रण में रखता है और स्वयं ही उत्पादों का वितरण भी करता है। अब यहां प्रश्न यह है कि दीर्घ काल में उपर्युक्त दोनों प्रणालियों में से कौन-सी आम जनता के हित साधन के प्रति अधिक अनुकूल होगी? इसी बीच, हमने अपना निजी प्रयोग भी आरंभ कर दिया है जिसे मध्यमार्ग कहा जा सकता है और जिसमें निजी उद्यमों पर पूर्ण प्रतिबंध तो नहीं लगाया जाता है परन्तु काफी हद तक उत्पादन के सभी साधनों पर केन्द्रीय सरकार का पूर्ण स्वामित्व होता है। यही एक ऐसा प्रयोग है जिसे अपनाने का हमें अधिकार प्राप्त है। हमारे पूर्वजों ने जिस स्वतंत्रता को प्राप्त करने हेतु अपने जीवन का उत्सर्ग किया, उनसे इस विरासत को पाने वाले युवाओं से कांग्रेस सरकार का मात्र इतना अनुरोध है कि उसे पांच वर्ष शांतिपूर्वक कार्य करने दिया जाये जिससे वह देश में दूध और शहद की नदियां बहाने का प्रयत्न कर सके। यदि यह संभव नहीं है, तो उसके रास्ते में आने वाले अवरोधों को दूर करने का यथासंभव प्रयत्न करें। इस देश की बुजुर्ग पीढ़ी चिरंजीवी नहीं है और उनके जीवन के शेष दिन गिनती के हैं। 1920 में आरंभ हुए स्वतंत्रता-संग्राम में भाग लेने वाले व्यक्ति उस समय भी 60 अथवा 70 वर्ष की आयु को प्राप्त नहीं कर चुके थे। और, हम भी अपनी माताओं के गर्भ से 60 या 70 वर्ष के वार्धक्य को लेकर पैदा नहीं हुए थे। हम भी उस समय युवा थे। जब गांधी जी ने देश के युवाओं से स्वतंत्रता-संग्राम में कूदने का आह्वान किया था, तब हम सभी युवाओं ने परिणाम की चिन्ता न करते हुए अपना तन-मन और धन समर्पित कर दिया था। उस समय, हम यह नहीं जानते थे कि हमें स्वतंत्रता प्राप्त होगी और अंग्रेज भारत की सत्ता की बागडोर हमारे हाथों में सौंपकर यह देश छोड़कर चले जायेंगे। हमें यह भी पता नहीं था कि स्वतंत्रता हेतु हमारा यह संघर्ष कब समाप्त होगा और हमें ऐसा लगता था कि शायद अंग्रेज सरकार के जुल्मों और अत्याचारों को सहते-सहते एक दिन हम जेल की चारदीवारी के भीतर ही दम तोड़ देंगे।

मेरे युवा साथियों ने अपने जेल के भीतर मिलने वाली जिन यातनाओं और कठिनाईयों का जिक्र किया, वे हमारे लिये नयी बात नहीं है क्योंकि हमने भी अनेकों वर्षों तक यही सब कुछ सहा था। इस सदन के नेता उस समय के महान राजनैतिक बंदी रहे हैं। क्या इस देश में कोई दूसरा व्यक्ति यह दावा कर सकता है कि वह अपनी सरकार के नहीं अपितु विदेशी सरकार के अधीन बारह लंबे वर्षों तक जेल में रहा है? और कारावास के दौरान ही, उनकी पत्नी का देहावसान हो गया। परंतु उस समय भी उन्होंने अपनी मरणासन्न पत्नी के अंतिम दर्शन हेतु जेल से बाहर जाने से इंकार कर दिया जब तक कि उन्हें एक साधारण कैदी की भांति पूर्णरूपेण रिहा नहीं किया जाता। उन्होंने अपनी पत्नी के पार्थिव शरीर के अंतिम दर्शन प्राप्त करने से भी स्वयं को वंचित रखा। हम एक ऐसा नेता के हाथों से किसी "काले कानून" के पारित होने की उम्मीद कैसे कर सकते हैं? यदि ऐसे किसी "काले कानून" को पारित करने हेतु उन पर किसी प्रकार का दबाव भी डाला जाता है, तो हमें विषय का दूसरे पक्ष जानने हेतु आत्मविश्लेषण करना चाहिए। हमें अपने व्यवहार पर भी नजर रखनी चाहिये और स्वयं को किसी गलत राह पर चलने देने से रोकना चाहिए। यदि वे गलती पर हैं तो हमें उन्हें टोकना चाहिए और उनको राह दिखानी चाहिए। मैं अपने युवा मित्रों से यही दृष्टिकोण अपनाने की अपेक्षा करता हूं। स्वतंत्रता प्राप्त कर लेने के बाद भी इस कानून की अवधि को दो वर्षों के लिये आगे बढ़ा देने की मांग करना सुखदायी नहीं है। हम सभी जानते हैं कि यह एक अप्राकृतिक अनावश्यक कानून हैं। परंतु मैं ईमानदारीपूर्वक इस बात को मानता हूं कि अभी इस कानून की आवश्यकता बनी हुई है।

मुझे इस बात का बेहद अफसोस है कि मांसाहार करने वाले व्यक्ति को उसके दुष्परिणाम भी भुगतने ही पड़ते हैं। यहां मैंने पाया की प्रो॰ हीरेन्द्रनाथ मुखर्जी—मुझे यह नहीं पता कि वे जीवविज्ञान के प्रोफेसर हैं अथवा विधिशास्त्र के, ने कहा कि "कालाबाजारियों को सरकार तो गिरफ्तार करती नहीं है। अतएव, मुझे कानून को अपने हाथ में ले लेना चाहिए। मुझे उसे गोली मार देनी चाहिए।" जी हां, प्रो॰ हीरेन्द्रनाथ मुखर्जी जैसे किसी भी व्यक्ति को किसी कानून अथवा साक्ष्य, सिवाय इसके कि उसे कुछ पता चला है, के बिना ही किसी को भी गोली मार देने का अधिकार मिलना चाहिए। परन्तु यदि सरकार को यह पता चलता है कि क ख ग नाम का एक विशेष व्यक्ति भूमिगत हो गया है और वह हिंसा के द्वारा सरकार को गिराने का प्रयास कर रहा है तो उस व्यक्ति पर जनता के सामने न्यायाधिकारियों, जूरी के सदस्यों द्वारा अदालत में मुकदमा चलाना चाहिए। क्या यह कोई कानून है। क्या कोई भी सरकार किसी भी व्यक्ति को यह अधिकार देगी? अंततः मैं प्रो॰ मुखर्जी से यह पूछना चाहूंगा कि चाहे वह एक

लोकतांत्रिक अथवा निरंकुश सरकार हो, क्या वह किसी व्यक्ति को ऐसा कोई अधिकार देगी? मैं उनसे पूछता हूं कि यदि किसी व्यक्ति को अपने प्रति किये अपराध का बदला लेने के लिये कानून को अपने हाथ में लेने की स्वतंत्रता हो, तो क्या वह ऐसा करना पसंद करेगा? केवल न्यायप्रणाली अथवा सरकार से न्याय की प्रार्थना कर सकता है। इस पर भी वे हिंसा का मार्ग अपनाने में गर्व महसूस करते हैं। वे एक प्रोफेसर हैं। मुझे नहीं मालूम, विद्यार्थी उनसे कैसी शिक्षा ग्रहण करते होंगे। महोदय, आपको मैं यह अवश्य बताना चाहूंगा कि यदि यह सच नहीं होता कि आज भी देश के भीतर और बाहर हमारे युवा साथियों के हृदय में परिवर्तन नहीं आया है, तो मैं और मेरे कुछ आदरणीय साथी इस कानून को लंबे समय तक जारी रखने के पक्ष में नहीं होते और विशेषकर वे साथी जो यह कह रहे हैं कि ऐसे कानूनों का संविधान-पुस्तक में उल्लेख मात्र भी नहीं होना चाहिए। मुझे अपने एक साथी—जोकि हाल ही में अलीगढ़ विश्वविद्यालय गये हुए थे—से यह पता चला—जिसमें संशोधन किया जा सकता है—कि वहां जाकर प्रो० मुखर्जी ने विद्यार्थियों से कहा—"मेरे साथियों इस देश में आप मुसलमानों के साथ अच्छा सुलूक नहीं किया जाता है।" इस देश में रहने वाले किसी भी व्यक्ति का यह व्यवहार प्रशंसनीय नहीं है। इस देश में हम एक राष्ट्र के निर्माण में लगे हुए हैं। जिन देशवासियों ने यह कहा कि वे किसी दूसरी नस्ल से संबंध रखते हैं, उन्होंने ऐसा कहकर मानों भारत माता के दोनों हाथ काट दिये थे।

यह सही हुआ अथवा गलत, हमारी पार्टी सत्ता में आ गई है। मैं कामना करता हूं कि जब हमारी कर्तव्यमुक्ति की बेला आयेगी तो हमारे युवा साथी भारत माता के सम्मान की जिम्मेदारी अपने कंधों पर वहन करेंगे। भारत माता कोई हमारे ही साथ उठकर बैकुण्ठ, स्वर्ग अथवा नरक की ओर नहीं चल देगी। यह संसार हमारे बाद भी पूर्ववत् चलायमान रहेगा। यदि हमारे युवा साथी बाजुओं के जोर से सत्ता को हथियाने का प्रयास नहीं करेंगे, तो बहुमत द्वारा लिया गया प्रत्येक निर्णय अल्पमत को मानना ही होगा। हम जनता द्वारा चुनकर सत्ता में आये हैं। हमें केवल थोड़े से समय अर्थात् पांच वर्षों के लिये सत्ता में रहने का अवसर प्राप्त हुआ है और इस अवधि में वे हमारे द्वारा किये गये कामों को अनकिया करने का प्रयास क्यों करना चाहते हैं? हमने शासन संभालने का यह अधिकार अर्जित किया है। हमने देश की लोकतांत्रिक स्वतंत्रता को संघर्ष के उपरांत हासिल की है। आजकल चल रही यह हिंसा की लहर देश-हित के प्रतिकूल है। हमने अपने देश को स्वतंत्र कराने के लिये संघर्ष किया था। 1920 से आरंभ हुए इस स्वतंत्रता-संघर्ष में मेरी जानकारी में एक भी ऐसा मामला सामने नहीं आया जिसमें किसी अंग्रेज की हत्या हमारे देशवासी के हाथों हुई हो। एकाध ऐसा मामला बेशक हुआ हो परंतु वह मेरी जानकारी में नहीं आया। अपना घर और परिवार बलपूर्वक छीन लिये जाने के बावजूद ही हमने

उत्तेजित होकर ही ऐसा जघन्यकारी कृत्य नहीं किया। बल्कि 500-600 मील दूर किसी अज्ञात स्थान पर ले जाकर बंदी बनाये जाने पर भी हमने आंदोलन के मार्ग का त्याग नहीं किया। हमने खुले आम यह कहा कि हमारा उद्देश्य आंदोलन करना है और फिर हमने तिरंगें को ऊपर उठाकर सारी मुसीबतें और अत्याचारों को हंसते-हंसते सहा। हमारे जैसे शांति प्रिय देश में हिंसावाद को पनपने की अनुमति कतई प्रदान नहीं करना चाहिए। क्या इस देश की धरती में जन्मे महात्मा बुद्ध ने हमें यही संदेश दिया था? क्या महात्मा गांधी ने इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु अपने जीवन का उत्सर्ग किया था? हिंसा को बढ़ावा देने वाली इस प्रकृति का हमें परित्याग कर देना चाहिए.....

सन् 1941 में त्रिचिनापल्ली जेल में हमारे साथ उन दिनों साम्यवादी पार्टी से संबंध रखने वाले कुछ युवा मित्र भी थे। दक्षिण भारत के सभी ब्राह्मण पूर्णतः शाकाहारी हैं। परन्तु मेरे कुछ युवा मित्रों ने मांसाहार करना आरंभ कर दिया क्योंकि उन्होंने समझा कि यदि वे मांसाहार की आदत नहीं डालेंगे तो शायद हिंसा की ओर प्रवृत नहीं हो सकेंगे और उनके लिये हिंसा को अपनाना अनिवार्य था।

चेकोस्लोवाकिया के दूतावास से संबद्ध रहे और हाल ही में स्वदेश लोटे मेरे एक मित्र ने बताया कि वहां लोगों को शाकाहार की ओर प्रवृत करने तथा जीवनपर्यन्त शाकाहार की आदत बनाये रखने के लिये प्रेरित करने वाली एक संस्था थी। जिस पर रोक लगा दी गई और इस संस्था को समाप्त कर दिया गया क्योंकि यह माना गया कि शाकाहार से लोगों में अध्यात्मवादिता का उद्भव होता है जो उन्हें कमजोर प्रकृति का बना देती है। यदि आज हम हिंसावाद को अपनाते हैं तो हमें आदिम युग की अंधेरी खोह की ओर पुनः लोटना पड़ेगा और हम सभी आदमखोर जन्तु बन जायेंगे। क्या यही हमारी संस्कृति है? रूस और चीन जैसे देशों में जो परंपराएं प्रचलित हैं, वे वहां की सामाजिक संघटना के अनुकूल हो सकती है। परंतु हमें अपने लिये अनुकूल सिद्धांतों का विकास करना है जिनके सुखद परिणाम भी हमारे सामने आये हैं। अहिंसा-पालन के सिद्धांत ने हमें विदेशी प्रभुत्व से भी मुक्ति दिलाने में सफलता पाई है। जहां तक आर्थिक व्यवस्था का प्रश्न है, मेरे साम्यवादी युवा मित्र अहिंसा-मार्ग पर चलकर अपने देशवासियों को एक सहभागी राष्ट्र मंडल की ओर अमुख क्यों नहीं करते? यह मार्ग अभी भी उनके लिये खुला हुआ है। परन्तु यदि फिर भी वे हिंसा की प्रवृत्ति का परित्याग नहीं करते तो उन्हें इसके परिणाम भोगने हेतु भी तत्पर रहना होगा। यदि वे सरकार को गिराने अथवा व्यक्तिगत विषादों के निपटाने हेतु हिंसा का दामन थामते हैं तो उन्हें इसके दुष्परिणाम भी भुगतने होंगे। यदि वे साम्यवाद अथवा सर्वहारावर्ग का एकाधिपत्य स्थापित करना चाहते हैं तो उन्हें ऐसा करने का पूर्ण अधिकार प्राप्त है और उन्हें यथासाध्य ऐसा करने का अवसर प्रदान करना चाहिए। यदि यह मतप्रचार हिंसावाद पर आधारित है और ऐसा कहा भी जाता है—तो,

महोदय एक वकील की हैसियत आप भी यह जानते हैं कि ऐसा करने पर कोई भी सभा स्वतः ही गैर-कानूनी सिद्ध हो जाती है और ऐसा करने पर किसी भी सदस्य पर मुकदमा चलाया जा सकता है अथवा उसे गिरफ्तार किया जा सकता है। परन्तु हमने कभी ऐसा किया नहीं बल्कि हमने उनके प्रति उदारतापूर्ण दृष्टिकोण अपनाया है। हमने इन लोगों को यह कहने का पूरा अवसर दिया कि इस देश के लिये लोकतंत्र-प्रणाली उचित नहीं है और केवल एकाधिपतिवाद से ही कार्य सिद्ध हो सकता है। यदि आम जनता की भी यही राय है तो आपको ऐसा करने का पूरा अधिकार है। परन्तु यदि इसके साथ-साथ आप यह भी कहना चाहते हैं कि यदि आम जनता आपकी बात का समर्थन नहीं करेगी तो आप आतंकवाद का सहारा लेंगे, पुलिस निरीक्षक की सरेआम हत्या कर देंगे, तो मैं कहूंगा कि "रुकिये, ऐसा कभी मत कीजिये"। और यदि आप ऐसा करना चाहते हैं और हैदराबाद के नालकोण्डा की तरह आप हथियारों से लैस होकर घूमना चाहते हैं तो संसद के भीतर भी इस प्रकार की ठगविद्या से काम नहीं चलेगा। आज कोई भी सरकार व्यक्तिगत हिंसा का विरोध और उसकी अपेक्षा सामूहिक हिंसा का समर्थन करती है। निश्चय ही ऐसा होता है। समाज के हित-साधन को ध्यान में रखते हुए हमें ऐसा करने का हक है। प्रत्येक सरकार का अस्तित्व हिंसा पर आधारित होता है। जहां तक संभव हों, हम इस प्रकार की हिंसा से बचने का प्रयास करते हैं परंतु हम ही नहीं, बल्कि कोई सरकार—भले ही वह काले लोगों की हो अथवा गोरे लोगों की—किसी भी व्यक्ति को कानून को अपने हाथ में लेने का अधिकार नहीं दे सकती। इसलिये मैं यह मानता हूं कि यह निरोध अधिनियम अगले दो वर्षों के लिये ही नहीं अपितु आगामी दो सौ वर्षों तक प्रासंगिक बना रहेगा। इस विषय पर हमें स्पष्टवादी होना चाहिए और मैं तो यही बात कहूंगा। वर्तमान स्थिति को देखकर मुझे ही नहीं बल्कि हर किसी को हार्दिक दुःख होता है। हम लोकतंत्र और शांतिपूर्ण जीवन-चर्चा की स्थापना करना चाहते हैं और हम ऐसा करने के लिये कृतसंकल्प हैं भले ही हमारे युवा मित्र इसे पसन्द करें अथवा नापसन्द। वे इस देश में अपनी सत्ता स्थापित करने हेतु अपरिपक्व रूप से उत्सुक हैं। परंतु उन्हें इस लक्ष्य की सिद्धि हेतु हिंसा के रास्ते पर नहीं चलने दिया जायेगा। क्या हमने एक भी व्यक्ति की हत्या की थी? अपने ऊपर होने वाले सभी अत्याचारों और अन्यायों को मैंने सेवा तथा आत्मोसर्ग की भावना के साथ झेला जिससे कि मैं अन्य लोगों के सामने एक आदर्श स्थापित कर सकूं। परंतु ये युवा मित्र अपने ही जन्मदाताओं की हत्या करने के उद्धत हैं। यही तो परेशानी है। वे ऐसे लोगों की हत्या करना चाहते हैं जिन्होंने इस देश की स्वतंत्रता प्राप्ति तथा प्रगति हेतु संघर्ष किया। किंतु ऐसा नहीं होने दिया जायेगा। जब तक वे लोग इस हिंसा का परित्याग नहीं करते.....। यह एकदम गलत है। यह कहा गया कि यह सब कुछ पुलिस ज्यादतियों के विरोधस्वरूप हो रहा है। मैं यह नहीं कहता कि प्रत्येक

पुलिसकर्मी सज्जन पुरुष हैं परंतु यदि वास्तव में पुलिस ज्यादती कर रही है तो सरकार के पास इसके विरुद्ध कार्यवाही करने का पर्याप्त आधार है। उससे कार्यवाही करने की मांग करनी चाहिए। परंतु क्या इससे आपको किसी पुलिसकर्मी की हत्या करने का अधिकार मिल जाता है। इस सबसे यह केवल मेरी ही नहीं, बल्कि प्रत्येक विवेकपूर्ण चिंतक की यह मान्यता पुष्ट होती है कि ये लोग झूठी दर्पोक्ति पेश करके कि पुलिस ने आम जनता पर अनेक ज्यादतियां की हैं और यही कारण है कि एक बड़ी संख्या में लोग स्वेच्छापूर्वक आगे आये, अपनी करतूतों पर पर्दा डाल रहे हैं।

* * * *

मुझे केवल इतना ही कहना है। मेरे मित्र खुले आम यह कहने का दुस्साहस करते हैं कि "जी हां, हिंसा की प्रवृत्ति को दिनों दिन और व्यापक होना चाहिए"। दूसरी ओर इस देश को स्वतंत्रता दिलाने वाले व्यक्तियों की हैसियत से हमारी यह जिम्मेदारी बन जाती है कि हम अपने देश के भीतर किसी भी कीमत पर कानून और व्यवस्था कायम करें। अतएव, इस बात की कोई परवाह नहीं करनी चाहिए यदि हमारे कुछ मित्रों को जेल के भीतर कैद कर के रखना हो। हम उनको जान से तो नहीं मार रहे हैं, बल्कि उन्हें कोई भी नुकसान पहुंचाने में समर्थ होने से रोका जा रहा है। कुछ सदस्यों ने अपने हाथ और पैरों को दिखाते हुए कहा "ये हाथ जेल में तोड़ा गया था"। हम भी कभी जेल गये थे। आप जेल के भीतर अनुशासन का पालन करिये। यदि आप जेल के नियमों को मानेंगे नहीं तो जेल का कामकाज कैसे चलेगा? हमने भी जेल की हवा खाई थी और इन युवा मित्रों से कहीं अधिक सरकार का विरोध किया था। ये लोग तो उस समय जेल से बाहर थे और उस सरकार का समर्थन कर रहे है। (व्यवधान) मैंने दुनिया को देखते हुए अपनी सारी उम्र गुजार दी और अब मुझे केवल यहां सदन में नहीं, बल्कि बाहर भी सच बोलने का पूरा अधिकार है। हमें अमरौठी जेल में कैद करके रखा गया था। अमरौठी जेल के बाहर जो इश्तहार चिपकाया गया था, उसमें लिखा था, "ये लोग हमारे दुश्मन जापान के साथ मिले हुए हैं। ये लोग उन्हें हमारी खबरें पहुंचाते हैं। इन्हें हमेशा जेल के भीतर कैद ही रखना चाहिए।" अनेक संस्थानों ने ऐसे इश्तहार अथवा सूचनाएं जारी की थीं।

यह अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण है कि जहां हमारी स्वजाति के युवाओं को हमारे साथ स्वतंत्रता-संग्राम में कूद पड़ना चाहिए था, वहीं न केवल उस संघर्ष से विमुख रहे अपितु हमारी मान्यता और सिद्धांतों के प्रतिकूल किसी अन्य व्यक्ति का स्तुतिगान कर रहे थे। हमें यह भूल जाना चाहिए—मैं सचमुच इसे भूल जाना चाहता हूं परंतु आज यह विस्मृति हमें गहरे संकट में डाल देगी क्योंकि आज भी वे हिंसा के ही अनुयायी बने हुए हैं। यह सब कुछ ऐसा ही है मानो मेरा एक युवा मित्र हर समय जेब में रिवाल्वर रखकर घूमता हो और जैसे ही वो मुझसे मिलने के लिये मेरे गले लगे तुरंत ही मुझे असावधान पाकर

मुझे गोली मार दे। मैं उससे केवल इतना ही कहूंगा "या तो जेब में रिवाल्वर रखना छोड़ो या फिर मुझसे मिलना छोड़ो।" परंतु वह न तो जेब में रिवाल्वर ही रखना छोड़ेगा और न ही मुझसे मिलना और फिर वह मुझसे गले भी मिलना चाहेगा और अवसर पाते ही मुझे गोली मारने की ताक में भी रहेगा। क्या लोकतंत्र का यही तर्क है? मेरे विचार में लोकतंत्र के अर्थ उनकी मान्यता से भिन्न हैं। ब्रिटेन और अमरीका में भी लोकतंत्र-प्रणाली विद्यमान है परंतु वहां की आम जनता अपनी रक्षा स्वयं करने में पूर्णतः समर्थ है। किन्तु हमारी जनता अपने उत्तरदायित्वों के प्रति सजग नहीं है। वह पुलिस से और सबसे अधिक साम्यवादियों से खौफ खाती है। एक पिता भी अपने साम्यवादी पुत्र से भयभीत रहता है। आपको मालूम नहीं है कि आज इस देश में क्या-क्या हो रहा है। न जाने कितना साहित्य खुले-आम बांटा जा रहा है। एक अठन्नी मात्र देकर आप साम्यवादी साहित्य की अनेक पुस्तकें खरीद सकते हैं। मुझे नहीं मालूम कि जितने युवा मित्र ऐसे साहित्य को पढ़ते हैं उनमें से भला कितने वास्तव में उनकी उपांत उपयोगिता अथवा भौतिकवादी इतिहास या क्रांति को समझ पाते हैं।

पंडित मोतीलाल नेहरू के नाम का यहां उल्लेख किया गया और मेरे आदरणीय मित्र ने उनके कतिपय उद्धरणों को पढ़ा जिनकी वाक्पटुता यहां उपयोगी रूप में खर्च होने की अपेक्षा व्यर्थ अधिक हुई है। उन्होंने पंडित मोतीलाल नेहरू का संदर्भ लिया। मैं उनके द्वारा उद्धृत प्रत्येक शब्द से सहमत हूं परन्तु उन्होंने यहां पंडित मोतीलाल नेहरू का अप्रासंगिक तथा अनुचित उल्लेख किया है। पंडित मोतीलाल नेहरू ने वास्तव में क्या कहा था? उन्होंने कहा था "मैं पाक दामन हूं। मैं स्पष्टवादी हूं। जब भी मैं सत्याग्रह आरंभ करता हूं तो पहले ही उसकी सूचना दे देता हूं। मैं कुछ भी गोपनीय रूप से नहीं करता। मैं किसी की हत्या नहीं करना चाहता। मैं लहू की एक भी बूंद बहाना नहीं चाहता।" महोदय, आपको शायद स्मरण हो कि लाला लाजपतराय ने लार्ड साईमन की भारत यात्रा का विरोध किया था जिसके फलस्वरूप उन्हें छाती पर लाठी के प्रहार सहने पड़े और उन्होंने प्राण त्याग दिये जिससे भारतवर्ष ने अपने महानतम सपूत को खो दिया। हम लोग त्याग करने और कठिनाईयां झेलने हेतु तत्पर रहते हैं। इसीलिये पंडित मोतीलाल नेहरू ने कहा था। "आपने यह गुप्त कानून किसलिये बनाया हुआ है? आप इसे भूमिगत लोगों के विरुद्ध लागू करिये, हमारे ऊपर नहीं। हम लोग कभी-कभी भूमिगत गतिविधियां नहीं करते। फिर आप हम पर यह कानून क्यों थोपना चाहते हैं?" वर्तमान स्थिति में इसका प्रयोग करने हेतु में समझ नहीं पा रहा हूं कि इसका वर्णन कैसे करूं। मैं आपसे कहता हूं कि आप मैदान में सामने आइये। यदि आप में साहस है तो अपने सिद्धांत का पालन खुले आम कीजिये और इसके लिये गिरफ्तारी दीजिये और जीवन का उत्सर्ग कीजिए। यदि आप अपनी बात को इस रूप में लोगों तक पहुंचाना चाहते हैं तो मुझे कोई

आपत्ति नहीं है। परन्तु यदि आप भूमिगत हो जाते हैं तो हमें भूमिगत लोगों के लिए एक भूमिगत कानून अनिवार्य रूप से बनाना पड़ेगा। और इसमें नुकसान भी क्या है? भूमिगत लोगों के समूह पर एक भूमिगत कानून ही तो लागू होना चाहिए। यहां लोकतंत्र की दुहाई देने का क्या अर्थ है? हमारे देशवासी अपने पांवों पर खड़ा होने में असमर्थ हैं और उनकी रक्षार्थ ऐसे कानून का बनाया जाना आवश्यक है।

अपने कुछ मित्रों की टिप्पणियों को मैंने बड़े धैर्यपूर्वक सुना। मैं अपने साथियों का आदर करता हूं। जो जोखिम मैंने उठाये हैं, उनका मुझे पूरा-पूरा ज्ञान है। उन्हें भी ऐसे ही जोखिम उठाने की पूरी स्वतंत्रता है। परन्तु क्या वे त्याग करने के लिये तत्पर हैं? उनके त्याग से ही यह देश समृद्धि प्राप्त करेगा। परन्तु वे ऐसा कोई भी जोखिम उठाने के लिये तैयार नहीं हैं। ऐसे लोग देश का कभी भी कोई भला नहीं कर सकते जो स्वयं हाथ पर हाथ धरे बैठे रहकर दूसरों द्वारा किये गये बलिदानों को भुनाना चाहते हैं। हमारे युवा मित्रों को हमारे पूर्वजों के बताये हुए रास्ते पर चलना चाहिए। पहले वे अहिंसा और ईमानदारी का मार्ग अपनायें और फिर उचित समय के आने पर उन्हें सत्तारूढ़ होने का अवसर प्रदान किया जाये। परन्तु मैं यहां पर उपस्थित आरामकुर्सी प्रिय राजनीतिज्ञों— एक सेवानिवृत्त उच्च न्यायालय जज, एक समाचार पत्र संपादक और अन्य की संख्या पर आश्चर्यचकित हूं। क्या ऐसे लोगों ने देश-हित की साधना के लिए पसीने की एक भी बूंद बहाई है? वे तो केवल कुर्सी पर बैठे रहना चाहते हैं।

न हि बन्धया विजानाति

उन्हें इस बात की कोई परवाह नहीं है कि शासक रावण है अथवा राम। उन्हें तो केवल निजी स्वार्थ सिद्धि से सरोकार है। वे हमें उपदेश देते हैं और हमें अनेकों काम करने का आदेश देते हैं। इस सब का प्रयोजन क्या है? क्या यही कि देश में अशांति फैले और वे देख-देखकर आनंदित हों? साम्यवादियों को शायद यह भ्रम है कि किसी न किसी दिन उनकी सरकार बनेगी और उनके वकील मित्र यह समझते हैं कि उनकी आयु को नजरअंदाज करते हुए उन्हें उस सरकार में विधि मंत्री अथवा महाधिवक्ता के पद पर आसीन कर दिया जायेगा। मैं व्यक्तिगत मामले नहीं उठाना चाहता हूं, परन्तु उनके सोचने का यही ढंग है। वे देश की स्थिति को समझने का कोई प्रयास नहीं करते क्योंकि उन्होंने संघर्ष करके इसे अर्जित नहीं किया है अतएव, उन्हें इस विरासत के सही-सही मूल्य का अंदाजा नहीं है और वे इसकी देखभाल करने की महत्ता को समझ नहीं पाते। यहां पर एक ऐसे महाराजाधिराज्य उपस्थित हैं जो अपना राज्य तो खो चुके हैं परन्तु अपनी इस पदवी को बनाये रखना चाहते हैं। और इस सबके बावजूद वे जन-स्वातंत्र्य के बहुत बड़े हिमायती हैं। मैं पटना के महाराजा की बात कर रहा हूं। कोई व्यक्ति अपना सब कुछ

खो देने पर भी वह अपने आपको "महाराजा" कहलाया जाना पसंद करता है। मुझे इस मानसिकता पर बेहद आश्चर्य है। इन जागीरदारों की ही बात लीजिये। मेरे हृदय में उनके प्रति गहरा सम्मान है। हमने अपने स्वतंत्रता-संग्राम में कलम को हथियार के रूप में प्रयोग किया था। विश्व के किसी अन्य देश में ऐसी अभूतपूर्व क्रांति देखने में नहीं आई है। सभी महाराजाओं ने अपने समस्त धन-संपदा को दांव पर लगा दिया था। वे यश के भागी हैं। परन्तु दुर्भाग्यवश, उनमें से कतिपय महाराजा अपनी सत्ता को बाजू के जोर पर पुनः हथियाना चाहते हैं। क्या हमें उनकी मदद करनी चाहिए?

जब श्री गोपालन पर आंतकवादी गतिविधियों में शरीक होने का आरोप लगाया गया तो मेरे माननीय मित्र डा० एस०पी० मुखर्जी ने कहा "आप उनसे पूछिये।" मैं भला उनसे क्या पूछूं? आप उनके बुजुर्ग हैं? क्या आप इन बातों की तह तक पहुंचने का कष्ट करते हैं? क्या आपमें उनसे यह कहने का साहस है कि "यह काम गलत है।" यदि वे कोई गलत कदम उठाते हैं तो क्या आप उन्हें इससे बचकर चलने का परामर्श देते हैं?" मैं आपसे ऐसे ही व्यवहार की उम्मीद रखता हूं, परन्तु दुर्भाग्यवश उनको सारा ज्ञान, वाक्पटुता और अनुभव उस तरफ झुक जाता है क्योंकि मेरे ये मित्र इस तरफ बैठे हुए हैं और बदकिस्मती से उस दूसरी तरफ नहीं बैठ सकते हैं। अतएव मेरे माननीय साथी की समस्त वाक्पटुता केवल इन्हीं प्रयोजनों के निमित प्रयुक्त होती है। (एक माननीय सदस्यः आप भी उसी पक्ष के हैं।) मैं तो परिस्थितिवश इस तरफ बैठा हुआ हूं।

अब, जहां तक मेरे आदरणीय मित्र श्री सारंगधर दास और साम्यवादी पार्टी के अन्य सदस्यों का संबंध है, उन सभी ने अपने-अपने उत्तरदायित्वों का अपने-अपने ढंग से निर्वाह किया है। क्या आप जानते हैं कि उन्होंने सन् 1948 में क्या किया? कलकत्ता में उन्होंने जल और बिजली ट्रामकार तथा अन्य सभी सभ्य समाज की बुनियादी जरूरतों से संबद्ध वस्तुओं की आपूर्ति को ठप्प करने के उद्देश्य से हड़ताल की। वे समस्त जीवन-प्रक्रिया को ठप्प कर देना चाहते थे। किन्तु वे अपने इस उद्देश्य की पूर्ति में सफल नहीं हो सके। उस मोर्चे पर मुंह की खाकर वे सीधे दिल्ली चले आये। शायद आप को यह नहीं मालूम कि वे क्या कुछ करने का मंतव्य लेकर दिल्ली आये थे। उन्होंने दिल्ली परिवहन निगम में हड़ताल करवाई। दुर्भाग्यवश, उनकी इस कोशिश को भी नाकाम कर दिया गया। उन्होंने विद्युत आपूर्ति निगम के कार्य में भी बाधा उत्पन्न करनी चाही। एक बार फिर उनके प्रयासों को निष्फल कर दिया गया। जिसके फलस्वरूप वे यहां से भाग कर बम्बई पहुंच गये और वहां उन्होंने वस्त्र मिलों आदि में हड़ताल शुरू कराने के प्रयास किये। मैं आपसे पूछता हूं कि क्या देश में राजनैतिक क्रांति लाने के उद्देश्य की सिद्धि हेतु क्या हड़तालों को साधन बनाना चाहिए? इस देश में ईमानदार ट्रेड यूनियन प्रणाली तंत्र को कभी भी दबाने का प्रयास नहीं किया जायेगा। हम ट्रेड यूनियन

व्यवस्था के पक्षधर हैं। हम यह चाहते हैं कि मजदूरों को अपना वाजिब हक मिलना ही चाहिए और उनकी उचित शिकायतों को दूर किया जाना चाहिए और उनके विषय में सभी को मिल-जुलकर प्रयास करने चाहिए। हमने बेहद बड़े पैमाने पर हितकारी कदम उठाये हैं जोकि आज से पहले कोई भी अन्य सरकार करने में सक्षम नहीं हो पाई थी। परन्तु मेरे आदरणीय मित्र डा० लंका सुन्दरम ट्रेड यूनियन की आड़ लेकर विशाखापट्टनम जाते हैं और गोदीबाड़े में काम करने वाले कर्मचारियों को प्रशासन के विरुद्ध उकसाते हैं और राजनैतिक दबाव की स्थिति उत्पन्न करने के उद्देश्य से उन्हें अनेक अनुचित काम करने का आदेश देते हैं जिससे कि इस देश का शासक अथवा प्रधान मंत्री बनने की उनकी कामना पूर्ण हो सके। हम उन्हें ऐसा करने की अनुमति नहीं दे सकते हैं। महोदय, क्या मैं गलत कह रहा हूँ? अभी तक तो हम यही देखते आये हैं कि ट्रेड यूनियन के इस अस्त्र का प्रयोग इस सरकार को गिराने हेतु ही किया गया है जोकि ऊपरी तौर पर न्याय संगत पद्धति है। यदि कल को मेरे आदरणीय मित्र डा० मुखर्जी इस देश के उद्योग मंत्री बन गये तो कौन जानता है कि वे इस प्रणाली को ही लागू रहने देगें अथवा नहीं। दुर्भाग्यवश उनका मतभेद किसी और मुद्दे को लेकर था। परंतु उस मुद्दे को लेकर भी मैं अपने विचार रखना चाहूंगा। मैं एक हिन्दू हूं। परंतु इसका तात्पर्य यह कदाचित नहीं है कि मैं सर्वप्रथम एक हिंदू हूं और बाद में कुछ और। मैं सब कुछ होने के साथ-साथ एक भारतीय हूं। मेरी जिन्दगी कुछ हिस्सों में बटी हुई बिल्कुल नहीं है। मैं समझता हूं कि जीवन एक अविभक्त और अविभाज्य प्रक्रिया है। यदि मुझे सदन में ली गई शपथ के अनुरूप सत्य बोलने का अवसर प्राप्त होता है तो वह मेरे लिये पर्याप्त है। मेरे अन्य मित्रों ने भी यहां आकर शपथ ग्रहण की है। उन्होंने लोकतंत्र की मर्यादा की रक्षा का प्रण किया है। हम लोकतंत्र का समर्थन करते हैं। वे लोग भी कहते तो कुछ ऐसा ही हैं परंतु वे अपनी युवा पीढ़ी को एकाधिपत्य की स्थापना हेतु शोर मचाने का उपदेश देते हैं। इस सब से क्या भला होगा? आप उनसे ऐसा क्यों नहीं कहते कि "इस सरकार का अगले पांच साल का कार्यकाल निश्चित है। वे पांच साल व्यतीत होने की प्रतीक्षा कर लेंगे।" यदि पांच वर्ष समाप्त होने के बाद, आप देखते हैं कि यह सरकार सुचारू रूप से कार्य नहीं कर पाई, अथवा लोकतंत्र का यह प्रयोग चल नहीं पाया है तो आप सदन की छत पर खड़े होकर जोर-जोर से चिल्लायेंगे कि "एक नया प्रयोग करना आवश्यक हो गया है।" आप इस प्रकार धैर्य खोकर हड़तालों और तालाबंदी जैसे गलत कार्यों की ओर प्रवृत्त क्यों होते हैं?

मेरे आदरणीय मित्र डा० एस०पी०मुखर्जी कहते हैं, "आपने राजस्थान और सौराष्ट्र में गुंडों को गिरफ्तार करने की पहले से ही तैयारी क्यों नहीं की?" मान लीजिये कि डा० मुखर्जी किसी एक का पक्ष ले रहे हैं और हमें यह रिपोर्ट प्राप्त होती है कि वे

साम्यवादी विचारधारा का समर्थन कर रहे हैं, तब भी क्या उनको गिरफ्तार करना इतना आसान है? कभी नहीं। बेशक मैं भी कुछ शक्तियां अपने हाथ में रखता हूं। परंतु क्या आपके कथन का अभिप्राय यह है कि बंगाल के प्रधानमंत्री उन्हें गिरफ्तार करने का साहस कर सकते हैं? (डा० एस०पी० मुखर्जी: क्यों नहीं) "क्यों नहीं" कहना तो बेहद आसान है, परंतु यदि वे सत्ता की कुर्सी पर आसीन हों और मैं वहां जाऊं, तो वे सरलतापूर्वक किसी भी पुलिसकर्मी को मुझे गिरफ्तार करने का अधिकार दे सकते हैं परंतु मैं जानता हूं कि वे ऐसा नहीं करेंगे क्योंकि उन्हें मैं बेहद प्रिय हूं। परंतु आपके मामले में यह सब इतना आसान नहीं है। हमें यथार्थवादी होना चाहिए। मैं जानता हूं कि मेरे आदरणीय मित्र यह चाहते हैं कि यह देश दिनों-दिन और प्रगति करे। मुझे आज भी याद है कि डा० एस०पी० मुखर्जी तीन या चार वर्ष पूर्व ऊटकमंड में आयोजित ECAFE कान्फ्रेंस में भारत की ओर से भेजे गये शिष्टमंडल के नेता अथवा सदस्य की हैसियत से गये थे और वहां उनके कार्य की भूरि-भूरि प्रशंसा हुई थी। हमें अमेरिका से भारी छूट मिलने की आशा थी परंतु निराशा ही हाथ लगी। वे एक निर्भीक व्यक्तित्व हैं। परंतु शायद किसी बिन्दु पर आकर उनका मत वैमनस्य हो गया। आखिरकार, हम सभी को यह याद रखना चाहिए कि हम औंधे मुंह गिरने की कगार पर थे। हमें स्थिति की पूरी जानकारी नहीं थी परंतु उन्हें शायद अंदर से कोई सूचना प्राप्त हुई थी। बाहर बैठे हुए हमने सोचा कि वे अपना कार्य अच्छी तरह से कर रहे हैं। उन दिनों पाकिस्तान और भारत के मध्य तनावपूर्ण स्थिति थी और किसी भी समय युद्ध भड़कने की आशंका थी शायद डा० मुखर्जी ने सोचा होगा कि "पाकिस्तान तो एक छोटा सा देश है और मैं एक महान दैत्य हूं जो आसानी से उसे चूर-चूर कर सकता हूं।" परंतु हमें कोरिया का अनुभव अभी भूला नहीं था। जैसे ही युद्ध आरंभ हुआ और बमबारी होने लगी तो विश्व की दोनों महाशक्तियां भी रणभूमि में कूद पड़ी थीं। क्या पाकिस्तान के साथ भी इसी घटना की पुनरावृत्ति करना चाहते हैं? तीन वर्षों तक चले विश्वयुद्ध के परिणामस्वरूप हमें रायलसीमा तथा देश के अन्य स्थानों पर भुखमरी के साथ-साथ 62 लाख शरणार्थियों की समस्या से जूझना पड़ा था। एक भी व्यक्ति सुरक्षित नहीं था। मेरा संबंध एक ऐसे धार्मिक केन्द्र से है जहां प्रतिवर्ष विवाह-सम्मेलन आयोजित होते हैं। पति और पत्नी ट्रेन में सवार होते हैं और वहां से बेजवाड़ा जाना चाहते हैं परंतु बीच में ही स्वर्ग की ओर रवाना हो जाते हैं। ऐसा सन् 1948 में हुआ था। मेरे आदरणीय मित्र श्री पुन्नूस ने श्री चाको को गले लगाते हुए कहा था "हम दोनों मित्र थे फिर भी मुझे गिरफ्तार किया गया और तुम्हें स्वतंत्र रखा गया"। क्योंकि सन् 1948 में गांधी जी की हत्या हुई थी और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ सक्रिय था। वायुमार्ग के अलावा दिल्ली पहुंचने का और कोई भी यात्रा-मार्ग सुरक्षित नहीं था। मद्रास से पचास मील दूर, सुलुरपेट में दो गाड़ियां उलट गई थीं और 98 व्यक्तियों

की जानें चली गई थीं। क्या वे भी हमारे ही भाई बन्धु नहीं थे? हमारा अपना ही लहू नहीं थे? क्या उनकी याद करके हमारी आंखों में आंसू नहीं आते अथवा कोई इस घटना के बारे में उल्लासित होकर यह कह सकता है कि "इन सभी हत्याओं की जिम्मेदारी मेरी है।" मैं यह नहीं कह रहा हूं कि किसने यह काम किया है। (व्यवधान) क्या यह शैतान का काम था? इसमें अवश्य ही किसी मनुष्य का हाथ था।"

ऐसी घटनायें केवल दक्षिणी भारत रेलवे के साथ ही नहीं हो रही थीं। ऐसा पूर्वी बंगाल रेलवे तथा अन्य स्थानों पर भी हो रहा था। सन् 1948 में हुई इन घटनाओं की गहराई में जाकर देखिये। उस समय प्रधानमंत्री ने फरवरी, 1949 के आसपास इस पार्टी की गतिविधियों पर टिप्पणी की थी। 28 फरवरी, 1949 को आयोजित संविधान-सभा में प्रधानमंत्री ने कहा कि "हड़ताल का मजदूरों की स्थिति में सुधार लाने अथवा ट्रेड यूनियनों की सामान्य गतिविधियों से कोई संबंध नहीं है। इसका एकमात्र उद्देश्य रेलवे प्रणाली को पंगु बनाकर दंगा कराने तथा हालात को अशांत बनाना और प्रशासन को कमजोर करना है। उनका स्थायी तरीका तोड़फोड़ करना है। लोकोमोटिव्स तथा महत्वपूर्ण संस्थापित यंत्रों, टेलीफोनों, दूरग्रामों तथा विद्युत केन्द्रों में तोड़फोड़ करना है।" प्रधानमंत्री ने यह सब उन दुर्घटनाओं के विषय में कहा था न कि निवारक निरोधक अधिनियम के प्रयोजन से। यह सब कुछ एक मूर्ख साम्यवादी द्वारा महात्मा गांधी की हत्या के बाद शुरू हुआ। इन दुर्घनाओं के पीछे हमारा कोई हाथ नहीं था। हम सभी समाज के सम्मानित व्यक्तियों में से हैं जिनमें से ज्यादातर नजरबन्द थे। अन्यथा शायद घटनाओं ने दूसरा ही मोड़ ले लिया होता। परंतु उनके दूसरे साथी पूरी तरह से सक्रिय थे जिन्होंने टेलीफोन और टेलीग्राफ आदि की तारों को काट दिया था और उनकी दलील यह थी कि "आपने स्वयं ही तो हमें यह सब कुछ सिखाया था।" युद्ध की समाप्ति के कगार पर सेना में भर्ती हुए एक व्यक्ति को यह आशा नहीं थी कि युद्ध इतनी जल्दी समाप्त हो जायेगा परंतु उसने तब तक गोली चलाने की कला सीख ली थी। अतः वो अपनी मां के पास गया और उससे बोला "मां, मैंने गोली चलाना सीख लिया है, अपना सीना मेरे सामने करो।" मैं अपने मित्रों से पूछता हूं कि क्या मुझे अपनी छाती उसका निशाना बनाने के लिये तानें देनी चाहिये? क्या इसी उद्देश्य के लिये हम लोग जेल गये थे और हमारी पार्टी के नेता और अन्य सदस्यों ने विदेशी सरकार के अत्याचार सहे थे? हम एक समृद्ध देश आपके हाथों में सौंप कर जाना चाहते हैं। यदि हम पांच वर्ष की अवधि के भीतर इस देश को समृद्धि की राह पर अग्रसर नहीं करते और यहां घी दूध की नदियां नहीं बहाते, तो आप लोग इस देश के शासन की बागडोर अपने हाथों में ले लीजियेगा। कुछ स्थानों पर आपको अवश्य सफलता मिली है। इससे मैं इंकार नहीं करता। तंजोर के मीरसदरों ने मेरे मित्र सन्थानम के पक्ष में मतदान नहीं किया था क्योंकि वे उस रिपोर्ट के खिलाफ थे

जिसके अनुसार यदि किसी एक व्यक्ति के पास सौ-दो सौ एकड़ जमीन हो तो उसे 25-25 एकड़ के टुकड़ों में बांटकर भूमिहीन लोगों को बांट दिया जायेगा। इन लोगों ने ही साम्यवादियों के पक्ष में मतदान किया था। सभी प्रतिक्रियावादियों ने उनके पक्ष में मतदान किया था। इस सदन में विपक्ष के बेन्चों पर वही लोग विराजमान हैं। क्या इनके बीच में कोई संबंध है? वे हमारे आदर्शों और सिद्धांतों पर यहां अंगुली उठा रहे हैं। वे अनुशासन की स्थापना करना चाहते हैं। कभी-कभी नैतिकता भी अभिशाप बन जाती है। तेलगू भाषा में एक कहावत है कि बाजार में हो रहे किसी झगड़े को सुलझाने के लिये वेश्या सबसे उत्तम मार्गदर्शक हो सकती है। मुझे अफसोस है, यहां मैं पुरूष जाति की निन्दा नहीं कर रहा हूं। यहां ऐसे अनेक व्यक्ति हैं और विगत में हुए हैं जिनमें आपस में कोई समान संबंध-सेतु, मतपंथ नहीं था अपितु उनका एक मात्र ध्येय कांग्रेस को पराजित करना था। गोदावरी नदी के डेल्टा प्रदेश में किसानों के पास अनाज का पर्याप्त भंडार था। वे उन्हें ऊंचे दामों पर बेचना चाहते थे। परन्तु कांग्रेस सरकार उन पर से अपना नियंत्रण हटा नहीं रही थी। यदि राजाजी इस मामले में पहले से ही दिलचस्पी लेते तो शायद बात का रुख दूसरा ही हो जाता। नेतृत्व को चुनौती देना तो बहुत आसान है। मैंने भी अपने प्रदेश में सफलता हासिल की है। वे लोग ऐसा क्यों चाहते हैं कि डा० काटजू श्री नम्बियार के स्थान पर खड़े हों? ठीक है, यदि ऐसा ही है तो आप डा० काटजू के घर जाकर अपनी ताकत तोलिये।

इन परिस्थितियों के अधीन मैं समझता हूं कि वर्तमान व्यवस्थाओं को बनाये रखना अति आवश्यक है। हमने इस दिशा में एक दो कदम उठाये हैं। हम यह जानते हैं कि इस अधिनियम को कुछ और समय तक लागू रहना चाहिए। कुछ ऐसे सुझाव भी मिले हैं कि किन्हीं विशेष स्थानों पर इस अधिनियम को प्रभावी बने रहना चाहिए। ऐसे स्थान जिनका विगत दागदार रहा हो। वहां इसे लागू करना चाहिए। जहां ऊपरी तौर पर तो ऐसा प्रतीत होता है कि यहां एक आपात स्थिति है जिससे निपटना अत्यंत आवश्यक है। फिर इसे उन स्थानों पर भी लागू कर देना चाहिए जहां-जहां ऐसा करना आवश्यक समझा जाये। इसे लागू करने से पूर्व एक अधिसूचना जारी किया जाना ही पर्याप्त होगा। इसके लिए बार-बार सरकार से अनुमति लेने की कोई आवश्यकता नहीं होनी चाहिए।

प्रवर समिति ने इस मामले में एक उल्लेखनीय कदम उठाया है और वह यह है कि अब तक, एक बार किसी अपराध के दण्डस्वरूप बन्दी बनाये जाने पर पूर्ववर्ती नियमों के अधीन नये नजरबन्दी आदेश जारी करके उसे अनन्त काल तक के लिये जेल में रखा जा सकता है जिसके फलस्वरूप वह व्यक्ति कभी भी अपने अपराध के दण्ड से मुक्त नहीं हो पायेगा। हमने इस प्रथा को समाप्त कर दिया है और यह प्रावधान किया है कि वे सभी धाराएं जिनके आधार पर नजरबन्दी आदेश जारी किया गया हो, एक वर्ष के भीतर

स्वतः ही समाप्त मानी जायेगी। सामान्यतः उन्हें एक वर्ष के भीतर समाप्त नहीं माना जाता है। परन्तु वे हमारी ही सन्तान हैं, इस भूमि की सन्तान हैं और हमें उनके साथ सामंजस्य स्थापित करना ही पड़ेगा। अतएव, उन्हें आजीवन कारावास का दण्ड नहीं दिया जा सकता। हमने इस अधिनियम में यह सुधार किया है। जिसके फलस्वरूप अब वह एक नजरबन्दी क़ानून नहीं है। अपितु, एक सहायक और हितसाधक कानून है। जहां तक हमारे युवा मित्रों का संबंध है, मैं यह समझता हूं कि इस कानून के प्रयोग से उनकी हत्या करना हमें अभिप्रेत नहीं है बल्कि यह उनके हित तथा सुरक्षा में सहायक है।

इसके पश्चात् जहां तक परामर्शदात्री मंडल का संबंध है, हमने कहा है कि उसका पीठासीन अधिकारी एक सेवारत अथवा सेवानिवृत्त न्यायाधीश को ही होना चाहिए। क्या आपके कहने का अभिप्राय यह है कि हममें से एक भी व्यक्ति के हृदय में श्री एन०सी०चटर्जी के प्रति कम आदर है क्योंकि अब वे एक सेवानिवृत्त न्यायाधीश हैं। भला आप लोग सेवानिवृत्त न्यायाधीशों की इस पद पर नियुक्ति के इतने खिलाफ क्यों हैं? उनमें से कुछ लोगों को राज्यपाल के पद की शोभा बढ़ाने का गौरव प्राप्त हुआ है। जहां कहीं भी ऐसा महसूस किया जा रहा है कि और अधिक प्रावधान बनाये जाने चाहिएं, वहां अवश्य ही कुछ और प्रावधान बनाये जाने चाहिएं। परन्तु समग्र रूप से तो हमें धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करनी चाहिए। इसकी भर्त्सना नहीं की जायेगी। मैं भी यह चाहता हूं कि गृह मंत्री सभी मंत्रालयों के पास इस आशय का एक परिपत्र भेजें कि एक न्यायाधीश के हाथों में जो शक्ति सौंपी गई है उसका निरादर नहीं किया जाये और किसी भी ज्यादती के खिलाफ वह न्यायाधीश कड़ी कार्यवाही करेगा। इस अधिनियम में ऐसा कोई प्रावधान किया जाना इतना आसान नहीं है। नकारात्मक रूप में ऐसा प्रावधान तो अधिनियम में पहले से ही विद्यमान है। परन्तु मैं चाहता हूं कि वे ऐसा एक प्रावधान सकारात्मक रूप में भी करें कि जब भी उनके नोटिस में ऐसी कोई बात आये और जब भी मंडल इस बात की आलोचना करे कि किसी अधिकारी ने गैर-जिम्मेदाराना ढंग से कार्य किया है और किसी व्यक्ति को जबरन जेल में ठूंसना चाहा है, तो उसके विरुद्ध कार्यवाही अवश्य की जाये। इससे जनता के मन में विश्वास पैदा होगा। मैं यह तो नहीं कहता कि हमारी सभी कमियों और बुराइयों को निवारक निरोधक अधिनियम दूर करने में सफल होगा। इसके लिये और बहुत से कदम उठाये जाने आवश्यक हैं परन्तु उनमें से यह भी एक है। अतएव, सुविधा-सन्तुलन इसे थोड़े समय के लिये और लागू किये रखने तथा इस बीच इसका सावधानीपूर्वक तथा अति से बचते हुए प्रयोग करने के पक्ष में जाता है। मैं सरकार को अपनी ओर से यह परामर्श देना चाहूंगा। मैं प्रस्ताव पर विचार किये जाने का समर्थन करता हूं।

हिन्दू विधि को संहिताबद्ध करना*

अब तक विधेयक के किसी भी प्रक्रम पर मुझे वाद-विवाद में भाग लेने का सौभाग्य नहीं मिला। श्रीमन् आप पहले के चरणों के समय अनुपस्थित थे, इसलिये मुझे अपने स्थान पर बैठना पड़ा। मैंने अपनी राय को हमेशा अपने तक ही रखा है लेकिन अब समय आ गया है कि मैं इस मामले पर अपने विचार व्यक्त करूं। सबसे पहले मैं सदन में और इस विधेयक को पुरःस्थापित करने वाले माननीय सदस्य से कहना चाहूंगा कि मैं प्राचीन के प्रति मात्र इसलिये समर्पित नहीं हूं कि वह प्राचीन है अथवा किसी भी नयी चीज के विरुद्ध इसलिए नहीं हूं कि वह नयी है। कोई भी चीज पुरानी है, इसी वजह से हमें उससे चिपटे नहीं रहना चाहिए अथवा किसी भी नयी चीज का बहिष्कार केवल इसलिये नहीं कर देना चाहिए कि वह नयी है। बुद्धिमान व्यक्तियों के रूप में यह हमारे ऊपर निर्भर करता है कि हम उस वस्तु के गुण दोष पर विचार करने के बाद जो भी अच्छा है, उसे स्वीकार कर लें और जो खराब है, उसे छोड़ दें। इसलिये मैं निष्पक्ष रूप से यहां कही गई कुछ बातों पर विचार करने का प्रयास करूंगा। मैं पृष्ठभूमि का विश्लेषण नहीं करूंगा और विधेयक के द्वितीय वाचन के समय इस पर बोलूंगा तथापि जो भी सामान्य रूप से संगत बात है, मैं उसी का उल्लेख करूंगा।

सबसे पहले मैं सदन के समक्ष रखे गये कुछ संशोधनों और उनके बारे में विधेयक के पुरःस्थापक द्वारा की गई आपत्तियों का निपटारा करने का प्रयास करूंगा। एक संशोधन में यह कहा गया है कि चूंकि इस विधेयक के दूरगामी परिणाम होंगे इसलिये इसे समर्थकारी उपाय ही माना जाना चाहिए। यह कहा गया है कि किसी भी व्यक्ति को ये घोषणा करने की स्वतंत्रता होनी चाहिए कि इस विधेयक के उपबंधों से, पंजीकरण की तिथि से अथवा इस आशय की घोषणा किये जाने की तारीख से शासित होगा। माननीय विधि मंत्री ने कहा है कि बहुत पहले से ही यानी जब से अंग्रेजों ने इस देश में कानून का काम आरम्भ किया, ऐसा कोई भी पूर्वोदाहरण नहीं है कि किसी पारित होने वाले विधेयक के संबंध में किसी व्यक्ति को उसे अपनी घोषणा द्वारा स्वीकृत अथवा अस्वीकृत करने की छूट दी गयी हो। मुझे शंका है कि उन्हें इस बारे में ठीक तरह से याद है। अब

* हिन्दू कोड बिल पर हुये वाद-विवाद में भाग लेते हुए; संसदीय वाद-विवाद, 7 फरवरी, 1951 खण्ड तीन, 1951, कालम 2515—2531

1920 के कुची मेमन्स अधिनियम, को ही लीजिये। जिन भारतीयों ने धर्म परिवर्तन करके इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया, उन पर भी कई बार हिन्दू लॉ या वह कानून लागू किया गया जो उनके जन्म के समय उन पर लागू होता था। इसलिये कुची मेमन लोगों पर संयुक्त परिवार वाला कानून लागू होता था और अपने लोगों में से गोद भी लेते थे। लेकिन बाद में कुछ सुधारकों ने यह आग्रह किया कि इस्लाम धर्म स्वीकार करने वाले सभी लोगों पर शरीयत यानी इस्लामी कानून ही लागू होना चाहिए। इस्लाम में वसीयत, विवाह, उत्तराधिकार, तलाक आदि के बारे में अपने अलग कानून हैं। इस बारे में हिन्दू धर्म के मानने वालों ने अपने आपको स्मृतिकारों द्वारा बनाये गये कानूनों से जोड़े रखा जबकि इन सभी के बारे में इस्लामी कानून भी था। जिन व्यक्तियों ने धर्म परिवर्तन कर के इस्लाम धर्म कबूल कर लिया, उनके लिये इस अधिनियम में एक समर्थकारी उपबन्ध किया गया जिसके अनुसार कोई भी कुची मेमन जो हिन्दू लॉ अपनाना चाहे, वह सक्षम प्राधिकारी के समक्ष इस आशय की घोषणा करके उसे अपना सकता था। वह या तो यह कह सकता था कि वह हिन्दू लॉ से शासित होगा या फिर उसी कानून से शासित होगा जो उस पर धर्म परिवर्तन से पूर्व लागू होता था।

1923 में यथासंशोधित कुची मेमन्स अधिनियम के अन्तर्गत निम्नलिखित उपबन्ध किये गये हैं:—

> कोई भी व्यक्ति जो विहित प्राधिकारी का समाधान करता है:—
>
> (क) कि वह कुची मेमन है और वह वही व्यक्ति है जो उसने अपने बारे में बताया है,
>
> (ख) कि वह भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 की धारा 11 के अर्थ के अन्तर्गत इकरारनामा लिखने के लिये सक्षम है, तथा
>
> (ग) कि वह ब्रिटिश भारत का वासी है।
>
> निर्धारित प्रपत्र में की गयी तथा विहित प्राधिकारी के समक्ष प्रस्तुत घोषणा द्वारा यह घोषित कर सकता है कि वह इस अधिनियम का लाभ प्राप्त करना चाहता है तथा उसके पश्चात् घोषणाकर्ता और उसके सभी अल्पवयस्क बच्चे तथा उनके वंशज उत्तराधिकार तथा विरासत के मामले में इस्लामी कानून द्वारा शासित होंगे।

अब मेरे माननीय मित्र श्री राजबहादुर का तर्क अपनी ही बात की काट करता है कि इस कानून को सम्पूर्ण भारत के लिये नहीं बनाया था बल्कि ऐसा कानून था जो किसी समुदाय विशेष के हितों के विशेष रक्षोपाय के रूप में बनाया गया था। यह धारा एक समर्थकारी उपबन्ध है। कुची मेमन ही इस देश के एकमात्र मुसलमान नहीं हैं। अधिसंख्या

मुसलमान कुची मेमनों की संख्या से कहीं अधिक है। जब कुल मिलाकर 99.9 प्रतिशत मुसलमान शरीयत का पालन करते हैं तो कुची मेमनों के लिये एक विशेष उपबन्ध क्यों किया जाये? इसलिये मेरे माननीय मित्र द्वारा दिया गया तर्क उनकी अपनी सहायता करने के बजाय दूसरे पक्ष की मदद करता है। यदि ऐसा एक भी उदाहरण है तो वह काफी है। अब क्या आप के लिये यह सम्भव है कि आप मेरे ऊपर बौद्ध धर्म लाद दें या मैं किसी और व्यक्ति पर हिन्दू धर्म थोप दूं। यह उत्तराधिकार, विवाह, विरासत आदि का कानून इन्हीं सिद्धान्तों पर आधारित है। लेकिन यदि कोई व्यक्ति जिस ने धर्म परिवर्तन कर लिया है यह चाहता है कि उस पर वही पुराना कानून लागू होता रहे, जो उसके धर्म-परिवर्तन से पहले लागू होता था तो उसे इस बात की छूट दी गई थी कि वह उसी कानून से शासित हो। यद्यपि उसने धर्म परिवर्तन अपने आप किया, लेकिन उसे नयी कानूनी व्यवस्था के अनुसार अपने आपको ढालने के लिये विवश होना पड़ा। हालांकि उसके लिए इसकी कोई जबरदस्ती नहीं की गयी। लेकिन प्रस्तावित संशोधन के बिना यह निधेयक जबरदस्ती जैसा ही होता जो अन्य विभिन्न व्यक्तियों को भी अपने अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत ले आता। जहां तक हिन्दुओं का संबंध है, यदि आप पारम्परिक कानून से हटकर विवाह करना चाहते हैं तो उसके लिये सिविल मैरिज का कानून है। मूलतः यह कानून उन लोगों पर लागू करने के लिये बनाया गया था जो यह घोषित कर दें कि न तो वे हिन्दू हैं और न ही जैन, ईसाई अथवा पारसी हैं। बाद में इसमें परिवर्तन किया गया। इससे पहले सिविल विवाह अधिनियम के अन्तर्गत कोई भी दो ईसाई तब तक विवाह नहीं कर सकते थे जब तक कि वे अपने धर्म को नकार न दें। लेकिन हम हमेशा प्रगतिशील रहे हैं। हम आत्म प्रतिषेध करने वाले हैं। हम स्वयं के विनाश की सीमा तक जाकर भी सबको अपने में समाने वाले हैं। हमने यह कहकर इस अधिनियम में संशोधन किया है कि हिन्दुओं को अपना धर्म नकारने की आवश्यकता नहीं है। हिन्दू चाहे वे विवाहित भी हों, सिविल विवाह कानून अपना सकते हैं। हमने यही किया है। अब और क्या आवश्यक है? अब आप यह चाहते हैं कि जो व्यक्ति प्राचीन कानून का पालन करते हैं, उन्हें बन्दूक की नोक पर धर्म परिवर्तन कराकर आप अपनी विचारधारा के मार्ग पर ले आयें। आप मुझसे मेरा धर्म क्यों परिवर्तन कराना चाहते हैं? मैंने पहले ही एक ऐसा उदाहरण दिया है जबकि कुची मेमनों के लिये एक विशेष कानून बनाया गया हालांकि उनकी संख्या बहुत ही थोड़ी है चूंकि डा० अम्बेडकर यह अनुभव करते हैं कि हम में से अधिकतर लोग यदि हल्के से हल्का शब्द भी प्रयोग किया जाये तो पुरातन पंथी ही हैं। इसीलिये वे यह विधेयक लाये हैं। मेरे लिए यह कहना गलत नहीं होगा कि उन्हें साठ वर्ष की इस आयु में भी यह जानना मुश्किल है कि वे किस धर्म से सम्बन्धित हैं। लेकिन वे मुझसे एक ही रात में यह तय करने के लिए कह रहे हैं कि मैं बदल जाऊं। यदि मैं यह कहूं तो मुझे गलत न समझा जाये कि मैं अपने समाज का

उतना ही उपयोगी व योग्य सदस्य हूं जितना कि अन्य सदस्य होने का दावा करते हैं। मैं अपने धर्म से शर्मिन्दा नहीं हूं।

मैं इस देश के नर नारियों से ही नहीं अपितु सारे विश्व से यह कहता हूं कि हमें उन विश्वासों पर गर्व है जिनके अनुसार हमारा कार्य व्यापार चलता है तथा हमें अपने पूर्वजों द्वारा दिये गये कानून पर गर्व है। यदि विश्व के अन्य राष्ट्र हमारे धर्म तथा उसमें प्रतिपादित सिद्धांतों का पालन करें तो यह निरन्तर चलने वाले युद्ध न हों और सब जगह शान्ति ही शान्ति हो। हमारी यह आदत बन गई है कि जो चीज विदेशों से गायब हो जाती है, उसको हम अपने यहां अपना लेते हैं। जो मोटरगाड़ी यूरोप में त्याग दी गई है, वह यहां आदर्श मोटरगाड़ी बन जाती है। कोई संस्था जो पश्चिम देशों में त्याग दी जाती है, हमारे यहां एक आदर्श बन जाती है।

1937 में हमने इस सभा में यह कानून पास किया था कि धर्म परिवर्तन कर इस्लाम धर्म स्वीकार करने वालों के मामले में जहां तक गोद लेने आदि का संबंध है, हिन्दू कानून के अनुसार उनका प्रथागत कानून चलेगा। इसी प्रकार दक्षिण में मलाबार के मोपलाहों ने हिन्दुओं के कुछ रिवाज अपना लिये जबकि वे हैं मुसलमान। उनके मामले में यह कोई चीज अपनाने की श्रेणी में नहीं आता। वे तो इन रिवाजों के साथ पैदा हुए थे। इसलिए जहां तक उनकी विरासत तथा उत्तराधिकार का संबंध है, उन्होंने एक नियम का पालन किया और जहां तक उनके धर्म और विश्वास का सवाल है, उन्होंने दूसरे नियम का पालन किया। 1937 में हमने शरीयत कानून नामक कानून पारित किया। इसका स्वरूप अखिल भारतीय है तथा यह सारे मुसलमानों के लिये है। शरीयत अधिनियम की धारा 3 में कहा गया है:

---

(1) यदि कोई व्यक्ति इस संबंध में विहित प्राधिकारी को संतोष दिला देता है—(क) कि वह मुसलमान है, (ख) कि भारतीय संविदा अधिनियम (1872 का नौ) की धारा 11 के अर्थों में वह संविदा करने के लिए सक्षम है, (ग) कि वह ब्रिटिश भारत का निवासी है—जो हो सकता है कि वह विहित प्राधिकारी के समक्ष निर्धारित प्रपत्र में दायर घोषणा के आधार पर हो और यह घोषणा करता है कि वह इस अधिनियम के लाभ प्राप्त करना चाहता है और उसके पश्चात् घोषणाकर्ता तथा उसके समस्त अवयस्क बच्चों और उनकी संतति पर धारा 2 के उपबंध उसी प्रकार लागू होंगे मानों उसमें दिये गये विषयों के अतिरिक्त गोद लेने, वसीयत तथा विरासत में प्राप्त संपत्ति का भी उसमें उल्लेख हो।

अतः मेरे सम्मानीय मित्र, श्री जसपत राय के संशोधन में ऐसा कुछ भी नहीं है जो नया हो। इस कानून को स्वीकार करते समय सावधानी बरते जाने की आवश्यकता है। इस समुदाय के अधिकांश लोग इसको नहीं चाहते;इतना ही नहीं वे अपना काम खुद ही देख सकते हैं। विशेषकर मेरे माननीय मित्र के नेतृत्व में क्या इस सदन को बाहर लोगों को यह बताने तथा सलाह देने का अधिकार है कि जिसका भी वह पालन कर रहे हैं, वह गलत है और उनको अपना तरीका बदलना चाहिये। मेरा तर्क इस बात पर आधारित नहीं है कि संसद् को ऐसा करने का अधिकार नहीं है, हां, मेरी अपनी राय यह है कि यह संसद् उस तरह से कानून नहीं बना सकती जिस तरह कि वह ब्रिटिश शासन में करती रही है। अब हमें लिखित संविधान के अनुसार चलना पड़ता है। मेरी निजी धारणा यह है कि व्यक्ति के व्यक्तिगत मामलों और जहां तक उसके दाम्पत्य संबंधों का सवाल है, उनके संबंध में लागू होने वाली प्रथा ऐसे विषय हैं जो उसके मूलभूत अधिकारों से शासित होते हैं और उनके संबंध में किसी को दखलंदाजी नहीं करनी चाहिये। जब तक विवाह के संबंध में मेरे द्वारा पालन की जाने वाली प्रथा तथा अपनाई जाने वाली प्रक्रिया सार्वजनिक नैतिकता के विरुद्ध नहीं है तथा वर्जित अथवा अभद्र नहीं है, तो यह मेरा निजी मामला है किसी को भी इसमें हस्तक्षेप का कोई अधिकार नहीं है। अतः हमें इस मामले में सोच विचार कर आगे कार्यवाही करनी चाहिये।

जहां तक प्रगतिशील तत्वों का संबंध है, हमने अभी कई कानून बनाये हैं। हमने हिन्दू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम बनाये हैं। मेरे माननीय मित्र ने बाल विवाह निषेध अधिनियम का उल्लेख किया । यह सही है कि इससे इस प्रकार के बाल विवाहों में कमी आई है। लेकिन इससे विवाहों में भी कमी आई है। हर जगह एक नई समस्या पैदा हुई है और आज अविवाहित लड़कियां एक कौम हो गई है। यदि फौज में नर्सों अथवा डाक्टरों के रूप में आप लड़कियों को भरती करना चाहें तो आपको बहुत सी लड़कियां मिल जायेंगी। इस तरह आपने यह एक नई समस्या खड़ी कर दी है। क्या पहले भी कभी आपको ऐसा सुनने में आया? पंडित ठाकुरदास भार्गव सहित हमारे मित्रों ने आवाज उठाई कि बाल विवाह के कारण लड़कियां विधवा हो गई हैं। लेकिन क्या इस बात की कोई गारंटी है। यदि आदमी पन्द्रह वर्ष की लड़की से विवाह कर ले तो वह जीवित रहे। मैं नहीं समझता कि भगवान ने ऐसी कोई व्यवस्था कर रखी है कि यदि कोई व्यक्ति 15 साल की लड़की से विवाह करेगा तो वह दीर्घायु होगा और यदि कोई अपनी पन्द्रह वर्ष से कम आयु की लड़की से शादी करता है, तो उसकी मृत्यु कम उम्र में हो जायेगी। अतः कोई भी इस मामले में गारंटी नहीं ले सकता। यह तो सुविधा का सवाल है।

हमने मानव के अलावा कहीं विवाह की बात नहीं सुनी। जानवरों में शादी नहीं होती और न ही उनमें तलाक का कोई विधान है। उनका कोई पारिवारिक जीवन नहीं होता।

केवल मानव के संबंध में ही असुविधा से बचने की दृष्टि से पुरूषार्थ के रूप में विवाह की संस्था की व्यवस्था की गई है। जैसाकि महर्षि ने कहा है, चार पुरूषार्थ में से तीन अर्थात् मोक्ष, धर्म समाज को कायम रखना तथा अर्थ, राजनीति अथवा अर्थशास्त्र सुखी पारिवारिक जीवन पर निर्भर करते हैं। हमारे पूर्वजों ने भी इसी पर बल दिया है। लेकिन पाश्चात्य समाज में व्यक्तिवाद पर बल दिया जाता रहा है। यहां परिवार समाज की एक इकाई है। मेरे कहने का अर्थ यह नहीं है कि कोई भी मानव संस्था इतनी पूर्ण है कि उसमें कोई सुविधा होती ही नहीं है। जहां तक हमारे विवाह कानूनों का संबंध है । कोई भी महिला अविवाहित नहीं रहती जब तक कि वह सन्यासिनी बनने का निश्चय ही नहीं कर ले। संस्कृत के एक श्लोक में कहा गया है कि किसी भी महिला को स्वतंत्र रहने का हक नहीं है किन्तु इसे गलत समझा गया है। आखिर कोई महिला जन्म से ही 25 वर्ष की तो नहीं होती। यह मां के गर्भ से ही पैदा होती है। वयस्क बनती है विवाह करती है और वृद्धा होती है। महिला और पुरूष, दोनों ही जब तक वयस्क नहीं होते उन्हें किसी अन्य व्यक्ति के मार्गदर्शन की, संरक्षण की आवश्यकता होती है। जब तक कोई लड़की अवयस्क रहती है, उसका पिता उसका भरण पोषण करता है। उसके वृद्धा होने पर उसका ध्यान रखने के लिए क्या उसके पुत्र से बेहतर कोई और व्यक्ति हो सकता है? इसलिए पुरूष और स्त्री दोनों ही क्रमशः जीवन के प्रभात और संध्या में क्रमशः पिता या पुत्र पर निर्भर करते हैं। अब एकमात्र प्रश्न रह जाता है पति-आश्रय के दौरान बीतने वाला समय यदि ईश्वर ने पुरुष और स्त्री दोनों को पैदा किया है, या तो स्त्री पुरुष के पास जाकर रहेगी अथवा पुरूष स्त्री के पास जाकर रहने लगेगा। एक खुशहाल दाम्पत्य में उपरोक्त स्थिति अनिवार्य है। क्या कोई बीच का रास्ता भी है? इसलिए या तो पुरूष की आवाज घर में गालिब रहती है या स्त्री की। मान लीजिए मतभेद है। यदि पुरूष का वर्चस्व है तो कोई कठिनाई नहीं है। या फिर पुरूष अपने को गौण बना ले। उस स्थिति में भी कोई कठिनाई नहीं होती। लेकिन स्त्री और पुरूष में यह मतभेद हो सकता है कि लड़की किसे दी जाए और शादी कब की जाए? मैं केवल भावी असुविधाओं का जिक्र कर रहा हूं। ऐसा तो है नहीं कि पुरूष पुत्र पैदा करते है और स्त्रियां पुत्रियां ही पैदा करती हैं। मैं पूरी गंभीरता से यह बात सदन में रख रहा हूं। मैं सदन के समक्ष निवेदन यह करना चाहता हूं कि कुछ लोगों ने इसे मात्र इसलिए गलत समझ लिया है कि हमारी कुछ बहनें अपने हिस्से और दुःखों की बात करती फिर रही हैं। ऐसा शायद वे कुछ तो अनुभवों के आधार पर कर रही हैं और कुछ हमारे मित्रों द्वारा जो यहां उदासीनता दिखाई गई है। उसके कारण ऐसा कर रही हैं क्योंकि वे यह मानकर चलते प्रतीत होते हैं कि यह एक महिला-संहिता है। यह तो कुछ ऐसा है जैसे पति और पत्नी इस बात पर लड़ रहे हों कि यह बच्चा किसका

है ? ऐसा नहीं है कि यदि एक का है तो दूसरे का नहीं हो सकता। अतः यदि संहिता बनती है तो इससे देश के स्त्री-पुरुष दोनों ही संबद्ध होंगे। अतः हमें इस पर निःसंग भाव से विचार करना चाहिए।

हम तीन हजार वर्षों से एक संस्था विशेष में पले-बढ़े हैं। मैं अब अनेक ऐसे विधि विशेषज्ञों को उद्धृत करूंगा जो पश्चिम से आए और यहां की संस्थाओं के प्रति आकर्षित हुए। कुछ ने तो यहां धर्म परिवर्तन कर लिया और मैक्समूलर ने तो यहां एक आश्रम की स्थापना भी की। आप उनके विचारों से परिचित हैं। उन्होंने अपने देश की संस्थाओं से इनकी तुलना की है। वे धर्म परिवर्तन करना चाहते थे किन्तु उनकी सामाजिक आदतें और रीति-रिवाज उनके आड़े आए। जैसे वे हमारी संस्थाओं के प्रति आकर्षित हुए थे वैसे ही अब हम उनके तौर-तरीकों के प्रति आकर्षित हो रहे हैं।

आइए, देखें कि यह हमारे लिए उपयोगी है या नहीं। देखें कि हिन्दू विधियों संबंधी समिति के सदस्य ने क्या कहा। श्री राव ने स्वयं कहा कि यह समवर्ती विषय है और इसलिए प्रांतों को इस बात की आजादी दी जानी चाहिए कि वे यह देखें कि किसी समुदाय पर ये प्रावधान लागू होंगे अथवा नहीं, किस क्षेत्र में इन्हें लागू किया जाए, इन्हें अभी लागू किया जाए या स्थगित किया जाए। ये सारी बातें ऐसी हैं जिन पर किसी भी सुधारक को, जिसमें विधेयक के प्रस्तुतकर्ता भी शामिल हैं, ध्यान देना चाहिए ताकि किसी आदमी के दिमाग में यह बात न आए कि उनकी भावना या धार्मिक विश्वास आदि की उपेक्षा की गई है। हमें लोगों को धीरे-धीरे साथ लेना होगा। ऐसा नहीं कि हम हिन्दू धर्म के विरुद्ध कोई युद्ध छेड़ रहे हैं। यह कोई ऐसा तात्कालिक प्रश्न नहीं है कि हमें चीन को आक्रामक घोषित करने में इसी वक्त यह निर्णय करना है कि हमें अमरीका के साथ आवाज मिलाकर चलना है अथवा नहीं। हो सकता है कुछ लोगों को थोड़ी बहुत असुविधा हो। महोदय मैं आपके माध्यम से सदन से पूछना चाहता हूं कि यह देखा जाए कि सुविधा किस बात में है। ऐसा नहीं कि कोई मानव संस्था पूर्ण है। विस्तार में न जाते हुए विवाह के प्रश्न पर मैं कहना चाहता हूं कि यह सिद्ध सत्य है कि शारदा अधिनियम के अस्तित्व में आने से पहले हमारी महिलाओं में से अधिकांश 99 प्रतिशत विवाहित थीं। क्या आप यह कहना चाहते हैं कि महिलाएं अविवाहित रह जाएं। पुरूष अविवाहित रह जाएं और ऐसे बच्चे पैदा होते रहें जिनके माता-पिता न हों, जिनकी देखभाल और लोग करें, जैसे कि युद्ध के फलस्वरूप 40 हजार बच्चों के साथ हुआ था? क्या हमारे देश में ऐसी स्थिति लाकर आप अच्छा करेंगे? आप एक नई समस्या खड़ी कर देंगे। क्या यह सही होगा? अब तक या तो पुरूष को स्त्री का कहा मानना पड़ता रहा है या फिर स्त्री ने पुरूष की आज्ञा शिरोधार्य की है। अन्यथा कहां का घर और कहां की गृहस्थी? इसीलिए महिलाएं कानून के अधीन नहीं हैं। आधुनिक नारी, जिसे विदेशी प्रणाली से

शिक्षा मिली है, जिसने अपने धर्म और विश्वास से नाता तोड़ लिया है, चाहती है कि उसे अपने पिता की , न कि पति की सम्पत्ति विरासत में मिले। वह अलग है। वह धन अपने पास चाहती है और यह महसूस करना चाहती है कि वह किसी पुरूष के अधीन क्यों रहे? हर घर की कठिनाई मैं जानता हूं। लेकिन यदि मैं यह सब बातें कह रहा हूं तो अपने अनुभव के आधार पर कह रहा हूं। अब लड़कियां विवाह करने से इंकार कर देती हैं क्योंकि वे यह अनुभव करती हैं कि "मैं क्यों स्वयं को किसी पुरुष के अधीन करूं? मुझे भी सम्पत्ति का एक भाग दीजिए। क्या मेरी बेटी मुझसे हमेशा साथ रहने की आशा कर सकती है।" केवल धन-दौलत से ही सुख नहीं मिलता है। मान लीजिए कोई धनी व्यक्ति है और उसकी पुत्री उसकी सम्पत्ति की उत्तराधिकारी है। जब लड़की का विवाह हो जाता है तो क्या यह दूसरे व्यक्ति को उसके साथ दुर्व्यवहार करने और उसे पीटने से रोक सकती है? ऐसा करने से कौन उसे रोक सकता है। बहुत से व्यक्ति इस हिन्दू कोड के समर्थन में बोलते हैं। मैं संसद सदस्यों का उल्लेख नहीं कर रहा हूं—वे हर बात से अवगत हैं। मैं केवल यह बात बता रहा हूं कि बाहर बहुत से लोग क्या कह रहे हैं। आज हिंदू विधि के अंतर्गत लड़की पूर्णतः वंचित नहीं है। यदि कोई व्यक्ति निःसंतान मर जाता है तो उसकी विधवा सारी सम्पत्ति की उत्तराधिकारी होती है। देशमुख अधिनियम के अलावा, प्राचीन हिन्दू विधि के अंतर्गत वह विधवा उन मामलों में, जहां कोई संतान नहीं है, पति की समूची सम्पत्ति की उत्तराधिकारी होती है। दूसरे यदि कोई पुत्री है और मां की उसके पिता से पहले मृत्यु हो जाती है और पुत्री के अलावा कोई दूसरी संतान नहीं है तो वह पुत्री समस्त सम्पत्ति की उत्तराधिकारी हो जाती है। इसमें कोई कठिनाई नहीं है। यहां हम यह कहना चाहते हैं कि लड़के के साथ-साथ लड़की का हिस्सा भी अवश्य होना चाहिए। घरबार को बनाये रखने की जिम्मेदारी लड़के की होती है। हम कोई करोड़पति नहीं हैं। जमींदार भी समाप्त हो चुके हैं। राजा भी नहीं रहे। अब केवल मध्यम वर्ग के लोग हैं। मैं केवल उन लोगों के लिए ही यह बात कह रहा हूं। ऐसे भी अत्यंत गरीब लोग हैं, जहां पति और पत्नी दोनों ही कुली के रूप में कार्य करके बड़ी मुश्किल से जीवन निर्वाह कर रहे हैं। मध्यम वर्ग के अधिकांश लोगों के साथ क्या होता है? पति 100 या 200 रुपये प्रतिमाह पर क्लर्क के रूप में कार्य कर रहा होता है। वह अपने लड़के को शिक्षित बनाता है और यह आशा करता है कि जब वह लड़का 21 या 25 वर्ष का होगा तो उस समय वह (लड़का) परिवार की जिम्मेदारियों को संभाल लेगा जब वह स्वयं पचास या पचपन वर्ष का होगा। जब वह सेवानिवृत्त होता है तो अनेक बच्चे ऐसे होते हैं जिनकी देखरेख करनी होती है। उसने जो सम्पत्ति इक्ट्ठी की है वह अत्यंत कम होती है। मैं जानता हूं कि देश के मेरे क्षेत्र में ऐसे व्यक्ति जिनके पास पांच एकड़ से अधिक की भूमि है, भू-स्वामित्व वाले कुल व्यक्तियों का केवल दस या पांच प्रतिशत

है। हमारे देश में भूमि को सम्पत्ति माना जाता है। बम्बई और अहमदाबाद में कुछ-कुछ उद्योगपति हो सकते हैं। लेकिन आमतौर पर लोगों के पास न तो उद्योग हैं और न भूमि ही है। मध्यम वर्ग के लोगों के लिए केवल एक ही उद्योग है और वह है बाबू (क्लर्क) बन जाना और कुछ धन कमाना और मेहनत करके वह धन कमाता है। परिवार की देखभाल की जिम्मेदारी उस लड़के पर डाल दी जाती है। उसे विरासत में मिलती है थोड़ी सी भूमि और खपरैल का एक मकान समाज उससे अपेक्षा करता है कि अपने छोटे भाई बहिनों की जिम्मेदारी ले और अपने वृद्ध मां-बाप की देखभाल भी करे। जब हमारे यहां ब्रिटिश शासन था उस समय रेल विभाग के अधिकारियों, स्टेशन मास्टरों तथा अन्य अधिकारियों को घूमने-घामने के लिए वर्ष में एक बार पास मिला करते थे। वह यात्रा पास परिवार के लिए होता है। यह देखकर मुझे दुःख होता है कि परिवार के ब्यौरे के संबंध में वही प्रथा अभी भी चली-आ रही है अर्थात् कि परिवार का तात्पर्य है स्वयं वह अधिकारी, उसकी पत्नी और बच्चे। उसके वृद्ध माता-पिता के बारे में क्या है? यह बात पश्चिम की प्रणाली के अनुकूल हो सकती है जहां विवाह होने के तुरंत बाद लड़का मां-बाप से अलग हो जाता है। उसके वृद्ध मां-बाप को एक दूसरे की ओर ताकते रहना पड़ता है। क्या हम अपने देश में वैसा ही पशुवत जीवन चाहते हैं? पश्चिम के साथ मेरा कोई झगड़ा नहीं है। यह दुर्भाग्य की बात है कि उनका व्यक्तिवाद फल-फूल रहा है। पति और पत्नी एक इकाई हैं और उनके वृद्ध मां-बाप को संरक्षण देना चाहिए। हमारे पूर्वजों ने बहुत वर्ष पूर्व हमारी संयुक्त परिवार प्रणाली की शुरुआत की थी और वह स्वाभाविक इकाई है और उसमें माता-पिता, पुत्र और पौत्र सभी साथ-साथ रहते हैं। मैं कहना चाहूंगा कि यह एक सुखी इकाई है जिसमें बेरोजगारी कभी नहीं रही। समाजवाद और साम्यवाद की बात करने वाले लोग इस बारे में शाब्दिक सहानुभूति व्यक्त करते हैं और मैं कहता हूं कि यही प्रवृति समाजवाद का अंकुर है। एक परिवार विशेष में पति एक ओर तो अपने बच्चों के पालन-पोषण के लिए कार्य करता है तो दूसरी ओर वृद्ध लोगों की देखभाल के लिए कार्य करता है।

मद्रास में इस विवाह विच्छेद विधि के पारित होने के पश्चात् 38 प्रार्थना पत्र प्रस्तुत किए गये थे। केवल लड़के ही विवाह कर सकते हैं और कोई लड़की किसी लड़के से विवाह नहीं कर सकती। विवाह-विच्छेद हेतु प्रस्तुत किए गये इन 38 प्रार्थना पत्रों में 30 प्रार्थना पत्र केवल पतियों द्वारा दायर किये गये थे.....

इनमें से अधिकांश लोग मध्यम वर्ग के थे। अधिकांश व्यक्ति दुर्भाग्य से पश्चिमी तौर तरीकों से शिक्षा प्राप्त किये हुए थे। जैसाकि मैंने कहा इनमें अधिकांश याचिकायें पतियों द्वारा दी गई थीं। मैं समझता हूं इनमें एक मामला ऐसा था जिसमें स्त्री को बांझ बताया गया था। उस बात को मैं इस कोड के अंतर्गत लाना चाहूंगा। दूसरा मामला एक शिक्षित

वकील पति का था जो बम्बई में नौकरी कर रहा है। उसे वेतन के रूप में 100 रुपये मिलते हैं। लड़की किसी दूसरी जगह डाक्टर के रूप में कार्य कर रही है और 400 रुपये मिल रहे हैं। लड़की पति को चाहती है और पति लड़की को चाहता है। केवल बात यह थी कि लड़की चाहती थी कि पति आकर उसके पास रहे और पति चाहता था कि पत्नी आकर उसके पास रहे। विवाह के तीन साल बाद तक पति और पत्नी में यह झगड़ा चलता रहा। पति ने कहाः "कब तक मैं उसके बिना अकेला रहूंगा" और अदालत को पता चला कि यह लड़की द्वारा परित्याग का मामला है इसलिए उन्होंने विवाह विच्छेद कर दिया। मैं यहां उपस्थित अपनी सभी बहनों से तथा अन्य बहनों से पूछना चाहता हूं कि विधवा के पुर्नविवाह के समय, उसकी पति की मृत्यु के बाद क्या कोई जानता है कि उस स्त्री को पुर्नविवाह से पहले किसी पुरुष ने उसे स्पर्श भी किया था। इसके बावजूद भी विधवा पुर्नविवाह अधिनियम काफी पहले पास हुआ है। लेकिन अभी भी इस दिशा में काफी प्रयास किए जाने की आवश्यकता है।

एसेम्बली के एक माननीय सदस्य—वह बंगाल के सदस्य थे, ने एक खण्ड वाला विधेयक पेश किया था जिसमें कहा गया था कि किसी भी विधुर को अधेड़ अविवाहित स्त्री से विवाह नहीं करना चाहिए। वह चाहते थे कि एक विधुर तो कम से कम विधवा से विवाह करे लेकिन जब हमारे कुछ मित्रों ने उनका मजाक उड़ाया तो उन्होंने विधेयक वापिस ले लिया और उन्होंने कहा कि उनसे गल्ती हो गई। जब एक बार आदमी को पता चल जाए कि अमुक स्त्री का तलाक हो गया है तो क्या वह आदमी उसे पत्नी के रूप में स्वीकार करने के लिए तैयार होगा। मैं नहीं चाहता कि कुछ व्यक्तियों की सुविधा की खातिर समाज को भंग किया जाए। इसमें कुछ कठिनाइयां हैं लेकिन दूसरी कठिनाई इस कठिनाई से कहीं अधिक भयंकर है।

सुबह मुझे बताया गया कि पाकिस्तान से एक शिष्टमंडल भगाई हुई औरतों को वापिस ले जाने के उद्देश्य से यहां आ रहा है। क्या आपने कभी भगाए हुए व्यक्ति के बारे में सुना है। प्रकृति ने हमें ऐसा बनाया है कि बिना पति पत्नी के इस विश्व में एकता संभव नहीं है। पैंटागोनियन्स में पत्नी भी पति जितनी लम्बी होती है लेकिन अन्य समुदायों में पति पत्नी से लम्बा होता है। अगर आदमी, औरत के समान बारीक आवाज में बोले और औरत मर्दाना आवाज़ में बात करे तो क्या अच्छा लगेगा। इसलिए पुरुष को पुरुष की भांति और महिला को महिला की भांति रहना चाहिए। मेरे कुछ माननीय मित्र हंस रहे हैं पर भगवान ने बहुत सही व्यवस्था की है कि एक खुशहाल परिवार में माता-पिता और अवयस्क बच्चों की सुरक्षा निहित है। पैसे से प्यार नहीं मिल सकता। प्यार दुलार की भावना एक आंतरिक भावना है। हममें से अधिकांश लोग गरीब हैं हम विवाह करते हैं और पुत्र की प्राप्ति के बाद हम यह सोचते हैं कि अब वह हमारे बुढ़ापे का सहारा बनेगा

और हमारी वृद्धावस्था में वह घर बार संभालेगा। हमने अपने माता-पिता के प्रति यह जिम्मेदारी निभाई है और अब वह हमारी जिम्मेदारी उठाएगा। पुराना कानून पिछले 3000 सालों से प्रचलित किसी अन्य कानून की तुलना में कहीं अधिक प्रभावी है।

संसद सदस्य निर्वाचित होने पर आप मुझे तब तक यहां बैठने की अनुमति नहीं देंगे जब तक मैं निष्ठा की शपथ ग्रहण नहीं करता, लेकिन जहां तक विवाह का संबंध है मैं आप सबसे पूछता हूं कि क्या पुराने रीति-रिवाजों को हटा सकते हैं जैसेकि पत्नी का हाथ पकड़ कर पुआल पर उसके पांव रखकर यह कहना हमारे हृदयों का अब गंगा-जमुना की भांति मिलन हो गया है। यह कोई नीरस मामला नहीं है। क्या वैवाहिक सुख के लिए पुरुष स्त्री विवाह करते हैं? हमारे प्राचीन धर्मग्रंथों में विवाह पर इसलिए जोर दिया गया है कि वह एक स्थाई संबंध बने और अच्छी सन्तान उत्पन्न हो। ताकि लोग अन्धे, लंगड़े-लूले, गूंगे बच्चे समाज पर बोझ बनाकर न छोड़ दें। हम जब रेस के घोड़ों की बात करते हैं तो उनके नस्ल का भी ध्यान रखते हैं। मानवता की खातिर कोई आदमी किसी औरत से विवाह कर सकता है और फिर यह अपेक्षा कर सकता है कि बच्चे सर्वगुण संपन्न होंगे। वंश परिवार को देखे बिना बेमेल विवाह करना हास्यास्पद होगा।

हिन्दू विधि के एक योग्य व्याख्याकार, जायसवाल ने कहा है कि पुराने लोग बहुत से पशु रखते थे ताकि अच्छी नस्ल आगे चलती रहे। यही हमारे समाज की एक अच्छी प्रथा है। हिटलर भी अपने देश में अच्छी सन्तति चाहता था। मुसोलिनी ने भी अपने देश में कई विवाह करवाए थे। शास्त्रों में कहा गया है "अपुत्रस्य गतिर्नास्ति" "पुत्राम नरकात् यस्मात् त्रायते पितृम सुतः", "अर्थात् पुत्र पिता को पुत्राम नरक से बचाता है। इसी पितृम मान्यता के कारण हमारे यहां बहुत बच्चे पैदा हुए। वरना हमें हर माता को बच्चे पैदा करने के लिए आकर्षक धनराशि देनी पड़ती। क्या हमें इस संस्कृति का उपहास उड़ाना चाहिए। मुझे ऐसा इसलिए कहना पड़ा कि यह दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है कि राव समिति के अध्यक्ष, जोकि एक सज्जन व्यक्ति हैं उन्होंने हिन्दू विधि के अनुसार विवाह नहीं किया। प्रवर समिति के कई सदस्यों ने हिन्दू विधि के अनुसार विवाह नहीं किया और कुछ अविवाहित भी हैं जिन्होंने विवाह किया ही नहीं।

* * * *

बाहर यह नहीं कहा जाना चाहिए कि यह एक गुणात्मक राय है, यह केवल निजी राय का प्रश्न है। मैं इससे काफी दुखी हूं। जब यह कहा जाता है कि स्मृतिकर्ताओं का स्मृतियों में परिवर्तन करने का कोई काम नहीं है तो क्या मैं झुक जाऊं? इसके अलावा हम क्या कर रहे हैं? हम सुबह एक कानून पारित करते हैं, दोपहर के बाद उसमें संशोधन कर देते हैं। स्मृतिकर्ताओं ने स्मृतियों में परिवर्तित परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन करने की बात

कही थी। उन्हें पुरान पंथियों की संज्ञा दी जाती है। यदि उनमें परिवर्तन आया है तो उसके लिये भी उनकी भर्त्सना की जाती है। स्मृतियों की इतनी अधिक संख्या क्यों है? प्रत्येक स्मृति किसी न किसी विशिष्ट विधि की शाखा है। मेरा कहना यह है कि इतने महत्वपूर्ण परिवर्तन के लिए अपेक्षित सम्मान नहीं दिया जा रहा है। हम इस प्रश्न पर एक अन्य दृष्टिकोण से विचार कर रहे हैं। मेरा निवेदन है कि इस कानून से हिन्दू समाज का व्यापक विघटन हो गया है। आप कहते हैं कि कोई व्यक्ति कहे कि वह हिन्दू धर्म से संबद्ध नहीं है। "हिन्दू धर्म को मानने वाले" शब्द भी खतरनाक हैं। आप स्वयं को हिन्दू क्यों कहते हैं हिन्दू धर्म में क्या है? कुछ चीजें हैं, कर्म सिद्धांत में तो बुद्ध और जैन धर्म वाले भी विश्वास रखते हैं। मेरे लिये ही वेदों का महत्व नहीं। मैं वेदों को पुरातन प्रेरक ग्रंथ मानता हूं। क्या मुसलमान वेदों के अस्तित्व को स्वीकार नहीं करते? सुधारवादी धर्म से संबद्ध सिख भी ग्रन्थ साहब की पूजा करते हैं। मैं अपने वेदों और हिन्दू होने के लिए लज्जित क्यों होऊं? चाहे मैं ब्रह्म समाजी हूं या आर्य समाजी या वैश्णव, यदि मेरी वेदों में आस्था नहीं है तो मैं हिन्दू नहीं हूं।

दुर्भाग्य से इस देश में धर्म का राजनीति में प्रवेश हो गया है। यह कहा गया है कि जाति-पाति और धर्मों की दलदल के कारण अनेक मुसलमानों ने धर्म परिवर्तन कर लिया। मैं यह पूछता हूं कि क्या चीन में एक ही बुद्ध धर्म नहीं था, क्या इंडोनेशिया में एक धर्म नहीं था? आज इंडोनेशिया में बुद्ध धर्म की स्थिति क्या है? आज मलाया में बुद्ध धर्म कहां है? क्या चीन में कुछ लोगों ने इस्लाम धर्म नहीं अपनाया? जब भी कठिनाई पैदा हुई है आप हिन्दू धर्म पर प्रहार करते हैं और कहते हैं कि सभी बातों के लिए यह पुरातन पद्धति ही जिम्मेदार है। मैं कहता हूं कि इसका इलाज कहीं और है। हिन्दू विवाह पद्धति अपनी हानियों जैसे कि विवाह-विच्छेद की अनुमति न होना, संपत्ति के विभाजन में पुत्रियों का हिस्सा न होना तथा पुत्रियों का परिवार के प्रति दायित्व न होना आदि के अतिरिक्त, लोगों के लिए शक्ति का स्रोत रही है। मैं आपसे एक सीधा सा प्रश्न पूछता हूं। यदि पुत्री का विवाह हो जाता है तो क्या मुझे आप बेटे के साथ रहने के लिए कहेंगे अथवा दामाद के साथ? कहा जाता है कि "जमाता दसमो ग्रहा", दामाद दसवां ग्रह होता है। मेरी वृद्ध अवस्था में मेरी देखभाल करने वाला कोई होना चाहिए। जमाता के स्थान पर पुत्र के पास क्यों न रहा जाए? यदि आप पुत्री को संपत्ति में हिस्सा देते हैं तो क्या होता है? यह सही है कि वह कहेगी, "आईये और मेरे पास रहिये" किन्तु मेरा भाग्य सम्राट लियर की तरह होगा। मैं सभी माताओं और बहनों से यह अपील करता हूं कि वह इस स्थिति पर गंभीरता से विचार करें। उन्हें यह नहीं सोचना चाहिए की मैंने घर में अपनी पत्नी से इसके बारे में विचार-विमर्श नहीं किया है। इस पर हम दोनों ने लंबे समय तक विचार-विमर्श किया है।

इन परिस्थितियों में मैं यह कहना चाहता हूं कि हमें इस दिशा में धीरे-धीरे बढ़ना चाहिए। जिसकी विचारधारा उदार है उसे उदार रहने दीजिये और अपने ही तरह का जीवन जीने दीजिये। संयोगवश मैं यह भी कहता हूं कि सती प्रथा नैतिकता के विरुद्ध है और उसे समाप्त करना सही ही था। आप यह क्यों नहीं कहते कि एक भाई अपने बहन से शादी कर ले? वह भी एक समर्थक उपबंध होगा। हम एक सीमा तक ही जा सकते हैं। उससे आगे नहीं। हमें अनाचार की अनुमति नहीं देनी चाहिए। प्रश्न यह है कि क्या विवाह तीन अथवा सात गोत्र के भीतर होना चाहिए? मैंने उत्पत्ति विज्ञान के संबंध में कुछ पुस्तकों का अध्ययन किया है। नई-नई बातों का पता लगाया जा रहा है। वे कहते हैं कि रक्त तीन प्रकार का होता है और इसका एक दूसरे के साथ कोई संबंध नहीं होता है। मैंने ज्योतिष शास्त्र का भी अध्ययन किया है उसमें कहा जाता है कि विवाह से पहले रज्जू, सर्प तथा गण मिलाने चाहिएं। इन गणों का पता पश्चिम के लोगों ने लगाया है। हमारे डा० रवीन्द्रनाथ टैगोर एक महान कवि थे किन्तु हमें उनकी महानता का पता तभी चला जब पश्चिम वालों ने उनकी महानता को मान्यता दी। इसी प्रकार हम यह चाहते हैं कि कोई व्यक्ति पश्चिम से आये और बताये कि विवाह एक विशिष्ट क्रम में होने चाहिएं और पुरातन स्मृतियों में कही गयी बातें बहुत अच्छी हैं। मैं इस मायने में अनुदारवादी हूं कि मैं तब तक किसी नये स्थान के लिये छलांग नहीं लगाऊंगा जब तक कि मुझे यह पता नहीं चल जाए कि छलांग के लिये भूमि सही और मजबूत है। मेरा इस सदन से अनुरोध है कि उस बात पर कायम रहे जिस पर आपने इतने लंबे समय तक बहस की है।

अपनी बात समाप्त करने से पहले मैं इसके और पहलू मरुमक्काटयम कानून का उल्लेख करना चाहता हूं। वे सभी बुद्धिजीवी हैं। सचिवालय में लगभग प्रत्येक सचिव मालाबार का मेनन है। मुझे उन पर गर्व है। उनका रहन-सहन का तरीका भिन्न है। उनसे पूछिए कि क्या वे अधिक प्रसन्न होंगे। आप यह कानून उन पर भी लागू क्यों नहीं करते? अब अलियासन्थाना कानून को लीजिए। आप सोचेंगे कि यह प्रकृति के सर्वथा विपरीत है कि पुरुष पत्नी के घर जाए और पत्नी अपने घर में ही रहे, जहां बच्चों का लालन-पालन मां और उसका भाई करें, पुरुष नहीं। आपको यह अजीब लग सकता है। प्राकृतिक स्नेह एक अलग बात है। क्या मैं अपनी बहन के बेटे का आलिंगन अपने बेटे से अधिक स्नेह से कर सकता हूं। पर उनके यहां ऐसा नियम है और हम उन्हें उसका पालन करने की अनुमति दे रहे हैं। परन्तु, जब मेरे माननीय मित्र पंडित ठाकुरदास भार्गव कहते हैं कि पंजाब में कुछ प्रथाएं हैं और आप कहें कि उन्हें समाप्त कर दिया जाए क्योंकि मेरे मित्र इस संबंध में उत्तेजित नहीं हैं। यह विधिशास्त्र का गलत सिद्धांत है। प्रथा के बिना कानून नहीं बनता है। यह बात उसी प्रकार है कि भाषा से पहले व्याकरण नहीं बनता। एक बच्चा पहले बोलना सीखता है और तब बाद में व्याकरण का ज्ञान करता है। यह कहना

विधिशास्त्र का गलत सिद्धांत है कि यह प्रथा गलत है। ऐसा कहा जाता है कि एक प्रथा को मान्यता देने के लिए आवश्यक है कि पुरानी हो, नैतिकतापूर्ण हो और निश्चित हो। इन सिद्धांतों के आधार पर एक प्रथा को न्यायालय में मान्यता दी जाती है। मेरा कहना है कि यह कहना गलत है कि किसी स्थापित प्रथा की वैधता के बावजूद हम उसे इसलिए समाप्त कर दें क्योंकि अब हम एक भिन्न निष्कर्ष पर पहुंचे हैं। आपको ऐसा कहने का क्या अधिकार है? इसका अर्थ यह नहीं कि मैं इस मामले पर विचार करने के संसद के अधिकार पर प्रश्न चिन्ह लगा रहा हूं। मैं अपने मित्र से केवल इतना कह रहा हूं कि इस कानून को समाज पर न लादा जाए। वह निष्प्रभावी हो जाएगा। इन सुधारों की मांग लोगों से स्वयं आने दीजिए। मैं जानना चाहता हूं कि सिविल विवाह अधिनियम के अन्तर्गत हुए विवाहों के आंकड़े क्या हैं। हम कह सकते हैं कि लोग अनभिज्ञ हैं, परन्तु इसका निर्णय समय ही करेगा। इसलिए मेरी माननीय सदस्यों से अपील है कि परिणाम का पता होने से पहले कोई कदम न उठाएं। हमें चाहिए कि व्यापक कानून बनाने के बजाए चरणवार कानून बनाएं। हमारे यहां विधवा पुनर्विवाह कानून है। हमारे यहां संपत्ति में महिलाओं को अधिकार देने का कानून है, हमारे यहां बाल-विवाह रोक कानून है तथा ऐसे ही और अनेक कानून हैं। इसलिए मेरा कहना है कि हमें इन्तजार कर परिणामों को देखना चाहिए। इससे कुछ हानि नहीं होगी हम तलाक की अनुमति नहीं देते, इससे भी कुछ हानि नहीं होती जो लोग तलाक चाहते हैं उन्हें उसकी अनुमति दी जाए। जिन दम्पत्तियों ने अपना विवाह सिविल अधिकारियों के सामने किया है उन्हें संयुक्त रूप से यह घोषणा करनी चाहिए कि उन पर सिविल विवाह अधिनियम लागू होगा। यदि लोगों की राय इस उपाय के विरुद्ध हो तो हमें उसे बदलने का प्रयत्न करना चाहिए। इस पर सदस्यों को शान्तचित्त से निश्चय के साथ विचार करना चाहिए। हमें वर्तमान व्यवस्था के बदले नई व्यवस्था की स्थापना केवल इसलिए नहीं करनी चाहिए क्योंकि नई व्यवस्था नवीनता लिए हुए है तथा जिसे अपनाकर आप शेष विश्व के साथ चल सकें। ईसाइयत क्या है हम यह जानते हैं जर्मनी एक ईसाई देश है पर क्या वहां लड़ाई-झगड़े नहीं होते? क्या ईसाई आपस में नहीं लड़ते? हम यह कैसे कह सकते हैं कि जात-पात के कारण हमारा देश यूनानवासियों के हाथ में आ गया। आप ऐसा मौका क्यों देते हैं जिससे प्रत्येक व्यक्ति आप पर आक्षेप लगा सके। हमने प्रगति की है और उल्लेखनीय प्रगति की है। स्विटजरलैंड में किसी महिला को वोट का अधिकार नहीं है। हमारी महिलाएं वहां जाकर वोट के अधिकार की मांग क्यों नहीं करतीं? हमें अपने समाज और महिलाओं की धुंधली तस्वीर पेश करने से लाभ होने वाला नहीं है। हमारी महिलाओं में सीता और सावित्री भी पैदा हुई हैं। उन्होंने अपने पतियों का अनुकरण किया। शायद, अब हमें अपनी पत्नियों का अनुकरण करना चाहिए। वे हमारे पुराण लिखें और घरेलू शान्ति स्थापित होती है तो पुरुषों से अपनी

पत्नियों का अनुकरण करने को कहें। आज हम पति-पत्नी हैं। पर यदि मैं कल एक सिनेमा देखूं और अपनी पत्नी को पीटने लगूं क्योंकि वह सिनेमा में देखी महिला के समान सुन्दर नहीं है और अगले दिन क्या मैं तलाक के लिए आवेदन करूं? नहीं ऐसा नहीं करना चाहिए। महिलाएं कमजोर होती हैं। ऐसा कहने पर शायद महिलाएं मुझसे नाराज हो जाएं और लड़ने-झगड़ने लगें। परन्तु आप इस व्यवस्था से तब तक छुटकारा नहीं पा सकते जब तक आप ईश्वर से यह प्रार्थना न करें कि दुनिया में केवल महिलाएं हों अथवा केवल पुरुष ही हों। यह व्यवस्था अनिवार्य है। यह घरेलू जीवन के उचित सन्तुलन के लिए आवश्यक है। यह अर्थव्यवस्था एकता, बेरोजगारी दूर करने तथा अन्य अनेक बातों के लिए भी आवश्यक है। यदि पति की मृत्यु हो जाती है तो उसकी विधवा की देखभाल करने के लिए उसका देवर या ज्येष्ठ मौजूद रहता है। हमारे यहां भरण-पोषण कानून भी है जिससे विधवा को कम से कम अपने पैरों पर स्वयं खड़े होने की ताकत मिलती है। मैं केवल उन महिलाओं का विरोध कर रहा हूं जो अपने पिता की सम्पत्ति का एक बड़ा भाग ले लेती हैं और अपने पति को अकेला छोड़ देती हैं। ईश्वर से प्रार्थना है कि वह हमें उनसे और अविवाहित महिलाओं से बचाए।

विवाह तथा विवाह-विच्छेद*

इसके सभी पहलुओं पर बहुत कुछ कहा जा चुका है। हमें इस विषय पर निष्पक्ष भाव से विचार करना है। विवाह एक मानव परिपाटी है। पशुओं में विवाह नहीं होते। विवाह सभ्यता के उद्भव के पाश्चात्—हमारे देश में पांच हजार वर्षों से सुविधा और लाभ को ध्यान में रखते हुये किया जाता रहा है। विवाह एक परिपाटी के रूप में समाज में सामंजस्य स्थापित करने, घर के अन्दर प्रसन्नता लाने, दम्पत्ति में सुरक्षा की भावना उत्पन्न करने और भावी सन्तान के हित के लिये लाभदायक है और इसके लिये पति तथा पत्नी का विवाह में बंधे रहना या इकट्ठे रहना आवश्यक है। हमारे विधि-निर्माताओं ने इन चारों बातों का ध्यान रखा है। यह सोचना गलत है कि हमारे विधि-निर्माताओं ने जिनकी संख्या 100 अथवा 120 होगी और जो हमारी विधि के लिये जिम्मेदार हैं सर्वदा के लिये एक ही सिद्धांत अपनाया है। हिन्दू धर्म में किसी को अन्तिम अवतार नहीं माना जाता। जैसा कि भगवान कृष्ण ने कहा है: "यदा यदा हि धर्मस्य, ग्लानिर्भवति भारत। अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाभ्यहम्।"

"जब कभी कोई कठिनाई होती है, तब मैं किसी न किसी रूप में प्रकट होता हूं।" अतः, मैं प्रगति में विश्वास करता हूं हमारी मनुस्मृति सदा के लिये नहीं बना दी गई है। मनुस्मृति के पश्चात पाराशर स्मृति बनी उसके बाद नारद स्मृति और इसी प्रकार समय-समय पर समाज की अवस्था के अनुसार अन्य स्मृतियां बनती गईं । अतः यह कहना गलत है कि हमें हिन्दू विधि में परिवर्तन नहीं करना चाहिये और उसी विधि का अनुसरण करना चाहिए जो पहले की परिस्थिति में उचित थी।

वास्तव में मनुस्मृति में परिवर्तन करके ही पाराशर स्मृति बनी । अनेक महर्षि लोग व्यास के पास गये और उनसे बोले "यह मनुस्मृति, आचार व्यवहार और संस्कृतियां और अन्य इतनी अपरिवर्तनीय हैं कि जब तक एक हजार वर्ष तक का जीवन न जीयें तब तक हम उन्हें पूरा नहीं कर सकते हैं। अतः हमें कोई अन्य स्मृति उपलब्ध कराइये।" इसके पश्चात पाराशर ने हमें एक अन्य स्मृति उपलब्ध कराई। अतः यह सदन इस परिवर्तन को

* हिन्दू विवाह तथा विवाह-विच्छेद विधेयक पर वाद-विवाद में भाग लेते हुए, 12 मई, 1954, खंड पांच, 1954, कालम 7205-7221

करने के लिये पूर्णतया सक्षम है। तैत्रिय उपनिषद् में भी यह लिखा है: "जब आपको किसी विषय के संबंध में कोई लिखित पुस्तक न मिले तो तीन वयोवृद्ध सदाचारी पुरुषों को पकड़ लीजिए और उनसे पूछिये कि इस विशिष्ट मामले में किस मार्ग का अनुसरण करना चाहिये और उसे ही अपना धर्म समझना चाहिये। "अतः मुझे इस सदन की समर्थता और प्राधिकार में समय-समय पर यह निर्णय लेने के बारे में पूरा विश्वास है कि सामाजिक ढांचा किस प्रकार का होना चाहिये और यदि आवश्यक हो तो सामाजिक ढांचे में परिवर्तन किया जाना चाहिए। मैं केवल इतना कहूंगा कि विभिन्न मठों और मठपीठों और धार्मिक संस्थाओं द्वारा शुरूआत की जानी चाहिए लेकिन दुर्भाग्यवश वर्तमान पीढ़ी हमारे पूर्वजों की भांति समय के अनुसार नहीं चलती है। वे एक ओर अत्यधिक कठोर हैं और दूसरी ओर अत्यधिक क्रांतिकारी हैं। इसके लिये एक मध्यम मार्ग अपनाना होगा। एक पति और पत्नी के बीच कि बच्चा किसका है, विवाद कभी भी समाप्त नहीं हो सकता। बच्चा दोनों का ही होता है अतः यह न तो क्रियात्मक है और न ही प्रतिक्रियात्मक। मैं क्रियात्मक और प्रतिक्रियात्मक का तात्पर्य नहीं जानता हूं। क्रियात्मक और प्रतिक्रियात्मक दोनों ही आवश्यक हैं। मुझे अपने आप को पुराणमतवादी कहने में कोई लज्जा नहीं है। मैं समझता हूं कि प्रत्येक पुराणमतवादी होता है। जब तक कोई परिपाटी असत्य और अनाचारपूर्ण सिद्ध नहीं हो जाती और जिस परिपाटी का हम अनुसरण कर रहे हैं उससे कोई बहुत अच्छी परिपाटी नहीं मिल जाती तब तक यदि कोई परिवर्तन आवश्यक न हो तो मैं उसे छोड़ने को तैयार नहीं हूं। मैं नहीं समझता, कि किसी क्रांतिकारी के इससे भिन्न विचार होंगे: (1) अतः हमें एक दूसरे को क्रियावादी और प्रतिक्रियावादी कह कर दोषी नहीं ठहराना चाहिये । बल्कि हमें स्थिति के अनुसार कार्य करना चाहिए। पांच हजार वर्ष पूर्व के ऋग्वेद के दसवें मंडल में विवाह संस्कार वर्णन किया गया है। विवाह दो साक्षियों की उपस्थिति में एक टिकट लगे हुए कागज पर लिखी हुई छोटी-मोटी साझेदारी नहीं होती। किन्तु यह एक पवित्र गठबंधन होता है, जिसमें दो व्यक्ति, जिनका परस्पर कोई संबंध नहीं होता, जीवन भर के लिये एक दूसरे के साथी बन जाते हैं और मिल कर कार्य करते हैं और वे इस दृष्टि से संतानोपत्ति नहीं करते कि हमें लंगड़े-लूले, अंधे-काने बच्चे पैदा करके भावी पीढ़ियों पर उत्तरदायित्व डाल कर जाना है। विवाह अच्छी सन्तान उत्पन्न करने के लिये किया जाता था जो समाज के नेता मनु या अन्यों ने और किसी कसौटी पर नहीं कसा। (2) मैं अपने आदरणीय मित्र श्री वी०पी० नायर की अध्ययनशील क्षमता और परिश्रम के लिये अत्यन्त कृतज्ञ हूं जिन्होंने हमारे सम्मुख कल दो पैराग्राफों को रखा था और उनका यह विचार था कि मनु का कहना कुछ अनुचित सा है। मनु ने केवल यही कहा है कि रोगी और लड़ने वाली लड़की से विवाह

नहीं करना चाहिये। मैं तो सब को ऐसा ही करने के लिये कहूंगा और स्त्रियों से भी यही करने को कहूंगा।

मैं किसी गलत परिपाटी पर गर्व करना नहीं चाहता। किन्तु इसके साथ ही हमें अपने पूर्वजों की अत्यधिक आलोचना नहीं करनी चाहिये। उन्होंने उस समय जो कुछ किया था वह बिल्कुल ठीक था। हमारे देश में विवाह परिपाटी बहुत अच्छी रही है। अब तक न तो हमारे यहां अविवाहिताओं की सेना है, न ही अविवाहितों की और न ही हमारे यहां बिना माता-पिता के बच्चों की सेना है।

जहां तक विधवाओं का संबंध है मैं केवल इतना कहूंगा कि विधवाओं के संबंध में 1856 में विधवा पुनर्विवाह अधिनियम पारित किया गया था। परन्तु मैं माननीय सदस्यों से यह पूछना चाहता हूं कि तब से अब तक वास्तव में कितनी विधवाओं का पुनर्विवाह हुआ है। इस के लिये समय के अनुसार समाज का विकास होना भी आवश्यक है। उसके कहने का कोई अर्थ नहीं कि अनेकों विधवायें मौजूद हैं।

आप चाहे कितना भी कहें लोग विधवाओं से विवाह करने को तैयार नहीं होते हैं वे तो कुवांरी लड़की चाहते हैं। यही मुख्य बात है। वर्ष 1939 में जब मैं केन्द्रीय विधान सभा का सदस्य था तब बंगाल के एक सदस्य ने एक विधेयक प्रस्तुत किया था जिसके द्वारा उसने कहा था कि एक भी मामले में कोई भी विधुर किसी अविवाहिता से विवाह नहीं करेगा। इसमें क्या बुराई है? यदि विधुर भी विधवाओं से विवाह नहीं करेंगे तो इस विधवा पुनर्विवाह अधिनियम, 1856 को कार्यान्वित किये जाने की संभावना कहां है? मैं यहां पर मौजूद अपनी आदरणीय महिला सदस्यों से जो मेरी बहन हैं से यह अनुरोध करना चाहता हूं जिनकी विवाह योग्य लड़कियां हैं, कि वे इस विषय पर विचार करें कि यदि कोई युवती अपने इस देश में तलाक या विवाह-विच्छेद कर लेगी तो क्या उसके पति के जीवित रहते और कोई अन्य व्यक्ति उससे विवाह करने को तैयार हो जायेगा? मैं उन्हें यथार्थवादी बनने के लिये कह रहा हूं। यद्यपि मैं एक विवाह के शत प्रतिशत पक्ष में हूं, किन्तु मुझे इतनी जल्दी तलाक या विवाह-विच्छेद के जारी करने में हिचकिचाहट होती है। हमें कुछ समय तक इसका परीक्षण करना चाहिये। हमें इस प्रश्न पर सभी दृष्टियों से विचार करना होगा। मान लीजिये कि कोई पुरुष किसी स्त्री से विवाह कर ले, किन्तु उनका पारिवारिक जीवन बहुत कष्टमय रहे तो उन्हें ऐसी परिपाटी से क्या लाभ जिससे उनका घरेलू जीवन नरक बना रहे। अतः उनका जीवन कष्टमय होगा। अतः ऐसी परिपाटी जो उनके घरेलू जीवन को खुशहाल बनाये, चाहे वे निर्धन भी क्यों न हों और स्वयं अपने

हाथों से दिन प्रति-दिन कार्य करके अपना जीवन निर्वाह करते हों, वह जीवन उस जिन्दगी से बेहतर है जो घर में मेमना और शेर के बीच लड़ाई जैसा हो। पश्चिम परिपाटियों के अनुसार विवाह बीस अथवा पच्चीस वर्ष की आयु के पश्चात होता है। प्रत्येक एक दूसरे के प्रति देखता है लेकिन एक दूसरे के अन्दर की बात नहीं जानते हैं और यह नहीं जानते कि वास्तव में दूसरे के मन में क्या है, फिर भी, वे अपने माता-पिता को विवाह निर्धारित करने की अनुमति नहीं देते हैं और वे यह कहते हैं कि बाल विवाह प्रथा कितना अभिशाप है। माता-पिता बेहतर समझते हैं। ऐसा नहीं है कि प्रत्येक बच्चा जिसकी बलि अथवा आहुति चढ़ा दी जाती है, अथवा बलिदान किया जाता है और माता-पिता अपने मत से यही चाहते हैं कि विवाह संबंधियों में हो और उपयुक्त व्यक्ति से हो। पच्चीस अथवा तीस वर्ष की आयु में लड़के अथवा लड़की के लिए एक दूसरे को समझना कैसे सम्भव हो सकता है? यदि लड़का किसी ऐसी लड़की के साथ विवाह करना चाहता है जो किसी उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की पुत्री है और उसकी काफी पैतृक सम्पत्ति है, तो वह एक वर्ष तक जब तक कि विवाह आयोजित किया जाता है, सबसे बेहतर युवा होने का अभिनय करता रहेगा। यदि लड़की विकलांग है, तो वह फिर भी बेहतर होने का प्रदर्शन करती रहेगी और सबसे बेहतर व्यक्ति से विवाह करने का प्रयास करेगी। लेकिन इसके तुरन्त पश्चात वे विवाह-विच्छेद के लिए न्यायालय जायेंगे और कहेंगे कि हम नहीं जानते थे कि यह लड़का बेकार था और इसी प्रकार दूसरा पक्ष भी कहेगा। मैं भी नहीं जानता था कि यह लड़की बेकार है। यदि विवाह-विच्छेद होता है तो ऐसी समस्यायें सामने आती हैं-ऐसा नहीं है कि मैं इसके विरुद्ध हूं। उत्पत्ति और एक विवाह प्रथा के संबंध में भी हमारे देश में एक परिपाटी रही है। मैं यह कहना चाहता हूं कि मैं विवाह-विच्छेद के विरुद्ध हूं और मैं एक विवाह प्रथा के पक्ष में हूं। मैंने जो कुछ कहा है वह इसी के संदर्भ में कहा है।

विवाह एक आर्थिक और सामाजिक प्रथा है, एक समय था जब महिला पूरे समुदाय के लिए ब्याही जाती थी और बाद में पुरुष भी पूरे समुदाय के लिए ब्याहे जाते थे। अतः एक ओर बहुपतिप्रथा थी और दूसरी ओर बहु-विवाह प्रथा थी। लेकिन कुछ पर्वतीय स्थलों को छोड़कर बहुपति प्रथा समाप्त हो गई और वहां पर भी यह विधेयक के द्वारा प्रभावित होगी। जहां तक बहु-विवाह प्रथा का संबंध है, प्राचीन समय से ही न केवल यहां बल्कि अन्य देशों में भी, विशेषतः ईसाई धर्म वाले देशों में बहु-विवाह प्रथा को अनुमति दी गई है। यह बात सच है। जैसाकि श्रीमती सुभद्रा जोशी जी ने कल कहा था कि दूसरी महिला से विवाह तब होता था जबकि पहली पत्नी से कोई बच्चा नहीं होता था। लेकिन वे धर्म का भी कुछ ध्यान रखते थे और उनकी कुछ धर्मनिष्ठा भी होती थी। लेकिन आज स्थिति बदल गई है। एक नवयुवक सिनेमा देखने जाता है। गई रात को

किसी सिनेमा तारिका को देखता है और दूसरे दिन सवेरे ही अपनी पत्नी को पीटने लगता है और वह दूसरी लड़की से ब्याह करने की इच्छा प्रकट करता है। क्योंकि उसकी पत्नी सिनेमा की तारिका के समान सुन्दर नहीं है। आज दुर्भाग्य की बात यह है कि नैतिक और धार्मिक पृष्ठभूमि विलीन हो गई है। जिस व्यक्ति के पास आज पैसा है वह अपनी पत्नियों को इस प्रकार बदलता रहता है जैसे शहद की मक्खियां एक फूल से रस चूस कर दूसरे फूल पर उड़ जाती हैं। दुर्भाग्यवश आज यही हो रहा है। मुझे कुछ मामलों की जानकारी भी प्राप्त हुई है—सम्भवतः दूसरे उनके बारे में न जानते हों। जो व्यक्ति यहां आकर रहने लगता है और जब उसकी पत्नी बच्चे को जन्म देने के लिए अपने घर जाती है, तो जब तक वह स्त्री बच्चे सहित लौट कर आती है तो वह घर में एक और मालकिन को पाती है। इसे किस प्रकार सहन किया जा सकता है?

मैं इस बात से सहमत हूं कि ये बातें अपवाद-स्वरूप हैं? लेकिन इन अन्य महिलाओं को क्या करना चाहिए? मैं यह कहना चाहता हूं कि अब वह समय आ गया है जबकि आज "पितृतर्पण" आदि के विचार से विवाह करने का विचार धूमिल हो गया है। वे बातें अब पृष्ठभूमि में चली गई हैं और आजकल लोग सिवाय कुछ मामलों को छोड़कर इसके बारे में अधिक नहीं सोचते हैं। अतः आज लोग संतति के लिए विवाह नहीं करते हैं। निसंदेह आज भी यह एक ऐसी बात है जो अभी भी जारी है, लेकिन दुर्भाग्यवश, अन्य अनेक ऐसी बातें प्रचलित हैं कि यह आवश्यक नहीं है कि इस प्रथा को जारी रखा जाये। आज ऐसा समय आ गया है जबकि एक व्यक्ति को एक से अधिक पत्नी से विवाह नहीं करना चाहिए। आपने यह सुना होगा कि इस्लाम धर्म के विरुद्ध लोग यह आरोप लगाते हैं कि उसमें एक पुरुष को चार स्त्रियों तक विवाह करने की अनुमति दी गई है।

पैगम्बर के सामने यह समस्या स्पष्ट रूप से आई कि क्या कोई पुरुष कितनी भी पत्नियों से विवाह कर सकता है? उसने इसकी संख्या घटाकर चार कर दी। शायद, यदि आज पैगम्बर जीवित होते तो वह इसे चार से घटाकर निश्चित रूप से एक कर देते। कुछ मित्रों ने कहा है कि इस्लाम धर्म में परिवर्तन नहीं किया गया है। यदि मैं अपने लिए सही मार्ग का चयन करता हूं तो मुझे इसका अनुसरण करने के लिए तब तक का इन्तजार नहीं करना चाहिए जब तक कि कोई उस पर न चले। अतः यह स्थिति दुर्भाग्यपूर्ण है। घर लौटने पर यदि हम किसी दूसरे पति को वहां पाते हैं तो हम आत्म हत्या कर लेंगे, हमें भी उसी तरह उदारता का परिचय क्यों नहीं देना चाहिए? एक महिला अपने पति के प्रेम में अन्य किसी महिला को भागीदार कैसे बना सकती है? मैं देख रहा हूं कि हमारी कुछ बहिनें मेरे भाषण की प्रशंसा कर रही हैं। जहां तक इस मामले का संबंध है, मैं केवल यह कह रहा हूं कि इस विधेयक के अतिरिक्त भी और बहुत सी ऐसी बातें और

असमानतायें हैं जिनकी भर्त्सना इनके किसी भी संगठन द्वारा नहीं की गई हैं। इनमें कुछ युवतियां स्नातकोत्तर हैं। कला निष्णात छः सुन्दर युवतियां एक अकेले पुरुष के पीछे केवल उसके धन के लोभ में पड़ गई हैं। मैं इस बात को जोर देकर कहता हूं। महिला संगठनों ने इस पर क्या किया है? यह पुरुष नहीं जो ऐसी सुन्दर युवती से विवाह करता है वरन् वह सुन्दरी ही धन के लोभ में उससे विवाह करती है।

हम ऐसे आचरण के दोषी पुरुष अथवा महिला के विरुद्ध खड़े होकर उसे रोकने का साहस खो चुके हैं। हमें समाज के हित में उस व्यक्ति की निन्दा करना चाहिए, भले ही उसका परिणाम कुछ भी निकले। अतएव, अब यह कहने का समय आ गया है कि एक पुरुष, एक स्त्री हो। लेकिन मैं समय विशेष पर एक पुरुष और स्त्री के पक्ष में नहीं हूं। यह बहुपतिवाद और बहुपत्नीवाद है।

मैं एक विवाह प्रथा का पक्षधर हूं। यह रामचन्द्र जी के युग के अनुसार है, जिनको हम आज भी अराध्य मानते हैं। अब समय आ गया है जब हमें बिना किसी हिचक से इसका पालन करना चाहिए। यही मेरा विनम्र निवेदन है।

अब, जहां तक विवाह-विच्छेद का संबंध है, एक विवाह प्रथा के साथ भी कुछ कठिनाइयां हैं। मेरे साथी श्री खरडेकर ने कहा है कि विवाह एक आर्थिक संस्था बन गई है। देश भर में लोगों का कहना है कि पुरुष और महिलाओं की संख्या समान है। लेकिन उड़ीसा में महिलाओं की संख्या पुरुषों से अधिक है। पठानकोट में पुरुषों की संख्या महिलाओं से अधिक है। अतः क्या आप यह कहेंगे कि पठानकोट का एक पुरुष और उड़ीसा की एक महिला संतुलन बनाते हैं। ऐसे विवाह का क्या अर्थ होगा? मैं ऐसे समुदायों को जानता हूं जिनमें महिलाओं की बहुत बड़ी संख्या अपना सम्पूर्ण जीवन दाम्पत्य सुख भोगे बिना और बिना किसी आर्थिक सहायता के बिता देती है। उनके सहारे के लिए कोई न कोई व्यक्ति होना चाहिए, क्योंकि माता पिता जीवनपर्यन्त नहीं रहते। अतएव, सहारे के लिए बहिनें एक ही पुरुष से विवाह कर लेती है। मैं तो यह भी चाहता था कि कुछ समय बाद महिला की सहमति से वह दस वर्ष या उसके बाद विवाह कर सकता है। लेकिन ऐसी सहमति जबरदस्ती भी प्राप्त की जा सकती है। ऐसी परिस्थिति में पति को यह विकल्प नहीं दिया जाना चाहिए। हमें एक विवाह प्रथा को अपनाते हुए पति और पत्नी को जीवनपर्यन्त एक दूसरे को बदल देने का मौका नहीं देना चाहिए।

जहां एक विवाह-विच्छेद का संबंध है, पराशर स्मृति ने भी कुछ सीमा तक उसकी अनुमति दी है।

जहां तक पांच विशेष परिस्थितियों का संबंध है, वे पहले से ही अस्तित्व में हैं, नास्ते पहले से ही हैं। उसके बाद "मृत्रे" हैं—यदि पति की मृत्यु हो जाती है तो महिला अन्य

पुरुष से विवाह कर सकती है। उसके बाद है परिव्राजते—अर्थात् यदि पति संन्यासी हो जाता है अथवा उसका पता नहीं चलता है। फिर है "क्लीव"—नपुंसक। और अंतिम है पथेते, अर्थात् यदि पति धर्म परिवर्तन कर लेता है। इन परिस्थितियों में पराशर स्मृति ने विवाह-विच्छेद की अनुमति दी है। लेकिन परवर्ती काल में इसे अपनाया नहीं गया। अब माननीय सदस्य, विशेषकर प्रवर समिति में, इस बात पर विचार करेंगे कि वह समय आ गया है जब हमें इस प्रकार की बातों को तुरन्त लागू कर देना चाहिएं।

अब महिलाये पुरुषों के समान अधिकार चाहती हैं। वे कौन से अधिकार हैं? अभी तक किसी महिला के एक साथ कई पति नहीं हो सकते थे जबकि किसी पुरुष की एक साथ कई पत्नियां हो सकती हैं। अब पुरुष और महिलायें समान दर्जा चाहते हैं। पांच-दस वर्ष एक विवाह प्रथा को लागू करके उसके परिणामों पर हम निगरानी रखें। मैं सदन की महिला सदस्यों से केवल इस पर विचार करने के लिए कह रहा हूं। यदि विवाह-विच्छेद की तुरन्त अनुमति दी जाती है और अधिकार दे दिया जाता है तो घाटे में कौन रहेगा? उन्हें इस भ्रम में नहीं रहना चाहिये कि सुन्दरता सदैव बनी रहेगी। एक महिला जो आज सुन्दर है कल वह चेचक से पीड़ित हो सकती है और फिर ऐसी स्थिति में क्या होगा। इसलिए यह सब क्षण भंगुर है। अंततोगत्वा आपस में जोड़ने वाली चीज कोई दूसरी ही है। आप किसी कुरूप व्यक्ति का विवाह किसी रूपसी से होता देखकर हतप्रभ हो सकते है; लेकिन अंततः हम देखते हैं कि दोनों में अत्यंत मधुर संबंध है और वे एक दूसरे के साथ गंगा-यमुना की तरह घुल मिल गये हैं।

जब तक उसमें कोई कमी रहेगी हम उसमें बदलाव करते रहेंगे। लेकिन यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि दम्पति को मिल-जुल के रहना होगा और भौर होने से पूर्व समस्त आपसी विवादों को हर हालात में समाप्त कर देना होगा।

मैं इस सदन के माननीय सदस्यों और देश के लोगों से इस मामले पर विचार करने का आग्रह करता हूं। हमें पति और पत्नी दोनों के लिए ही पांच अथवा दस वर्षों तक एक विवाह प्रथा को लागू करना चाहिए। इसे छोड़ना नहीं चाहिए।

श्रीमती सुभद्रा जोशी ने बहुत ही अच्छे और मर्मस्पर्शी ढंग से अपनी बात रखते हुए युवतियों की समस्याओं को स्पष्ट किया तथा सदन से उन पर विचार करने का अनुरोध किया और कहा कि "क्या आप इसकी अनुमति देंगे?" उन्होंने कहा कि यदि किन्हीं भी कारणों से उत्पीड़न का कोई भी मामला सामने आता है तो पत्नी को पति से अलग होने का अधिकार मिलना चाहिए जैसाकि आपने दण्ड संहिता में हत्या के किसी भी मामले के लिए उपबंध बनाया है। मुझे दुख है कि यह तुलना सटीक नहीं है। मैं केवल यह कहूंगा कि यदि एक गांव के कई घरों में से एक में आग लग जाती है तो क्या आप शेष अन्य

घरों को उजाड़ देंगे ताकि उनमें आग न लगे? आपको इस पर इस दृष्टि से भी विचार करना चाहिए। इन परिस्थितियों में इस बात का कोई अर्थ नहीं है कि कोई महिला अपने पति के चंगुल से मुक्त नहीं हो पाती है किन्तु इसके लिए भी हमने एक उपबंध बनाया है। ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे मित्र उन बातों को भूल रहे हैं जिनकी हमने व्यवस्था की है। जहां तक इस मामले का संबंध है हम तीन चार वर्ष पूर्व ही अलग जीवन बिताने और गुजारा व्यय पाने के लिए उपबंध बना चुके हैं जिसके अंतर्गत विशेष परिस्थितियों में पत्नी न्यायिक रूप से अलग रहने की हकदार होगी। न्यायिक रूप से अलग रहने का तात्पर्य क्या है? चरित्रहीनता का आरोप लगने के बाद भी क्यों कोई स्त्री अलग जिंदगी नहीं बिता सकती? हमारे शास्त्रों में इस पर विचार किया गया है दुर्भाग्य से हम अपने पुरखों को मूर्ख समझते हैं मुझे नहीं मालूम कि आगे आने वाली पीढ़ियां हमें क्या कहेंगी? मनु अथवा याज्ञवल्कय का तात्पर्य हमें गंगा अथवा यमुना नदी में डूब जाने के लिये प्रेरित करना बिल्कुल नहीं था। यह अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण है। महोदय, मैंने आपके साथ अनेक देशों का भ्रमण किया है। प्रत्येक देश अपनी उपलब्धियों तथा संस्कृति के प्रति गौरवान्वित है। परन्तु यह एक ऐसा हतभागी देश है जहां आरंभ से लेकर अंत तक प्रत्येक वस्तु गलत है और जिसके निवासी यह माने हैं कि हमारे पूर्वजों ने हमें इस संसार में जन्म दे कर भूल की। मैं इस सदन के आदरणीय सदस्यों और विशेष रूप से महिला सदस्यों से अनुरोध करूंगा कि वे इस बात को समझें कि विवाह कोई एक पक्षीय संबंध नहीं है। मुझे इसमें भी एक कमी नजर आती है। यह कहा जाता है कि विवाह हिन्दू धर्म के दो विपरीत लिंगों के प्राणियों के मध्य होना चाहिए। ऐसा होना अनिवार्य है। यह सही है कि आजकल हम व्याभिचार और इसी प्रकार के घृणित और अप्राकृतिक अपराधों के बारे में नहीं सुनते हैं। हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि हमारे पास संपूर्ण विश्व को देने के लिए एक संदेश है। हमारी सभ्यता विश्व की प्राचीनतम सभ्यताओं में से एक है। हमें इस बात को ध्यान में रखना चाहिए। यदि पति अपनी पत्नी के साथ निरंतर दुर्व्यवहार करता है तो मैं कभी भी यह नहीं चाहूंगा कि पत्नी फिर भी पति के प्रति समर्पिता बनी रहे। इस संबंध में तो पहले ही एक प्रावधान बनाया जा चुका है। आप यह कह सकते हैं कि ऐसी परिस्थिति में पत्नी को पति से अलग होकर सुख-पूर्वक रहने दिया जाये। परंतु यहां एक और प्रश्न उठता है। एक अलग घर और गुजारा हेतु सहायता राशि लेकर भी ऐसे जीने से क्या लाभ? और यदि स्त्री को विवाह-विच्छेद मिल भी जाता है, तो मैं यह पूछना चाहूंगा कि क्या उस स्त्री को पुनर्विवाह करने की कोई संभावना नहीं है? सामान्य तौर पर, मैं ऐसी स्त्रियों के बारे में कुछ नहीं कह सकता जो आपवादिक रूप से अत्यधिक सुन्दर हों। जैसाकि श्री खारडेकर ने कहा, एक सुन्दर स्त्री के प्रशंसक अनेक पुरुष हो सकते हैं। परंतु मैं नहीं समझता कि कोई भी सुन्दर स्त्री यह पंसद करेगी कि

उसके संबंध एक साथ अनेक पुरुषों के साथ स्थापित हों। यह पूर्णतः अनुचित होगा। आखिरकार, खाद्य पदार्थों को देखने से ही भूख पड़ती है। यह एक इच्छा है, एक मानसिक कामना है। परन्तु यदि मनुष्य चाहे तो वह इन कामनाओं का दमन कर सकता है। इस भौतिक संसार के भीतर और बाहर तथा उससे परे वही मनुष्य महान कहलाया जिसने अपने मनोविकारों पर नियंत्रण कर लिया। यह एक ऐसा गुण है जिसे हमारे पूर्वजों ने अपने भीतर विकसित कर लिया था, परन्तु हमें यह कार्य अभी करना शेष है। मानवीय इन्द्रियों ने अपने आप को इस सीमा तक विकसित कर लिया है और यही कारण है कि हम पशुओं की भांति ऐसी किसी भी कामना से अंधः प्रेरित नहीं होते। हमें अपनी इच्छाओं पर नियंत्रण करना पड़ता है और इस नियंत्रण के फलस्वरूप ही हम समाज में अपना स्थान बनाते हैं। अतएव, मैं इस प्रकार के विवाह-विचछेद का पक्षधर नहीं हूं। प्रवर समिति को कम से कम पांच वर्षों की अवधि के लिये विवाह-विच्छेद को टालने का प्रयास करना चाहिए। यदि परिस्थितिवश विवाह-विच्छेद अपरिहार्य हो गया हो, तो भी उसका कारण कुष्ठ रोग, जैसी किसी बीमारी से बचाव हेतु नहीं होना चाहिए। पचास वर्ष की आयु में पहुंचकर भी किसी व्यक्ति को कुष्ठ रोग हो सकता है। परंतु मैं समझता हूं कि प्रावधानों के अतंर्गत ऐसी परिस्थिति में विवाह-विच्छेद अनिवार्य नहीं है। ऐसी स्थिति में पत्नी अपने पति का त्याग करने के लिये बाध्य नहीं है। परंतु अब दूसरा उदाहरण लीजिए। दुर्भाग्यवश, किसी स्त्री को भी कुष्ठ रोग हो सकता है। क्या आपके कहने का अभिप्राय यह है कि कुष्ठ रोग के कारण मनुष्य-मनुष्य के बीच अन्तर आ जाता है। एक स्त्री के भी कुष्ठ रोगिणी होने की पूरी संभावना है। ऐसी स्त्री को किसी अलग स्थान पर रखकर उसकी सेवासुश्रुषा करने के स्थान पर क्या हमें उसे घर से उठाकर बाहर सड़क पर फेंक देना चाहिए। ऐसी स्थिति में हम या तो परिव्राजक अथवा सन्यासी बनना पसंद करेंगे अन्यथा जाति-बहिष्कृत। यदि इस प्रश्न के साथ विवाह-विच्छेद को भी अविच्छेद्य कारक के रूप में जोड़ना आवश्यक है, तो इस समय उसे इस परिप्रेक्ष्य तक ही सीमित रखिये। न्यायिक रूप से अलग रहने की अपेक्षा, वह पति से अलग रहकर गुजारा राशि प्राप्त कर सकती है। पति के व्याभिचारी सिद्ध होने की दशा में भी हिन्दू कानून के अनुसार पत्नी को गुजारा राशि पाने का अधिकार है। हमारे पूर्वज कह गये हैं कि किसी पुरुष को व्याभिचार के कारण मृत्युदंड नहीं दे सकते। तब फिर, हमें इस अपराध के लिये स्त्रियों को भी दण्डित नहीं करना चाहिए। इसके विपरीत हमें ऐसी स्त्री को भी गुजारा राशि पाने की सुविधा प्रदान करनी चाहिए और उसे इस प्रकार की सुविधायें उपलब्ध करानी चाहिए जिससे वह अपनी सामान्य अवस्था को पुनः प्राप्त कर सके। जहां तक इस प्रश्न का संबंध है, मुझे केवल इतना ही कहना है।

अब मैं आदरणीय सदस्य से यह अनुरोध करूंगा कि वे इस तथ्य की ओर ध्यान दें

कि मानव-सभ्यता के उद्भव से आज तक, विवाह को अधिकाधिक सरल तथा विवाह-विच्छेद की प्रक्रिया को अधिक से अधिक जटिल बनाने का प्रयास किया गया है। मैं चाहता हूं कि व्यक्तियों को विवाह के लिए प्रेरित करने हेतु हर संभव प्रयास किया जाना चाहिए। विवाह की अनुमति प्रदान करना इसलिए अनिवार्य है कि किसी भी बच्चे को अवैध संतान नहीं कहा जा सके। हमारे पूर्वजों ने विवाह की आठ विधियों को मान्यता प्रदान की थी, जिससे कि यदि कोई पुरुष किसी स्त्री को भगाकर ले जाये और फिर किसी शिशु का जन्म हो, तो भी उस शिशु को एक वैध विवाह के परिणामस्वरूप जन्म लिया गया माना जाये। उसे एक वैध संतान माना जायेगा। हम अपने आपको पूर्वजों की तुलना में प्रगतिशील मानते हैं। हमारे यहां ऐसा कोई प्रावधान नहीं है। किसी एक विशेष विधि के द्वारा विवाह संपन्न करना अनिवार्य है, भले ही वह दबाव अथवा जोर जबरदस्ती से हो। फिर, ऐसी परिस्थिति में उस शिशु का क्या होगा? इन परिस्थितियों में, मैं तो यही कहूंगा कि हम प्रगति अवश्य करें परंतु साथ ही अपनी प्रथाओं को भी जीवित रखें। जैसाकि श्री जांगड़े ने अत्यंत बुद्धिमानीपूर्वक कहा है कि आज हम शादी करते हैं, कल हम विवाह-विच्छेद करते हैं और उस पर फिर विवाह-विच्छेद को प्रथागत रिवाज के अनुरूप कठिन बना देते हैं। ऐसे में समस्या यह है कि स्त्री स्वतंत्र हो जाती है और पति असहाय-सा देखता रह जाता है परंतु दूसरी ओर पुरुष स्त्री का स्वामी होता है। दोनों पक्षों को न्याय मिलना चाहिए। मैं अपने देश और अपने पूर्वजों के प्रति गौरवान्वित हूं। यह सही है कि अनेक बातें ऐसी हैं जिन्हें सुधारने का हमें पूरा-पूरा अधिकार है। ऋग्वेद के दसवें अध्याय में विवाह का वर्णन किया गया है। यूरोपीय विद्वानों ने दुर्भावनापूर्वक इसे 5,000 वर्षों पूर्व की बात माना है, परंतु मेरे अनुसार यह 15,000 से 50,000 हजार वर्ष पूर्व का वर्णन है। उस समय, सूर्य की पुत्री और चन्द्रमा के बीच विवाह-संबंध स्थापित हुआ। चन्द्रमा क्या है? सूर्य से मिलने वाले प्रकाश से ही चन्द्रमा प्रदीप्त होता है। यह एक खगोलीय तथ्य है। चन्द्रमा का अपना कोई प्रकाश नहीं है और वह अपना प्रकाश सूर्य से प्राप्त करता है। यूरोपवासियों ने हाल ही में इस सत्य की खोज की थी, जबकि हमारे पूर्वजों ने आज से लगभग 5,000 अथवा इससे अधिक वर्ष पूर्व इस सत्य का आविष्कार कर लिया था। उस वर्णन में कन्या को स्नान कराया गया और फिर उसे नयी साड़ी पहनने के लिये दी जाती है। इन वर्णनों में प्रयुक्त शब्दों को कड़जन वृक्ष की पत्तियों पर लिखकर सुरक्षित रखा गया और अनेक सभ्यताओं ने निरंतर उनका प्रयोग किया। क्या इसे आप घृणित अथवा अनैतिक जीवन-पद्धति कहेंगे? मैं सदन से विषय के इस पहलू पर भी विचार करने की सिफारिश करूंगा। तब, कन्या को उसके पति के घर ले जाया जाता है और पाणिग्रहण की रस्म पूरी की जाती है। कन्या पति को सौंप दी जाती है। कन्या से कहा जाता है कि अब तुम अपने पिता के परिवार की सदस्या

न होकर अपने पति के परिवार की सदस्या हो। अतएव, सम्पत्ति के उत्तराधिकार के विषय पर, मैं सदन में उपस्थित सभी सदस्यों, विशेषकर अपनी बहिनों से यह अनुरोध करूंगा कि वे अपने पतियों को बाहर जाने से रोके रखें। विवाहोपरांत स्त्री को अपने पति की सम्पत्ति के बराबर का हिस्सेदार बनाया जाना चाहिये। पुराणों में भी यह कहा गया है कि स्त्री की आंखों से एक भी आंसू न गिरने दें। आजकल भला ऐसे पतियों की संख्या कितनी है जो इस शिक्षा का पालन करते हैं। इसके एकदम विपरीत, वे तो अपनी पत्नियों को आंसू बहाने पर विवश कर देते हैं। हमें सजग होकर स्त्री को समाज में, उसका सही स्थान प्रदान करना चाहिये। हमें स्त्री को गुलाम समझने की मानसिकता का परित्याग करना चाहिये। "सह-धर्मचारित्व" हमारे पूर्वजों की यही शिक्षा थी जिसका अर्थ यह है कि स्त्री की अपने पति के साथ समान भागीदारिता हो। पाणिग्रहण-संस्कार सम्पन्न होता है और स्त्री घर की शोभा बन जाती है।

मुझे ऐसी परम्परा पर गर्व है। पत्नी को परिवार के बुजुर्गों और बच्चों की देखभाल करनी चाहिये। चाहे कोई समाजवादी हो अथवा साम्यवादी—हम में से प्रत्येक मनुष्य को समाज के सामाजिक ढांचे का पूरा अनुभव है। आप उसे बदलने का प्रयास न करें। आइये, हम सब मिलकर एक व्यापक मानसिकता का विकास करें। आखिरकार तो, स्त्री ही अपनी सृजनक्षमता के बल पर भविष्य के नायक और कर्मभोगियों को इस धरती पर लायेगी। अतएव, इस विवाह-संबंध अथवा विवाह-विच्छेद को इतना सस्ता मत बनाइये और न ही पुरुष और स्त्री के बीच विवाह संबंध स्थापित करने तथा विवाह-विच्छेद लेने की प्रक्रिया को भी इतना सरल बनाइये। कुछ समय के लिये हमें वर्तमान व्यवस्था को ही बनाये रखना चाहिये। ईश्वर सर्वव्यापी है। यदि आज हम कोई कानून बना देते हैं तो कल उसमें सुधार भी कर सकते हैं। मैं सदन के सदस्यों और विशेष रूप से महिला सदस्यों से यह अनुरोध करना चाहूंगा कि विवाह-विच्छेद का विवाह से अटूट संबंध नहीं है। किसी को भी यह धारणा नहीं बनानी चाहिये कि विवाह-विच्छेद विवाह के पश्चात् अपरिहार्य है। मोटे तौर पर आज भी हम विवाह की प्राचीन प्रणाली को ही अपना रहे हैं। किसी व्यक्ति को विवाह और विवाह-विच्छेद के बाद विवाह करने की क्या आवश्यकता है। विवाह-विच्छेद के पश्चात् विराम भी तो लगाया जा सकता है? हमें एक पत्नीवाद का पालन करना चाहिये। मैं प्राचीन संस्कृति का अनुयायी हूं। अब मैं आधुनिक सभ्यता का भी अनुकरण करने लगा हूं। मुझे आप परंपरावादी अथवा स्वच्छंदतावादी कुछ भी कह सकते हैं। परन्तु मैं यह महसूस करता हूं कि हमारी प्राचीन संस्कृति में कुछ ऐसे तत्व अवश्यमेव विद्यमान हैं। जिन्हें सुरक्षित रखा जाना चाहिये।

भाषाई आधार पर राज्यों का पुनर्गठन*

इस संकल्प का मैं सैद्धांतिक रूप से समर्थन करता हूं। परन्तु व्यवहारिक दृष्टिकोण से मेरा ख्याल है कि यह संकल्प यदि स्वीकार कर भी लिया जाता है तो तत्काल रूप से लागू नहीं किया जा सकता। और इस बात के कारण बहुत गम्भीर हैं। जहां तक इसकी वांछनीयता का संबंध है यह बहुत पहले स्वीकार कर ली गई थी और मैं इस बात से सहमत हूं कि किसी न किसी समय यह देश भाषाई आधार पर बंटेगा अवश्य। इस देश में अधिकांश राज्य हालांकि भाषाई आधार पर ही हैं, फिर भी कहीं-कहीं सीमाओं के संबंध में थोड़ा बहुत सामंजस्य करना पड़ेगा। असम एक भाषाई क्षेत्र है। पश्चिम बंगाल भाषाई क्षेत्र है। बिहार भाषाई क्षेत्र है, सारे उत्तर प्रदेश में एक ही भाषा है, राजस्थान में एक ही भाषा है, और पंजाब में एक ही भाषा बोली जाती है और जहां तक उड़ीसा का संबंध है, वहां भी प्रचलित भाषा उड़िया है। इसलिए जहां तक इन राज्यों का संबंध है वे पहले ही भाषाई आधार पर हैं। परन्तु थोड़ा बहुत सामंजस्य दक्षिण और बम्बई में करना पड़ेगा। बम्बई में महाराष्ट्र, कर्नाटक और गुजरात शामिल हैं। मुझे नहीं मालूम कि क्या गुजरात को सौराष्ट्र से मिलाया जा सकता है। गुजरात और सौराष्ट्र एक साथ मिलाये जा सकते हैं और उन्हें महा सौराष्ट्र या महा गुजरात का नाम दिया जा सकता है। इसके बावजूद कुल राज्यों में केवल एक राज्य और जोड़ा जायेगा। आज बम्बई, मध्य प्रदेश और मद्रास ही ऐसे राज्य हैं जिनका उस तरीके से बंटवारा हो सकता है। पहले ही ऐसे कई राज्य हैं और हम इनमें केवल दो और जोड़ दें तो सारा देश भाषाई आधार पर विभाजित हो जायेगा। हमें इस धारणा को दिमाग से निकाल देना चाहिए कि हम बहुत से राज्य बनाकर देश को छोटे-छोटे राज्यों में विभाजित कर रहे हैं और हम अपने देश को उसी स्थिति में ला रहे हैं जो बहुत पहले थी अंग बंग, कलिंग, विदर्भ आदि—काफी पहले पचास रिसायतें थीं परन्तु यदि भाषाई आधार पर पुनर्गठन होना भी चाहिए तो भी हम देश में एक या दो और बहुत से बहुत तीन नये राज्यों को ही और मिला सकते हैं। उदाहरण के लिए बंबई/कर्नाटक का हिस्सा मैसूर और कुर्ग में मिलाया जा सकता है

*भाषाई राज्यों के बारे में प्रस्तुत संकल्प पर हो रहे वाद-विवाद में भाग लेते हुए, संसदीय वाद-विवाद, 12 जुलाई, 1952, खण्ड III, 1952 कॉ॰ 3688—94.

ताकि समभाषी कर्नाटक राज्य बनाया जा सके जिसमें मैसूर तो पहले से ही राज्य है इसलिए हम राज्यों की कुल संख्या में कुछ और नहीं जोड़ेंगे। जहां तक महाराष्ट्र का संबंध है यह एक नया राज्य होगा। मुझे आशा है कि वह कुछ समय के लिए महा विदर्भ छोड़ देंगे। मुझे आशा है कि महा विदर्भ महाराष्ट्र के साथ जायेगा क्योंकि वहां की भाषा एक है। मेरे मित्र डा० देशमुख की यह धारणा है कि उनके पास इसे तत्काल विभाजित करने का अधिकार है—उन्हें इस भ्रांति में नहीं रहना चाहिए। शेष मध्य प्रदेश की समस्या के हल का अर्थ है पानी को पानी के साथ मिलाना उदाहरण के लिए बुन्देल खण्ड को उत्तर प्रदेश के साथ मिलाना। यह बहुत आसान लगता है कि हम बैठकर देश को भाषाई आधार पर विभाजित कर दें, परन्तु भाई और भाई के बीच एक हिन्दी भाषी क्षेत्र और दूसरे हिन्दी भाषी क्षेत्र के बीच जरा अंतर को तो देखिये और उस कठिनाई का अंदाज लगाइये जो इसके परिणामस्वरूप पैदा होगी। मैंने अपने मित्र सेठ गोविंद दास का उस समय समर्थन किया था जब उन्होंने कहा था कि उत्तर प्रदेश के एक हिस्से को महाकौशल के उत्तरी हिस्से में मिला लिया जाये ताकि उत्तर प्रदेश जैसा ही एक बड़ा हिन्दी भाषी राज्य बनाया जा सके।

हम दक्षिण के रहने वाले लोगों को डर है। यदि सम्पूर्ण महाकौशल उत्तर प्रदेश में मिल जाता है तो उत्तर प्रदेश एक ऐसा बड़ा राज्य हो जायेगा कि हम सब इसके सामने उपेक्षित से हो जायेंगे। चाहे यह एक भाषाई राज्य क्यों न हो, फिर भी हम इतने बड़े भाषाई राज्य से बहुत अधिक डरे हुए हैं जिसके कारण दक्षिण के छोटे राज्यों की उपेक्षा हो जायेगी।

केरल में केवल एक ही जिला मालाबार है जो मद्रास राज्य में है और इसे बड़ी आसानी से ट्रावनकोर-कोचीन के साथ मिलाकर एक समान उस राज्य का अंग बनाया जा सकता है।

अतः मैं आंध्र की चर्चा करता हूं। आंध्र का दावा शेष राज्यों के दावों से एकदम अलग है। पहले उड़ीसा को एक ओर से बिहार से और दूसरी ओर से आंध्र से अलग किया गया था, परन्तु अभी तक कोरापत और सीमावर्ती कुछ क्षेत्र जिसके बारे में दावा किया जाता है कि वे तेलुगु हैं और जहां अधिकांश लोग तेलुगु भाषी हैं उड़ीसा में मिला दिये गये हैं। इसलिए यह गड़बड़ी अभी तक भी चल रही है। उदाहरण के लिये बिहार और बंगाल के बीच की सीमा। मैं बंगालियों की इस मांग से सहमत हूं कि बिहार का पूर्वी हिस्सा बंगाल में मिलाया जाना चाहिए यह एक तर्कसंगत मांग है। यदि एक बड़े क्षेत्र के वे लोग जो एक खास भाषा बोलते हैं, अपना स्वयं का प्रशासन चाहते हैं तो अल्प भाषाई लोगों पर उन्हें अपनी इच्छा थोपने का क्या अर्थ है और इस बात पर लगातार जोर

दिये जाते रहने की क्या तुक है, इस तथ्य के होते हुए भी कि वे एकदम अलग भाषा बोलते हैं यह अनुचित है। इसलिए हमें अपने काम के प्रति ईमानदारी बरतनी चाहिए। यदि हम भाषा के आधार पर क्षेत्रों को बांटना चाहते हैं तो सीमावर्ती छोटे-छोटे क्षेत्रों को जिनकी भाषा एक दम अलग है, अलग कर देना चाहिए, हमें उन्हें हड़पने का प्रयास नहीं करना चाहिए और हमें उन पर अपनी इच्छा केवल इसलिए नहीं थोपना चाहिए कि वह क्षेत्र हमारे क्षेत्र का बड़ा बनाने के लिए आवश्यक हैं। यह बात एक ओर तो उड़ीसा और आंध्र के बारे में तथा दूसरी ओर पश्चिम बंगाल और बिहार के बारे में लागू होती है।

मैं उन अनेकों समस्याओं के विषय में सोचकर कांप उठता हूं जिनका सामना इस प्रश्न को हल करने के मामले में हमें करना पड़ेगा। यदि हम तत्काल ही इस देश को भाषाई क्षेत्रों में बांटना प्रारम्भ कर दें तो कठिनाईयां पैदा हो जायेंगी। मुझे मालूम है कि कुछ समय पहले मालाबार से केरल के लोगों में एक "ऐक्य केरल" अर्थात् एक संगठित केरल की इच्छा थी। ट्रावनकोर स्वतंत्र था और इसी तरह कोचीन भी हालांकि उनके पास संसाधन बहुत ही कम थे, परन्तु, अब जब एक बार वह मिलकर एक हो गये हैं तो उनके स्थायी मतभेद एक दूसरे से लड़ने की सीमा तक पहुंच गये हैं और कोचीन तथा ट्रावनकोर के बीच विद्रोह की स्थिति पैदा होती जा रही है। वे कहते हैं कोचीन को पूरा प्रतिनिधित्व नहीं मिला कोचीन को कई तरह की कठिनाइयां उठानी पड़ रही हैं। मैंने समस्या का अध्ययन करने की कोशिश की। कोचीन एक स्वतंत्र प्रांत था। उसकी अपनी समस्यायें थीं, उसके अपने मंत्री आदि थे। परन्तु उन्हें ट्रावनकोर-कोचीन विधान सभा में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं दिया गया और इसीलिए वहां परेशानी पैदा हो गई।

इसी तरह मेरी आशंका है कि यदि आज हम भाषाई आधार पर विभाजन प्रारम्भ कर दें तो बहुत सी समस्यायें पैदा हो जायेंगी। इसलिए मेरा सुझाव यह है कि आपके इस विचार को देश के अन्य सभी राज्यों के संबंध में व्यक्त किया जाना चाहिए और लोगों के दिमाग में इसे बैठाना चाहिए। यह एक कदम है जो हमने इस संबंध में उठाया है। इस संकल्प को काफी समर्थन मिला है। दूसरी ओर जो भी इसका विरोध करता है वह इस सिद्धान्त का विरोध नहीं करता कि भाषाई आधार पर विभाजन उचित या वांछनीय नहीं है। परन्तु हमें उन दशाओं के बारे में विचार करना है जो आज देश में व्याप्त हैं। धार्मिक आधार पर देश के विभाजन के पश्चात् हम सम्पूर्ण देश को एक राष्ट्र के रूप में संगठित करने की कोशिश कर रहे हैं। यदि हम इसे भाषाई आधार पर बांटते हैं तो क्या ऐसा करने के लिए यह उचित समय है? हमारी सीमाओं पर अनेकों समस्यायें हैं। अंतर्राष्ट्रीय स्थिति भी पूरी तरह स्पष्ट नहीं है; एक सप्ताह तो ऐसा लगता है कि युद्ध के बादल छंट गये हैं और दूसरे ही सप्ताह लगता है कि यह फिर गहरा गये हैं। यदि कोई संघर्ष पैदा होता है तो क्या हमें ऐसी छोटी-छोटी बातें के लिए झगड़ते रहना चाहिए? क्या एक जिले

को इधर रखकर दूसरे को उधर रखकर और देश को भाषाई आधार पर विभाजित करके लड़ते रहना चाहिए? इस तरीके से तो और भी समस्यायें पैदा हो सकती हैं। इसलिए मैं उन माननीय सदस्यों से अपील करता हूं जिन्होंने इन कारणों पर विचार करने के लिए यह संकल्प प्रस्तुत किया है। इस समय ब्रिटिश शासन जैसी स्थिति नहीं है जिसे स्वीकार किया भी जा सकता है और नहीं भी। यदि आज यह संकल्प इस तरह लोकतांत्रिक संसद् द्वारा पास कर दिया जाता है तो इसे सरकार को स्वीकार करना ही पड़ेगा और इसे लागू करना पड़ेगा या फिर अपना पद छोड़ना पड़ेगा। इसलिए यह माननीय सदस्य जिन्होंने यह संकल्प प्रस्तुत किया है कृपया इस पर विचार करें और कृपा करके इस बात पर भी विचार करें कि क्या भाषाई विभाजन संबंधी कार्य के लिए यह उपयुक्त समय है। वास्तव में यह हमारी आशा से भी अधिक शीघ्र पास हो सकता है जबकि हमारे बहुत से वृद्ध लोग जीवित हैं और उन्हीं के सामने हम इस आधार पर देश को विभाजित करके बहुत से कठिन समस्याओं को समाप्त कर सकते हैं। मुझे उड़ीसा के तेलुगु भाषियों से और बिहार में बंगालियों से भरपूर सहानुभूति है। यह एक ऐसा मसला है जिसे किसी दिन सुलझाया जाना आवश्यक है परन्तु आज इसके लिये उचित समय नहीं है।

आंध्र के बारे में भी मुझे कहना है बशर्ते मेरे प्रति यह गलत धारणा न बना ली जाये कि मेरा आंध्रवासियों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण नहीं है मैंने 1938 में आंध्र महासभा की अध्यक्षता की थी और एक अलग आंध्र प्रांत के गठन की मांग की थी। आंध्र प्रांत आसानी से बनाया जा सकता है। संयुक्त हिन्दु परिवार में भाई-भाई प्रेम से और बिना किसी परेशानी के साथ-साथ रहते हैं और जब तक कि उनकी पत्नियां झगड़ा न शुरू कर दें, एक दूसरे से अलग नहीं होना चाहते और उस दिन को याद करो जब चूल्हे पर बर्तन चढ़ा हुआ हो चावल आधे पके हुए हों, छोटा भाई आता है और बर्तन तोड़ देता है। आज दक्षिण भारत में आंध्रवासियों और तमिलवासियों के बीच ऐसी ही स्थिति है। बड़ा भाई बर्तन तोड़ता है, मैं मानता हूं कि छोटा भाई ऐसा नहीं करता।

* * * *

आंध्र प्रांत के लिये यह आंदोलन लगभग चालीस वर्ष पुराना है। हैदराबाद का कुछ भाग लेकर और इसे आंध्र प्रांत में मिलाकर विशाल आंध्र न भी बनायें तब भी आंध्र प्रदेश यदि इसे बना दिया जाता है, तो आर्थिक रूप से एक सक्षम प्रांत होगा। इस बात को कांग्रेस द्वारा विभिन्न मंचों से स्वीकार किया जा चुका है और मद्रास विधान परिषद ने भी कई बार संकल्प पारित किये हैं और आंध्र प्रांत दो वर्ष पहले बनने ही वाला था। इस प्रश्न पर यह बात टूट गई कि मद्रास शहर आंध्र का हिस्सा बने या नहीं या इसे दो भागों में बांट दिया जाये एक भाग तमिलनाडु को चला जाये और दूसरा भाग आंध्र को। दूसरा विकल्प था कि मद्रास शहर को एक अलग मुख्य आयुक्त प्रांत में बदलना। हम, आंध्र

के संसद सदस्य इस बात पर सहमत हो गये कि हमें इस समय मद्रास शहर के बारे में चिंतित नहीं होना चाहिए। यह मद्रास राज्य में से बनाया जा सकता है जो एक मिला जुला प्रांत है जिससे आंध्र के भाग, केरल के भाग और कन्नड भाग तथा तमिलनाडु शामिल हैं। हमने कहा कि उस मिले जुले प्रांत को रहने दिया जाये और इसमें से आंध्र के जिले निकाल लिये जायें और इन्हें आंध्र प्रांत में परिवर्तित कर दिया जाये। दुर्भाग्यवश, हमारे कुछ मित्रों ने अनशन कर दिया और उनके अनशन से इस मामले में सहायता तो मिली ही नहीं बल्कि यहां स्थिति बिगड़ गई। कुछ अन्य मित्र मद्रास गये और कहा कि "मद्रास शहर हमारा है; मद्रास शहर हमारा है।" आंध्र के कुछ लोग मद्रास की सड़कों पर यह कहते हुए निकल आये कि मद्रास शहर हमारा है। तमिलों की आवाज भी कम नहीं रही जो ज्यादा जोर से चिल्लाने लगे कि मद्रास शहर केवल उन्हीं का ही है। यही कठिनाई है। हम इस मामले की जांच करना चाहते हैं और यथाशीघ्र प्रांत बनाना चाहते हैं और मद्रास शहर का प्रश्न बाद में उठाना चाहते हैं। मद्रास कहीं नहीं जायेगा। क्या यह बंगाल की खाड़ी में गायब हो जायेगा? यदि आंध्र प्रांत बन गया तो हम बेहतर स्थिति में होंगे और केन्द्रीय सरकार पर दबाव डालने के लिये हमारा अपना राज्यपाल होगा, हमारे अपने मंत्री होंगे। और हम यह कह सकेंगे कि मद्रास का एक भाग हमें मिलना चाहिए या मद्रास शहर को एक अलग मुख्य आयुक्त प्रांत बनाया जाना चाहिए। परन्तु वहां हमारे मित्रों में धैर्य था ही नहीं।

बीच में, रायलसीमा के जिलों में अकाल पड़ गया। पिछले चार-पांच वर्षों तक वहां अकाल की स्थिति रही। वहां स्थिति बहुत खराब हो चुकी है। वहां के लोग इस मामले पर कुछ उत्तेजित हो चुके हैं। इसलिए वे मद्रास प्रांत का बंटवारा नहीं चाहते, क्योंकि यदि आंध्र प्रांत बन गया तो यह बहुत छोटा प्रांत बनेगा और रायलसीमावासियों को यह आशंका है कि रायलसीमा के विकास के लिये पर्याप्त धनराशि उपलब्ध नहीं होगी। इसके बावजूद मद्रास शहर रायलसीमा के बहुत पास है और यदि मद्रास शहर नये आंध्र प्रांत की राजधानी नहीं बनता तो उन्हें एक कोने से या अनन्तपुर आदि से बिजवाड़ा तक 200 अथवा 300 मील तक का फासला तय करना पड़ेगा। आंध्र प्रांत के तत्काल निर्माण के विरुद्ध कहीं-कहीं विचार व्यक्त किये जा रहे हैं, हालाकि मैं यह नहीं कहता कि रायलसीमावासी अंततः सहमत नहीं होंगे। यह मसला केवल एक उसी व्यक्ति के द्वारा ही हल नहीं होगा जो अनशन पर बैठा हुआ है। इस मामले को शांतिपूर्वक सुलझाना पड़ेगा। यहां तक कि राजाजी ने भी कल कहा था कि वह आंध्र प्रांत के विरुद्ध नहीं हैं। प्रधान मंत्री ने बताया है कि आंध्र प्रांत के गठन का इस कारण एक अलग आधार है कि यह आंदोलन काफी समय से चल रहा है। आंध्र के सदस्यों को चाहे वे सदन में हों या सदन से बाहर, एक होकर एक स्वीकृत फार्मूला तैयार करना चाहिए और मद्रास शहर को आंध्र

प्रांत में तत्काल मिलाने पर जोर नहीं देना चाहिए। हमें यह नहीं कहना चाहिए कि सम्पूर्ण मद्रास शहर आंध्र प्रांत का हिस्सा बना दिया जाये। ऐसा कभी नहीं हो सकता। इसलिए यदि मद्रास थोड़ा आंध्र का और थोड़ा तमिलों का हो जाये तो यह बेहतर होगा या उसे मुख्य आयुक्त के प्रांत में परिवर्तित कर दिया जाये या तीसरा विकल्प यह है कि इसे दक्षिण भारत या तमिलनाडु में मिला दिया जाये।(डा० लंका सुन्दरमः जी हां)।अब हमें अन्य दो विकल्पों की सम्भावनाओं पर विचार करना चाहिए। यदि ऐसा कर दिया जाये तो मुझे विश्वास है कि प्रधान मंत्री हमारे अनुरोध पर अवश्य ध्यान देंगे और भाषीय राज्यों के निर्माण के आम सवाल से हटकर आंध्र प्रांत का निर्माण कर देंगे।

वर्तमान संकल्प सामान्य प्रकार का है और मुझे खेद है कि मैं इसे पारित करवाने से सहमत नहीं हो पाऊंगा।

6

व्यापार और वाणिज्य

विदेश व्यापार*

मैं इस विधेयक का स्वागत करता हूं लेकिन इसका पूरे दिल से समर्थन नहीं करूंगा क्योंकि इसका कारण यह है कि इसके नियंत्रण कार्यकरण की व्यवहारिकता से मैं संतुष्ट नहीं हूं। फिर भी मैं समझता हूं कि इस विधेयक की आवश्यकता है। इन नियंत्रणों द्वारा समुचित रूप से बिल्कुल भी कार्य नहीं किया गया है और जब तक कोई गारंटी नहीं दी जाती है, और इस विधेयक के अंतर्गत सरकार को प्रदत्त की जाने वाली शक्ति का समुचित उपयोग करने के लिए कठोर कदम नहीं उठाये जाते हैं, तब तक हम समाज के गरीब वर्गों पर सादगी से मानदंड लागू करते रहेंगे और अमीर व्यक्तियों को मनमर्जी से रहने देंगे। यदि आज प्रतिकूल व्यापार संतुलन है तो यह अमीर वर्ग के लोगों द्वारा उच्च ढंग से रहने के कारण अधिक है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि पिछले एक वर्ष अथवा दो वर्षों के दौरान हमें विदेशों से अनाजों का भी आयात करना पड़ा है लेकिन इसकी कमी सन् 1939 से पहले भी थी। 1939 से पहले हम बर्मा से 1.5 लाख टन चावल का आयात करते थे। भारत के दक्षिण भाग, विशेष रूप से मद्रास और अन्य क्षेत्र बर्मा, स्याम (थाईलैंड) और अन्य देशों से आयातित चावल पर ही निर्भर थे। यह विभाजन से पहले की बात है। जहां तक खाद्यान्न का संबंध है विभाजन के पश्चात् इसकी स्थिति और भी गंभीर और पेचीदा हो गई है। पंजाब में गेहूं और सिंध में चावल उत्पादन क्षेत्र अलग हो गये हैं। अन्य कच्ची सामग्री जैसे लम्बे रेशे वाली कपास जिसका उत्पादन पश्चिम पंजाब में किया जाता था, के उत्पादन क्षेत्र भी चले गये हैं। अनेक मूल्यवान फसलें जो पूर्वी पाकिस्तान में एकाधिकारस्वरूप उगाई जाती थी, के क्षेत्र भी अलग हो गये हैं। विभाजन के पश्चात् हमारी स्थिति और भी खराब हो गयी है। जहां तक अनाजों का संबंध है यदि इनका आयात नहीं किया जाता तो अनेक लोग इन वर्षों के दौरान भूखे मर गए होते।

---

* वाणिज्य मंत्री श्री के॰ सी॰ नियोगी द्वारा प्रस्तुत आयात और निर्यात (नियंत्रण) संशोधन विधेयक, 1950 पर वाद-विवाद में भाग लेते हुए। संसदीय वाद-विवाद, 22 फरवरी, 1950, खंड-1, भाग-2, पृष्ठ 722—728

अनाजों के लिए अत्यधिक लागत पर सहायता देने के साहसिक कदम उठाने हेतु सरकार को बधाई दी जानी चाहिए लगभग 130 करोड़ रुपये मूल्य के अनाजों का इन वर्षों के दौरान वार्षिक रूप से आयात किया गया है और इन आयतित अनाजों का इस देश में खरीददारों के लिए मूल्य घटाने के लिए सहायता के रूप में 25 करोड़ रुपये दिये गए हैं। आदरणीय प्रधानमंत्री ने कहा है कि मार्च, 1951 के पश्चात् वह देश में चावल के आयात की अनुमति नहीं देंगे। हम यह मानते हैं कि वह अपनी बात पर दृढ़ रहेंगे। इसका तात्पर्य यह है कि यद्यपि इस देश में चावल का पर्याप्त मात्रा में उत्पादन नहीं होगा लेकिन वो यह चाहते हैं कि लोग अपनी खपत सीमित करें। सबसे अधिक गरीब वर्ग के लोग ही चावल अथवा अनाज खाते हैं। जबकि समाज के समृद्ध वर्ग के लोग अन्य वस्तुओं पर अधिक निर्भर रहते हैं, इसलिए केवल गरीब वर्ग के लोग ही अधिक प्रभावित होंगे। निर्धन वर्ग के लोगों द्वारा इस बलिदान के लिए अमीर वर्ग के लोगों द्वारा क्या किया गया है। क्या यह आवश्यक है कि हमें उन वस्तुओं का अमीरों के लाभ के लिये आयात करना चाहिए जो प्रत्यक्षतः आवश्यक वस्तुयें हैं, लेकिन आने वाले कुछ समय के लिए जब तक ही हम अपने भुगतान संतुलन की स्थिति ठीक करें, तब तक हम इन्हें विलासिता की वस्तुएं समझें। वर्ष 1948-49 में हमारा आयात 518 करोड़ रुपये का था और निर्यात 422.82 करोड़ रुपये का था और भुगतान हमारे प्रतिकूल था जो कि 95.17 करोड़ रुपये था। खाद्यान्न के अन्तर्गत हमारे ऊपर 4.43 करोड़ रुपये, कच्ची सामग्री के लिए 28.29 करोड़ रुपये उत्पादित वस्तुओं के लिए 59.73 करोड़ रुपये का ऋण बकाया है इन सभी मदों के संबंध में हमें अपने निर्यात की आय से भी अधिक राशि की विदेशों की देनदारी है। अलग-अलग देशों के रूप में इंगलैंड के साथ हमारे समुद्री व्यापार वर्ष 1948-49 में अप्रैल से सितम्बर के दौरान 152.13 करोड़ रुपये का आयात किया गया और 90.26 करोड़ रुपये का निर्यात किया गया और हमारी ओर 53.87 करोड़ रुपये का बकाया ऋण था। हमने समग्र रूप से इसी अवधि के दौरान राष्ट्रमंडल देशों से 245.78 करोड़ रुपये मूल्य का आयात किया और इसकी तुलना में स्टर्लिंग और सोफ्ट करेंसी वाले देशों को 218.35 करोड़ रुपये का निर्यात किया गया। इसके बावजूद भी हमारा 27.43 करोड़ रुपये का प्रतिकूल व्यापार संतुलन है।

हम सभी दूसरे देशों को समग्र रूप से लेते हैं। इसमें भी 1948-49 के दौरान अप्रैल से अक्तूबर 1949 में 95.18 करोड़ रुपये का प्रतिकूल व्यापार संतुलन था। मैंने इन आंकड़ों को रिजर्व बैंक द्वारा प्रकाशित बुलेटिन से लिया है। उन्होंने ये आंकड़े अक्तूबर 1949 के अंत में प्रकाशित किए थे। मैंने मासिक आंकड़ों को दर्शाने वाला चार्ट जो ग्रंथालय में रखा जाता था की व्यर्थ में ही खोजबीन की जिसमें भारत सरकार

के आर्थिक सलाहकार, जो स्पष्टतः वाणिज्य विभाग के अंतर्गत कार्य करते थे, द्वारा तैयार किया जाता था और उसमें आंकड़े होते थे। वह अब उपलब्ध नहीं है।

विदेशों के संबंध में आंकड़े अप्रैल से अक्तूबर, 1949 के लिए हैं, निर्यात के संबंध में 212 करोड़ रुपये और आयात के संबंध में 370 करोड़ रुपये हैं और इस प्रकार प्रतिकूल व्यापार संतुलन 157.25 करोड़ रुपये का है। 1948 में ही पाकिस्तान के साथ हमारा व्यापार 41 करोड़ प्रतिकूल संतुलन के रूप में समाप्त हुआ। मैंने अप्रैल से अक्तूबर 1949 के आंकड़ों का उल्लेख किया है। जिसमें पाकिस्तान के आंकड़े शामिल नहीं थे। 1948 में पाकिस्तान के साथ विदेश व्यापार के रूप में हमारा 20.43 करोड़ रुपये का व्यापार संतुलन हमारे पक्ष में था। अप्रैल से अक्तूबर 1949 के दौरान यह घटकर 2.23 करोड़ रुपये का हो गया था। इस समय व्यवहारिक रूप से उनके साथ हमारा कोई व्यापार संतुलन नहीं है। हम यह मानते हैं कि खाद्यान्न का आयात नहीं किया जाता है। इसके बावजूद भी जब तक हम स्वयं को सादगी में न रखें, जब तक हम कम खपत और अधिक निर्यात न करें, तब तक यह संभव नहीं है। मैं अपेक्षा करता हूं कि इस सभा का प्रत्येक सदस्य, वाणिज्य मंत्री और उसके सभी अधीनस्थों को यह कहना चाहिए कि खपत कम करो। अधिक उत्पादन करो। और अधिक निर्यात करो। मैं आपसे पूछता हूं कि क्या आपको देश की स्थिति की जानकारी है। मैं हाल में ही मुजफ्फरनगर, मुरादाबाद और अन्य स्थानों पर गया था। मैंने देखा कि बच्चों को सुबह चपातियां दी जाती हैं दोपहर को भी चपातियां दी जाती हैं और शाम को भी चपातियां ही दी जाती हैं और रात्रि को भी चपातियां ही दी जाती हैं। चपातियां भी किसकी बनी होती हैं? ज्वार की बनी होती हैं।

इन चपातियों के अतिरिक्त उन्हें और क्या मिलता है? क्या उन्हें सब्जी या दाल की तरह की कोई अन्य चीज मिलती है? मुझे नहीं मालूम? ऐसी हालत देश के इन भागों की है। दक्षिण में हमारे भाग में हम ठंडे चावल, पके हुए चावल ठंडे पानी के साथ लेते हैं और उसके साथ केवल चुटकी भर नमक ही लेते हैं। बच्चे अपनी मां के इर्द गिर्द बैठ जाते हैं और प्याले के आकार की ओक बना लेते हैं। उनके पास प्याले नहीं हैं। उत्तर भारत में हो सकता है आप लोगों के पास हों। हमारे बच्चों को यही ठंडे चावल और चुटकी भर नमक प्राप्त होता है। हमारे क्षेत्र के निर्धन लोगों के लिए यही एक स्वादिष्ट व्यंजन है। दोपहर के भोजन में कुछ पके हुए चावल और उसी प्रकार का भोजन ठण्ड में भी शाम को दिया जाता है। यह उनका जीवन स्तर है। अब आप इन लोगों से कहते हैं कि वे सादगी से रहें। ऐसा किस प्रकार किया जा सकता है? जेल के दौरान हमें खाने के लिए 16 औंस मिलता है जबकि बाहर कुल 8 औंस मिलता है। इसके बावजूद गांव में एक सामान्य आदमी कठिन मेहनत करके अपने शरीर और मस्तिष्क को बिना भूखों मरे

ठीक रखता है। मुझे ऐसे अनेकों निर्धन परिवारों की जानकारी है और अनेकों मध्यम वर्ग परिवारों की भी जहां दिन में माता-पिता बिना खाना खाये रहते हैं ताकि उनके बच्चों के लिए भोजन बच सके। माता-पिता उनके लिए भोजन तक का विलास छोड़ देते हैं। यदि वे खाना खा लें, तो बच्चों को भूखों रहना पड़ता है। हमारे देश में बच्चे राष्ट्र की सम्पत्ति नहीं रह गये हैं। यद्यपि अनेक देशों में वे राष्ट्र का गौरव और उनकी सम्पत्ति हैं। मैं इस बात से सहमत हूं कि जब तक हम पर्याप्त मात्रा में अन्न का उत्पादन नहीं करेंगे तब तक हमें कम और उससे भी कम खाना खाना पड़ेगा। किन्तु स्थिति में सुधार के लिए क्या प्रयास किये जा रहे हैं? आप इस सभा में आए हैं और हमसे पूछ रहे हैं कि सादगी अपनायें। मैं आपसे पूछता हूं कि क्या हम इतनी अधिक संख्या में मोटरकारें रखना छोड़ नहीं सकते? हमारे पास कितनी कारें हैं, उनकी संख्या को देखें। हाल ही में अब कुछ अमरीका के लोग यहां अपने लिए कुछ सामान खरीदने आए तो उन्होंने हमें और हमारी परिस्थितियों को देखा और इस देश में नई विदेशी पूंजी के आयात की परिस्थितियों को देखा; यह बताया गया कि उन्होंने कहा कि इस देश में स्पष्टरूप से समृद्धि है। यहां पर सर्वत्र धनवान लोग हैं। हमारी स्थिति वस्तुस्थिति जैसी नहीं है। एक धनवान व्यक्ति के पास 4 मोटरकारें हैं और वह एक महल में रहता है। जबकि दूसरे देशों में धनवान व्यक्ति भी सादगी से रहते हैं। जबकि हमारे देश में एक धनवान के पास 4 नौकर होते हैं और दूसरे देशों में उदाहरण के लिए इस देश के भूतपूर्व वाइसराय इंगलैंड में एक केबिन में रहते हैं और उसके पास कोई नौकर नहीं है । भोजन की टेबल पर वे स्वयं ही परोसते हैं और अपने मेहमानों से भी कहते हैं वे स्वयं ही परोसें। पश्चिम के देशों में ऐसी स्थिति है। क्या हमारे देश का धनवान वर्ग भी अपने कुछ नौकरों और कुछ मोटरों से छुटकारा पा सकते हैं? क्या हमारे पास इतनी मोटरकारें होनी चाहिएं? प्रतिकूल व्यापार संतुलन के बावजूद मैं देखता हूं कि देश में मोटरकारों की संख्या बहुत अधिक है। उदाहरण के तौर पर देश में साइकिलों की संख्या 4 करोड़ है।

* * * *

मोटरकारों के संबंध में यह आंकड़े 2.14 करोड़ रु०, लुबरिकेटिंग आयल्स और अन्य आयल्स के लिए 90 लाख रु० ईंधन तेल के लिए, 8.06 करोड़ रु० अन्य लुबरिकेटिंग आयल्स के लिए, 4.65 करोड़ रु० और कुल मिलाकर 13 करोड़ रु० का आयात किया गया है। 6 करोड़ 31 लाख रु० मूल्य का पेपर और पुस्तकों का जिनमें अनुपयोगी पुस्तकें भी होती हैं; आयात किया जाता है। यह प्रतीत होता है कि हम कुछ समय तक इन वस्तुओं की व्यवस्था नहीं कर सकते। क्या हम वास्तव में उनके बिना कार्य नहीं चला सकते? वास्तव में खूनी युद्ध समाप्त हो चुका है लेकिन एक भिन्न प्रकार का और एक बहुत ही

वास्तविक युद्ध इस समय चल रहा है। भूख और अकाल इस देश में प्रत्येक स्थान पर व्याप्त है। धनवान व्यक्ति को छोड़कर संभवतः इसे सभी जानते हैं। निर्धन व्यक्ति की कोई नहीं सुनता। धनवान व्यक्ति पूर्णतः आराम से रह रहा है। और ऐसा प्रतीत होता है कि वह मनमाने ढंग से जी रहा है। हम क्या पाते हैं? ओपन जनरल लाइसेंस द्वारा इस देश को निर्यात करने के लिए विदेशों को आमंत्रण है। पीढ़ियों से आपने सुना है कि यूनाइटेड किंगडम का वस्तुओं के व्यापार में कभी भी अनुकूल व्यापार संतुलन नहीं रहा है। यह सभी जानते हैं। इंग्लैंड कम निर्यात करता है और खाद्य और वस्तुओं के रूप में अधिक मात्रा में आयात करता रहा है लेकिन वह अपनी स्थिति बनाये हुए हैं। वह दूसरे देशों में विभिन्न सेवाओं जैसे बैंकिंग, बीमा, नौवहन और अन्य द्वारा पूंजी निवेश करके घाटे को पूरा करता है। यह अदृश्य निर्यात है। इस प्रकार वह अपनी पूर्ति करता रहा है। युद्ध के दौरान उसे एक के पश्चात् एक पर अपना कब्जा छोड़ना पड़ा और अब वह अन्ततः प्रतिकूल संतुलन के रूप में समाप्त हुआ है। लेकिन सर स्टेफोर्ड क्रिप्स और उनकी सरकार के विभिन्न कार्य होने के कारण उन्होंने एक प्रतिकूल संतुलन को अनुकूल संतुलन में परिवर्तित कर दिया है। निर्यात में वृद्धि हुई है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए वे उत्सुक रहे हैं कि इस देश को अधिक से अधिक निर्यात किया जाये। लेकिन पूंजीगत माल का निर्यात करने के बजाय जिसकी हमें अत्यधिक आवश्यकता है, उन्होंने अन्य वस्तुओं का निर्यात किया है ताकि वे स्वयं को सुस्थापित कर सकें। मैंने यह वाणिज्य मंत्रालय से सुनिश्चित किया है, संभवतः यह स्वयं वित्त मंत्री द्वारा ओपन जनरल लाइसेंस की अनुमति दी गई ताकि सीमाशुल्क और आयात शुल्क में वृद्धि हो और एक संतुलित बजट तैयार किया जा सके। अर्थात् हम अपनी सुरक्षित मूल्यवान मुद्रा स्टर्लिंग और डालर द्वारा विदेशों से वस्तुएं खरीदते हैं ताकि इसके बदले हम सीमाशुल्क के रूप में लगभग दसवां भाग प्राप्त कर सकें। महोदय, इससे मुझे अपने क्षेत्र की एक घटना याद आती है। विनायक पूजा दिवस को अर्थात् चतुर्थी को किसी व्यक्ति ने गुड़ से विनायक अथवा भगवान गणेश की मूर्ति बनाई और भगवान को निवेदयाम भेंट करने के लिए मूर्ति के निचले हिस्से से चुटकी भर गुड़ लिया और उसे भगवान को चढ़ा दिया। हम यहां पर ऐसा करते हैं। यह वास्तव में आश्चर्यजनक बात है कि युद्ध के वर्षों में हमारे पसीने और खून से एकत्रित डालर और स्टर्लिंग के भण्डार को सीमाशुल्क प्राप्त करने के लिए व्यय कर रहे हैं। महोदय हम क्या देखते हैं? पिछले चार महीनों में चार प्रकार के लाईसेंस जारी किये गये हैं। इसके लिए सामान्य लाईसेंस था, इसके बाद इसे थोड़ा सा बंद लाईसेंस और उसके बाद बंद लाईसेंस था और अंत में फिर से खुला हुआ लाईसेंस है। वास्तव में, इसमें हैरानी की बात नहीं कि बेचारा व्यापारी यह नहीं जानता कि वह क्या करे, उसे क्या मिल

सकता है और उसे क्या नहीं मिलेगा। हमारे इलाके में एक अन्य कहावत है—महोदय मुझे छोटी सी कहानी कहने के लिए माफ कर दीजिएगा। कहीं पर एक ऐसा जमींदार था जो लोगों को दान के रूप में जमीन देता रहता था। उसके पास एक ब्राह्मण गया। लेकिन वह जमींदार थोड़े समय के बाद अपनी जमीन वापस लेने के मामले में भी मशहूर था। ब्राह्मण घोड़े पर सवार होकर जमींदार के पास गया और उपहार लेने के बाद वह घोड़े पर उसी तरह से नहीं बैठा बल्कि वह घोड़े पर उल्टा बैठ गया और जब घोड़ा वापस जमींदार के पास गया तो वह ब्राह्मण जमींदार को देखता रहा। जमींदार ने ब्राह्मण से पूछा, "आप मुझे क्यों घूर रहे हैं?" ब्राह्मण ने जवाब दिया, "मैंने सुना है कि आपने जो कुछ सीधे हाथ से दिया है उसे आप उल्टे हाथ से वापस ले लेंगे। यह देखने के लिए कि आप अपनी दान दी हुई चीज वापस लेते हैं या नहीं, इसलिए मैं आपको देख रहा हूं"। ये लाईसेंस प्रायः बड़ी तेजी से दिए गए लेकिन ऐसा लगता है कि इनको देने की कोई नीति या कार्यक्रम आदि नहीं है। यही समय है जब हम बैठ कर इस पर विचार कर सकते हैं। मैं नहीं चाहता कि सबसे गरीब लोगों पर कोई संयम थोपा जाए लेकिन ऊपर से लेकर नीचे तक दिल्ली में जो हर जगह मनोरंजन पर बरबादी होती है, उसे बंद किया जाना चाहिये। यदि हम समझते हैं कि व्यापारी ऐसा करते हैं तो हमें उनके विरुद्ध कुछ करना चाहिए। अन्यथा मैं इन नियंत्रणों आदि के पक्ष में नहीं हूं। ये सब नियंत्रण किस के लिए हैं? क्या ये नियंत्रण लंगोटी वाले भिखारी के लिए हैं और आप चाहते हैं कि वह लंगोटी भी छोड़ दें? यदि आप का अभिप्राय व्यापार से है तो आप इसे ऊपर से शुरू कीजिये; अन्यथा इसे रहने दीजिये। इस नियंत्रण में हमने देखा है कि इसमें कितना भाई-भतीजावाद है। ऐसे भी सुझाव हैं कि कुछ समय के लिए राज्य स्वयं व्यापार करें। कुछ लोगों का कहना है कि यदि सरकार व्यापार करेगी तो निजी उद्योग समाप्त हो जाएंगे। मेरा यह कहना है कि सरकार को थोड़े समय के लिए व्यापार शुरू करना चाहिए, जैसा कि इंग्लैंड ने निगम शुरू किया है। बर्मा चावल का व्यापार कर रहा है तथा अन्य देशों ने बहुत सी परियोजनाएं शुरू की हैं। कुछेक देशों ने कपास आदि का व्यापार शुरू किया है। केवल 150 अंशधारों जोकि पूंजीपति हैं, के लिए सारा देश क्यों कष्ट भोगे और हमारे यहां सभी लोगों का दृष्टिकोण पूंजीवादी है और हर व्यक्ति एक दिन पूंजीपति बनने की आशा करता है और उन्होंने अब पूंजीवादी दृष्टिकोण अपनाना शुरू कर दिया है।

एक ऐसी समिति नियुक्त की जाए जो अनिश्चित काल तक चलती रहे और यह देखना होगा कि यह समिति क्या करती है। सरकार के सभी बड़े विभागों ने यह कहा है कि वे इस शो का आयोजन करने में असमर्थ हैं। क्यों न हम भारत सरकार को किसी निजी आयोग को सौंप दें और उसे इसकी व्यवस्था करने को कहें। मैं इसका उल्लेख यह दिखाने के लिए कर रहा हूं कि निर्यात नियंत्रण का कितना दुरुपयोग किया

जाता है। मैं केवल एक उदाहरण दूंगा। लुंगी, हथकरघे के कपड़े जो दक्षिण भारत में बड़ी मात्रा में बनाया जाता है, के लिए निर्यात परमिट दिए जाते हैं। यह कहा गया था कि परमिट उन लोगों को दिये जाएं जो इस व्यवसाय में पहले से लगे हुए हैं। एक व्यक्ति को बर्मा से व्यापार करने का परमिट दिया गया। परन्तु उस व्यक्ति ने बर्मा से कभी व्यापार ही नहीं किया। इसके लिए एक शर्त यह है कि वह आय-कर देगा। उसने कहा कि उसे आय कर से छूट दी जानी चाहिये। उसने बर्मा से कभी व्यापार नहीं किया परन्तु कहा जाता है कि उसका भाई वहां रहता है और वह 1941 से पहले वहां भाग गया था। जब मैंने मंत्रालय से इसका उल्लेख किया तो यह कहा गया कि "हमने उसे आय कर के भुगतान की छूट दे दी है; उसका भाई बर्मा में था इसलिए इसका औचित्य है। जब मैंने मंत्री महोदय या उनके विभाग को बाद में लिखा तो मुझे बताया गया कि उस व्यक्ति ने और परमिट भी ले लिए हैं। किसी के झूठे हस्ताक्षर किए गए थे और इसकी जांच चल रही है।"

मुझे याद है कि किसी मौके पर डा० अम्बेडकर ने कहा था कि यह अनिवार्य है कि हमें नियंत्रण रखना चाहिए लेकिन इसके साथ-साथ हमें देखना होगा कि इन नियंत्रणों को ठीक तरह लागू किया जाए। उन्होंने इसके लिए एक न्यायाधिकरण का सुझाव दिया जिसके पास अनियमितताओं की शिकायतें की जा सकें। नियंत्रणों को लागू करने में, स्वविवेक की भावना है और स्वविवेक का उपयोग करते हुए वे कभी-कभी ठीक तरह काम करते हैं और कभी-कभी वे गलत काम करते हैं, कभी-कभी सदाशयता से तथा कभी-कभी कदाशयता से काम करते हैं। अतएव प्रशासन के प्रमुख का मनोबल ऊंचा बनाए रखने, प्रत्येक बात को बोर्ड से खुली और बोर्ड से ऊपर तथा पूर्णतया शुद्ध रखने के लिए कोई एजेंसी बनायी जानी चाहिए। नियंत्रण अनिवार्य है परन्तु आप जिस ढंग से नियंत्रण लागू करते हैं उस ढंग को कठोर बनाना चाहिए। मैं नहीं जानता कि आज भी कोई ऐसा काम क्यों नहीं किया गया है। मैं जानता हूं कि माननीय मंत्री मुझे यह बतायेंगे कि एक सेवा निवृत महालेखाकार को शिकायत अधिकारी नियुक्त किया गया था। मैंने जिस क्षण एक शिकायत उनके पास भेजी वह व्यक्ति उस शिकायत से बेखबर था। उसने कहा "मुझे बताइए, श्रीमान जी इस शिकायत का क्या लाभ है।" जो व्यक्ति इतने लम्बे समय से इस लाइन में रहा हो उसे मंत्री अथवा विभागीय सचिव के नाम से भयंकर डर होना चाहिए। वह कुछ नहीं कर सकता है। उच्च पदस्थ स्वतंत्र अधिकारी को इस काम के लिए नियुक्त किया जाना चाहिए बेहतर यह होगा कि वह उच्च न्यायालय का एक न्यायाधीश हो।

रास्ते में ये सब कठिनाइयां हैं और मैं यह नहीं कहना चाहता कि हम सब बोर्ड से ऊपर हैं। प्रलोभनों से बचने के लिए नियम और विनियम बनाए जाते हैं। माननीय मंत्री

यह कह सकते हैं कि मुझे उनके मंत्रालय का कार्यभार ले लेना चाहिए क्योंकि मैं आलोचना कर रहा हूं। बाजा बजाने वाला अपना बाजा बजाता है और जब मैंने उसकी धुन के बारे में टोका तो उसके लिए यह ठीक नहीं है कि अपना बाजा मुझे सौंपने का प्रस्ताव रखे और मुझे बजाने के लिए कहे। अतः मैं यह कहता हूं कि सभी बातों की उचित जानकारी रखी जानी चाहिए और सभी त्रुटियों को दूर किया जाना चाहिए और यदि हम यहां कोई उल्लेख करते हैं तो यह मेरे माननीय मित्र, मंत्री महोदय के खिलाफ नहीं है, जिनकी सत्य निष्ठा, जिनकी क्षमता, जिनकी देशभक्ति की भावना के खिलाफ कोई भी व्यक्ति कोई बात कह सकता हो। उन जैसा अत्यधिक अनुभवी व्यक्ति हमने शायद ही कभी इस सभा में देखा हो। मुझे केवल आशंका है कि वे बहुत ही अच्छे व्यक्ति हैं।

उनका एक उत्तराधिकारी था जो अभी पाकिस्तान गया हुआ है और जिन्होंने ये सब बातें शुरू की थी। ऐसे परमिटों के लिए कमीशन की दर निर्धारित थी। मेरे जन्म स्थान में एक ऐसा मन्दिर है जहां मैं सात रुपये देकर भगवान के दर्शन कर सकता हूं और दस रुपये देकर दूसरी किस्म की पूजा कर सकता हूं आदि आदि। वह भला व्यक्ति मेरे माननीय मित्र का उत्तराधिकारी था, वह उनका तुरन्त उत्तराधिकारी था। मैं जानता हूं कि इस तरह की प्रथा मौजूद थी। एक फिल्म के लिए परमिट लेने हेतु फिल्म कलाकार को उनके घर जाना पड़ता था। इस तरह के दुरुपयोग होते रहे हैं और इन नियंत्रणों ने इन लोगों को ये सभी प्रकार की प्रथाएं शुरू करने के लिए आकर्षित किया। अतएव यह एक ऐसी परम्परा है जिसे मेरे माननीय मित्र, मंत्री महोदय को निभाना पड़ रहा है।

मैं किसी बहुत ही गंभीर—अब की तुलना में अधिक गंभीर—विषय को नहीं उठाना चाहता और मुझे वास्तव में यह दुःख है कि हम अपने आप पर उस तरह के नियंत्रण, उस तरह की पाबंदी नहीं लगा रहे हैं। इंग्लैण्ड ऐसे नियंत्रणकारी अभ्युपाय अपना रहा है। मैंने हाल ही में मित्रों से यह सुना है कि उन्हें वहां पूरे सप्ताह एक अण्डे से ज्यादा नहीं मिलता है। मेरा एक मित्र इंग्लैण्ड गया था और वह एक होटल में रहा था। उसके पास रखी हुई चीनी के फालतू कूपन थे। उसने वे कूपन अपने यूरोपियन मोटर ड्राइवर को देने का प्रस्ताव रखा परन्तु उसने कहा "जी नहीं, हमारे देश में राशन है।" हमें उस तरह का आचरण अपनाना चाहिए। वहां जिम्मेदारी की उच्च भावना मौजूद है। दुर्भाग्यवश यहां ऐसी भावना मौजूद नहीं है और अतः सरकार को इस तरह की भावना पैदा करने के लिए पर्याप्त ध्यान रखना चाहिए। मैं किसी अन्य व्यक्ति के पास जाकर कैसे यह कह सकता हूं कि उसे अपने पास केवल एक ही कपड़ा रखना चाहिए जबकि दिल्ली क्लाथ मिल में उपलब्ध सारा कपड़ा मेरे लिए और परिवार के लिए काफी नहीं है? जब मैं हाल ही में इम्पीरियल होटल गया था तो मैंने वहां यह पाया कि वहां सुबह का नाश्ता, दोपहर को भोजन और सांयकाल चाय आदि दी जाती थी। हम जहां कहीं जाते हैं सुबह का नाश्ता,

दोपहर का भोजन, उसके बाद चाय और रात को खाना मिलता है और हमारे पास पढ़ने के लिए कोई समय नहीं होता है तथा उन सब को हजम करने के लिए बहुत ही कम समय होता है। सभी राजधानियों में ऐसा होता है। कागज के सिवाय कहां पर यह पाबंदी लगाई गई हैं? सिवाय विदेशों को जारी किये जाने वाले बुलेटिनों और भारतीय रिजर्व बैंक की विवरणियों को देश में कठिनाई अथवा घाटे की स्थिति कहां है। भूखी ग्रामीण आबादी की झुग्गी झोपड़ियों के अलावा और कहीं क्या कमी है? गरीब वर्गों के लिये, जिनकी आबादी देश की जनसंख्या का 90 प्रतिशत है, क्या बस इतना ही किया जा रहा है। यदि ऐसा है, तो मैं इस विधेयक के समर्थन में अपना मत नहीं दूंगा। यदि यह केवल कागजों तक ही सीमित रहने वाला विधेयक नहीं है, बल्कि एक कानून है जिसे इसके प्रवर्तन क्षेत्र के प्रभारी अधिकारियों द्वारा पूर्ण गंभीरता से कार्यांवित किया जाना है, यदि हमें यह सुनिश्चित करने के लिये एक न्यायाधिकरण गठित करना है कि शिकायतों को तत्काल स्वीकार किया जाये और यदि मंत्री जी यह सुनिश्चित करायेंगे कि कोई भाई भतीजावाद नहीं होगा, तो मैं इस विधेयक के पक्ष में हूं। ऐसी स्थिति में हमारे आत्मनिर्भर बनने में लगने वाले पांच तो क्या दस वर्षों की अवधि के लिये यह जारी रहे। ऐसा करना आसान है। यह कोई कठिन कार्य नहीं कि हम देश में अधिक अन्न उगायें और उस हद तक अपने आयातों में कटौती कर दें। कम से कम कपड़े के मामले में तो हमारे लिये ऐसा करना जरुरी नहीं है। मैं उद्योग मंत्री जी को इस बात के लिये राजी करने का प्रयत्न कर रहा हूं कि दो-तीन वर्षों तक कपड़े की केवल 20 किस्में ही तैयार की जायें और देश के सभी स्त्री पुरुष केवल उन्हें ही पहनें। केवल इसलिये कि पाकिस्तान ने सप्लाई रोक दी है, मिस्र से 12 करोड़ मूल्य का लम्बे सूती रेशों का आयात मत करिये। क्या हमारे देश की महिलाएं बिना महीन कपड़ों के और पुरुष उत्कृष्ट कपड़े की कमीजों के बिना नहीं रह सकते। वे इनके बिना रह सकें, क्या इसके लिये हम कोशिश नहीं कर सकते।

महोदय दूसरी बात यह है कि दुर्भाग्यवश उद्योग मंत्रालय और वाणिज्य मंत्रालय के बीच कोई तालमेल नहीं है। माननीय मंत्री जी कह सकते हैं कि वे और उनके यह सहयोगी पश्चिम बंगाल के ही होने के कारण अक्सर मिलते रहते हैं। मेरा कहने का अर्थ यह नहीं है।

आप सादगी के मानदण्डों को लागू करते हैं, किन्तु किस प्रकार से। क्या आप वित्तीय अथवा अन्य प्रकार की सहायता दे कर, जैसे कच्चा माल दे कर इस देश में उन वस्तुओं को प्रतिस्थापित कर सकते हैं। क्या हम लिपिस्टिकों के बिना काम नहीं चला सकते? क्या हम देश में केन्ड (डिब्बाबंद) मछलियों के बिना काम नहीं चला सकते। क्या इस देश के लोग दुग्धचूर्ण के बिना काम नहीं चला सकते? तो आप उन का आयात क्यों करते हैं। आप सिंगापुर और आस्ट्रेलिया से केन्ड (डिब्बाबंद) फलों का आयात क्यों करते हैं?

आप इसे रोकते क्यों नहीं? आप देश में केनिंग उद्योग क्यों नहीं लगाते। इससे एक ओर तो आप आयात पर रोक लगा सकेंगे और दूसरी ओर स्थानीय उद्योगों का विकास कर सकेंगे।

हमारे व्यापार आयुक्त विदेश भेजे जाते हैं। बार-बार कहा जाता है कि हमारी कलात्मक एवं शिल्पगत वस्तुएं विदेशी बाजारों में बिक सकेंगी, किन्तु इसके लिये सम्पर्क की क्या व्यवस्था है? क्या व्यापार आयुक्त वाणिज्य मंत्रालय का अधीनस्थ अधिकारी है? मदों के उत्पादन का क्षेत्र उद्योग मंत्री के अधीन है।

.....जहां तक लाइसेंसों के जारी किये जाने का संबंध है, हमें यह देखना है कि ये दोनों भद्रजन किस प्रकार पारस्परिक सहयोग से कार्य करते हैं। इस देश में कास्टिक सोडे का उत्पादन प्रचुर मात्रा में होता है जो देश के बाजार और उद्योग के लिये पर्याप्त है। मैं बहुत से उदाहरण नहीं देना चाहता। मैं चाहता हूं कि इन दोनों मंत्रालयों का प्रभार एक ही मंत्री को दे दिया जाये अथवा इन दोनों मंत्रियों के ऊपर एक सुपर मंत्री होना चाहिये। किन्तु दुर्भाग्यवश प्रत्येक मंत्रालय की स्वतन्त्र रूप से कार्य करने की प्रवृति है। जिस मंत्रालय के अधीन अस्पताल हैं, वह चाहता है कि उनसे संबंधित मकान, कपड़ा और सभी चीजें उसके प्रभार में हो। इसी प्रकार दूसरा मंत्री उद्योग मंत्रालय, तीसरा लोक निर्माण विभाग चाहता है । प्रत्येक विभाग अपने जरुरत की सभी वस्तुओं के उत्पादन के लिये अपनी निजी फैक्टरी लगाता है।

अतः इस प्रकार का सहयोग नहीं है। इस बात का पता लगाते रहने के लिये कि जब तक नियंत्रण है, उसका दुरुपयोग नहीं किया जाये, एक न्यायाधिकरण अवश्य गठित किया जाना चाहिये। मेरा अनुरोध है कि नियुक्त की जाने वाली समिति के निष्कर्षों के अध्यधीन एकाधिकार क्षेत्र की मदों के लिये एक राज्य व्यापार निगम स्थापित किया जाना चाहिये। जैसे ही हम विदेशों से अपना व्यापार पर्याप्त सीमा तक बढ़ा लें, सरकार उस क्षेत्र से अपना हाथ खींच ले और व्यापार को गैर-सरकारी उद्यमियों के लिये छोड़ दे। मैं चाहता हूं कि इस धारा के अन्तर्गत माननीय मंत्री जी को जो शक्तियां प्राप्त होंगी, उससे वे देश में ऐसे क्रान्तिकारी परिवर्तन ला सकेंगे कि देश में केवल नितान्त आवश्यक वस्तुओं के ही आयात की अनुमति दी जाये और चेकोस्लोवाकिया अथवा अमरीका जैसे देशों को ही नहीं, अपितु समीपवर्ती देशों, जैसे बर्मा, स्याम (थाईलैंड), इंडोनेशिया, अफगानिस्तान, ईरान आदि को भी अधिकाधिक निर्यात कर सकें। पूर्वी एशिया के देश हमारे बाजार होंगे। हमारा विदेशी बाजार भी पर्याप्त रूप से बड़ा है। ऐसा नहीं है कि हमारे लिये आयात नितान्त अपरिहार्य है।

बार-बार यह सुनना अरुचिकर लगता है कि हम अमरीका से पूंजीगत वस्तुएं मांग रहे

हैं। उनकी पूंजी को उन्हीं के पास पड़ी रहने दो। हम पहले भी यह आजमाइश कर चुके हैं और ब्रिटेन से पूंजीगत सामान की प्राप्ति के लिये व्यर्थ ही अपने स्टर्लिंग कोष को निश्शेष कर चुके हैं। न तो पूंजीगत सामान ही भेजा गया है, न ही आधारभूत उद्योग लगाये गये हैं। उन्होंने केवल एक साबुन फैक्ट्री और एक माचिस फैक्ट्री ही लगाई है। हमने जी तोड़ कोशिश करके जो स्टर्लिंग कोष जमा किया था, वह हम इस तरह गवाँ बैठे हैं। जो शेष है, उसे तो हम बचा रहने दें। अब तो हमें ये प्रतिबन्ध लगा देने चाहियें। मैं इस विधेयक की सफलता की कामना करता हूं। किन्तु गोलगप्पे का स्वाद तो खा कर ही पता चलता है।